इकाई–1

श्रमः अवधारणा एवं विशेषतायें

Labour: Concept & Characteristics

इकाई की रूपरेखा

1.1 परिचय
1.2 उद्देश्य
1.3 श्रम अवधारणा एवं विशेषताएं
1.4 असंगठित क्षेत्र हेतु राष्ट्रीय श्रम आयोग की सिफारिशें
1.5 अनुपस्थिति
1.6 श्रमावर्त
1.7 उत्पादकता की अवधारणा
1.8 उत्पादकता एवं उत्पादन में अन्तर
1.9 सार संक्षेप
1.10 अभ्यास हेतु प्रश्न
1.11 पारिभाषिक शब्दावली
1.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.1 परिचय

उद्योग एवं श्रम परस्पर सम्बन्धित हैं। बिना श्रम के उद्योग की कल्पना नहीं की जा सकती। यह श्रम शारीरिक एवं मानसिक दोनों तरह का होता था। पहले उद्योग में शारीरिक श्रम को महत्ता प्राप्त थी, परन्तु अब अत्यधिक विकसित प्रौदयोगिकी के कारण मानसिक श्रम ने अत्यधिक महत्व प्राप्त किया है। यद्यपि शारीरिक श्रम अभी भी पूर्णतया महत्वहीन नहीं हो गया है। इस प्रकार बिना श्रम के पूँजी एवं उदयोग के लिए आवश्यक अन्य तत्व अस्तित्वविहीन हो जाता है। इस प्रकार उद्योग के लिए श्रम एक आवश्यक तत्व है जिससे सम्बन्धित अनेक समस्याएँ समय–समय पर पैदा होती रहती हैं।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप : –

- श्रम की अवधारणा को जान सकेगें।
- भारतीय श्रम की विशेषताओं से अवगत हो सकेगें।
- राष्ट्रीय श्रम आयोग की असंगठित क्षेत्र हेतु विभिन्न मुद्दों पर दी गई संस्तुतियों को जान सकेगें।

- श्रमिकों की अनुपस्थिति के बारे में जान सकेगें।
- श्रमिकों के श्रमावर्त के बारे में जान सकेगें।
- उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारकों के बारे में लिख सकेगें।

1.3 श्रमः अवधारणा एवं विशेषतायें

'श्रम मानवीय प्रयासों से सम्बन्धित है। ये प्रयास शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार के हो सकते हैं। इन प्रयासों का उद्देश्य शारीरिक या मानसिक लाभ प्राप्त करना होता है। यह लाभ अप्रत्यक्ष या प्रत्यक्ष, पूर्णतः या आंशिक रूप से किसी भी रूप में हो सकता है।'

विभिन्न विद्वानों ने श्रम की निम्न परिभाषाएँ दी हैं –

1. **थामस** – ''श्रम से शरीर व मस्तिष्क के उन समस्त मानवीय प्रयासों का बोध होता है, जो पारिश्रमिक पाने की आशा से किए जाएँ।''
2. **जेवन्स** – ''श्रम मस्तिष्क अथवा शरीर का वह प्रयास है, जो उस कार्य से प्राप्त होने वाले प्रत्यक्ष सुख के अतिरिक्त पूर्णतः या अंशतः किसी लाभ के लिए किया जाये।''

श्रम की विशेषताएँ

श्रम की विशेषताओं में निम्न तत्वों को सम्मिलित किया जा सकता है –

1. श्रम का तात्पर्य मानवीय प्रयासों से है। ये मानवीय प्रयास दो भागों में विभाजित हो सकते हैं –
   - **a.** शारीरिक, और
   - **b.** मानसिक
2. श्रम का श्रमिक से घनिष्ठ सम्बन्ध है। इन्हें प्रथक नहीं किया जा सकता। इस प्रकार श्रम और श्रमिक एक ही सिक्के के दो पहलू है।
3. श्रम बेचा जा सकता है। किन्तु इसका तात्पर्य यह कदापि नही है कि श्रमिक अपने गुणों को बेचता है, वह तो सिर्फ अपने श्रम को ही बेचता है।
4. श्रम नाशवान है। इसे संचित करके नहीं रखा जा सकता। इसका कारण यह है कि बीता हुआ दिन वापस नहीं आता।
5. श्रम में गतिशीलता का तत्व भी पाया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि श्रम का एक स्थान से दूसरे स्थान को हस्तान्तरण किया जा सकता है। यह कोई स्थिर तत्व नही है।
6. श्रम उत्पत्ति का आधार है। श्रम के अभाव में उत्पत्ति की कल्पना नहीं की जा सकती।
7. श्रम की कार्यकुशलता में वृद्धि की जा सकती है।

8. श्रम में सौदा करने की शक्ति अत्यन्त न्यूनमात्रा में होती है। श्रमिकों की सौदा करने की दुर्बल शक्ति के निम्न कारण हैं –
   - **a.** श्रम नश्वर होने के कारण श्रमिक इसका संचय न करके तुरन्त बेचता है।
   - **b.** श्रमिकों में व्याप्त निर्धनता और दरिद्रता।
   - **c.** श्रमिकों की अज्ञानता, अशिक्षा और अनुभवहीनता।
   - **d.** श्रम संगठनों का अभाव और इनकी शिथिलता।
   - **e.** बेरोजगारी।
9. श्रमिकों की कार्यकुशलता एक ही प्रकार की न होकर इसमें भिन्नता होती है।
10. श्रमिक उत्पादन का साधन ही नही है अपितु साध्य भी है। श्रमिक केवल उत्पादन ही नही करता, अपितु उपभोग में भी हिस्सा बँटाता है।

1.4 असंगठित क्षेत्र हेतु राष्ट्रीय श्रम आयोग की सिफारिशें

दूसरे राष्ट्रीय श्रम आयोग (2002) के विचारार्थ विषयों में असंगठित क्षेत्रक में कामगारों को संरक्षा का न्यूनतम स्तर सुनिश्चित करने के लिए एक छत्रक विधान का सुझाव देना था। आयोग ने दूकानों एवं प्रतिष्ठानों में नियोजित कामगारों के अतिरिक्त कई अन्य नियोजनों में असंगठित श्रमिकों के कार्य एवं रहने की दशाओं का गहनता से अध्ययन किया। आयोग के मत में श्रम–कानूनों के रहते हुए भी इस क्षेत्र के कामगारों को सामाजिक सुरक्षा तथा अन्य हितलाभ उपलब्ध नहीं होते तथा उनके हितों की रक्षा के लिए श्रमसंघों या संस्थागत तंत्रों का अभाव रहा है। असंगठित क्षेत्रक के लिए अलग से छत्रक विधान बनाने से उसमें लगे सभी कामगारों को न्यूनतम संरक्षा उपलब्ध होगी। सरकार अलग–अलग नियोजनों या उप–क्षेत्रकों के लिए आवश्यकतानुसार अनुभव के आधार पर विशेष कानून बना सकती है। प्रस्तावित छत्रक विधान में असंगठित श्रमिकों से संबद्ध भारतीय संविधान, संयुक्त राष्ट्रसंघ की प्रसंविदाओं तथा अंतराष्ट्रीय श्रम संगठन के अभिसमयों में निहित अधिकारों का समावेश सुनिश्चित करना आवश्यक है। असंगठित क्षेत्रक के कामागारों (जिनमें दुकानों और प्रतिष्ठानों में नियोजित कर्मचारी भी शामिल है) की दशाओं में सुधार लाने के लिए आयोग ने कई बातों पर जोर दिया है, जिनमें निम्नलिखित का उल्लेख मुक्तिसंगत होगा।

1. असंगठित के प्रत्येक कामगार को आधिकारिक पहचान–पत्र दिया जाना चाहिए। इस पहचान–पत्र से कामगार को निश्चित विधिक पहचान तथा मान्यता उपलब्ध होगी।
2. असंगठित क्षेत्र से संबंधित छत्रक विधान के अधीन कामगारों को जो न्यूनतम सुरक्षा या सुविधाएं उपलब्ध होनी चाहिए, वे हैं – एक ऐसे नीतिगत ढाँचाा की व्यवस्था जिससे नौकरियों का सृजन और उनकी रक्षा हो और वे कामगारों के पहुँच में हो, उनकी निर्धनता तथा संगठन के अभाव के चलते होने वाले शोषण

से उनकी रक्षा, मनमाने और सनकी पदच्युति से उनकी रक्षा, न्यूनतम मजदूरी के नकारने तथा मजदूरी भुगतान में विलंब से उन्हें रक्षा–प्रदान करना, तथा उनके कल्याण–सम्बन्धी व्यवस्था में काम के दौरान होने वाले चोटों के लिए क्षतिपूर्ति, भविष्य–निधि, चिकित्सकीय देखभाल, पेंशन–हितलाभ, प्रसूति–हितलाभ तथा बाल देखभाल को सम्मिलित किया जाना।

3. प्रस्तावित कानून ऐसा होना चाहिए जिसका कार्यान्वयन एवं अनुवीक्षण सहजता से हो। अतः इसके अंतर्गत कार्य स्थल के निकट ही दांवो और परिवारों के तत्परता से निष्पादन के लिए तंत्र की व्यवस्था हो।
4. सामाजिक सुरक्षा की प्रणाली ऐसी होनी चाहिए जिसमें कामगार लागत के अनुरूप अंशदान दे सके, जो कामगार की आधिकाधिक आवश्यकताओं से संगत हो और जो कामगार को उसके स्थान के निकट ही सेवाएं उपलब्ध करा सके। इसके लिए तंत्र की बोझित, महँगा, केन्द्रीकृत तथा अधिक प्रशासनिक स्तरों और उपरिभारों से भरा नही होना चाहिए।
5. असंगठित कामगारों के लिए सामाजिक सुरक्षा के उपायों में शामिल होने वाले विषय होगें – स्वास्थ्य देखभाल, प्रसूति एवं आरंभिक बाल देखभाल, भविष्य निधि हितलाभ, परिवार हितलाभ, सुविधाएं (जिनमें आवास, पेयजल, स्वच्छता आदि सम्मिलित है), रोजगार चोटों के लिए क्षतिपूर्ति, सेवानिवृति और उसके उपरांत हितलाभ, अर्जन या अर्जन क्षमता की हानि के प्रति रक्षा, कामगारों के कौशल के उन्नयन तथा शिक्षा के लिए योजनाएं, बाल श्रम तथा बलात श्रम का उन्मूलन और अनुचित श्रम संबंध एवं श्रम व्यवहार।
6. असंगठित कामगारों को न्याय की निर्णायक गारंटी उपलब्ध कराने हेतु न्यूनतम मजदूरी, रोजगार की सुरक्षा तथा सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था आवश्यक है। इन निर्णायक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए असंगठित क्षेत्रक कामगार बोर्ड तथा संघटक बोर्डो का प्रस्ताव किया जा रहा है जिनका विस्तार पंचायतों के स्तर तक होगा।
7. पांच या इससे अधिक संख्या में कामगारों को नियोजित करनेवाले नियोजकों के लिए अपने कामगारों को बोर्ड में पंजीकृत करा लेना और उन्हें पहचान–पत्र दिलाना आवश्यक होगा। पांच से कम संख्या में कामगारों को नियोजित करनेवाले नियोजकों को कामगारों को पंजीकृत कराने और पहचान–पत्र दिलाने में सहायता देनी होगी।

असंगठित क्षेत्रक के कामगारों को न्यूनतम संरक्षा तथा कल्याण सुनिश्चित कराने के उद्देश्य से आयोग ने एक संकेतक विधेयक का प्रारूप भी तैयार किया है। इस प्रस्तावित असंगठित क्षेत्रक कामगार (नियोजन एवं कल्याण) विधेयक का उद्देश्य ''भारत में असंगठित क्षेत्रक के कामगारों के नियोजन और कल्याण के विनियमन से संबद्ध

कानूनों को समेकित तथा संशोधित करना तथा उन्हें संरक्षा और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना है।''

प्रस्तावित विधेयक में सात भाग और 26 धाराएं है। विधेयक के भाग 1 में प्रारम्भिक बातें, जैसे – विस्तार, आरंभ, उद्देश्यों तथा महत्वपूर्ण परिभाषाओं का उल्लेख है। भाग 2 में सम्मिलित किए जाने वाले विषय है – बोर्डो जैसे – केन्द्रीय, राज्य, जिला तथा रोजगार आधारित बोर्डो का गठन और उनके कार्य। भाग 3 में कामगार सरलीकरण केन्द्रों के कार्यो, कामगारों के पंजीकरण, पहचान–पत्र तथा निधियों के निवेश से संबंधित उपबंध है। भाग 4 में कामगारों के संगठनों से संबंधित विषयों को शामिल किया गया है। भाग 5 में उल्लिखित विषयों में मुख्य हैं – न्यूनतम मजदूरी, भत्ते, सामाजिक सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं सुरक्षा, कार्य के घंटे तथा अवकाश धाराएं है। भाग 7 में विविध बातों का उल्लेख है, जैसे – रिकार्डो और रजिस्टरों का रख–रखाव, परिवेदना–निवारण तथा नियमावली और योजनाओं का बनाया जाना।

आयोग की उपर्युक्त सिफारिशें दूकानों और प्रतिष्ठानों तथा असंगठित क्षेत्रक के अन्य नियोजनों के कामगारों के लिए अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। उन्हें लागू करने से अंसगठित कामगारों से संबंधित बिखरे हुए विद्यमान कानूनों में क्रांतिकारी परिवर्तन होगा तथा उनमें एकरूपता आएगी और कामगारों के कार्य एवं जीवन की दशाओं में व्यापक सुधार होगा। भारतीय श्रम–शक्ति के 90 प्रतिशत से अधिक होने के कारण असंगठित कामगारों की दशाओं में सुधार की नितांत आवश्यकता है। आयोग की सिफारिशें अभी सरकार के विचाराधीन है और उन्हें लागू करने के लिए कदम नहीं उठाए गए है।

1.5 अनुपस्थिति

अनुपस्थिति औद्योगिक संबंधों के परावर्तकों में अपना मुख्य स्थान रखती हैं। यह मानव शक्ति की बर्बादी के द्योतक है जो कि खोये हुए मानव दिवसों के रूप में व्यक्त होती है क्योंकि श्रमिक अपने कार्य से बिना छुट्टी लिये हुए, तथा बिना सूचना के अनुपस्थित हो जाता है। अनुपस्थिति बहुत कुछ वर्तमान औद्योगिक व्यवस्था का परिणाम है। अत्यधिक श्रम विभाजन एवं विशेषीकरण के कारण श्रमिक उत्पादन की संपूर्ण प्रक्रिया का एक बहुत छोटा अंश कार्य के रूप में संपादित करता है जो कि उसे कार्य में लगन एवं रुचि रखने में बाधा उत्पन्न करता है साथ ही उसे अपने कार्य से अनुपस्थित रहने एवं नीरस कार्य से कुछ समय के लिए अलग रह कर सुस्ताने के लिए प्रोत्साहित करता है। यद्यपि यह कभी–कभी यह स्थिति अत्याजनीय होती है और श्रमिक द्वारा अपनी शक्ति और क्षमता की पुनः प्राप्ति में सहायक होती है लेकिन बड़े पैमाने पर अनुपस्थितियुक्ति संगत नहीं प्रतीत होती और न ही किसी भी स्तर पर इसका समर्थन किया जा सकता है।

उद्योग के क्षेत्र में अधिकतम उत्पादन के लिए यह आवश्यक है कि श्रमिकों में अपने कार्य तथा उद्योग के प्रति भक्ति भावना पायी जाती हो और श्रम शक्ति स्थायी

रूप से कार्य कर रही हो। ऐसी स्थिति में जहां श्रम शक्ति की संरचना में प्रायः परिवर्तन होते रहते हैं, पुराने प्रशिक्षित तथा अनुभवी श्रमिकों के चले जाने पर उत्पादकता को क्षति पहुँचती है, इस परिवर्तन के लिए अनुपस्थिति प्रमुख रूप से उत्तरदायी है।

अनुपस्थिति उस सीमा का परिमापन करती है जिस तक श्रमिक अनुसूचित होने के बावजूद भी अपने कार्य पर उपस्थित होने में असमर्थ होते हैं। अनुपस्थिति, अनाधिकृत, अविवेचित, त्याज्यनीय ऐच्छिक होती है।

इस प्रकार हम निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि अनुपस्थिति की निम्नलिखित विशेषताएं हैं –

1. श्रमिक कार्य पर उपस्थित होने के लिए अनुसूचित होने के बावजूद अनुपस्थित होता है।
2. यह अनुपस्थिति श्रमिक की इच्छा पर आधारित होती है।
3. इस अनुपस्थिति को यदि श्रमिक रोकना चाहे तो रोक सकता है।
4. इस अनुपस्थिति का औचित्यपूर्ण कारण श्रमिक द्वारा नहीं बताया जाता।
5. यह अनुपस्थिति अनाधिकृत है।

अनुपस्थिति की समस्या के अनेक कारणों में से कुछ निम्न हैं :

बीमारी, महामारी, ग्रामीण निर्गमन, न्यून जीवन शक्ति, अनुपयुक्त आवास, गंदा वातावरण, दुर्घटनाएँ, सामाजिक अथवा धार्मिक संस्कार, मद्यपान तथा अन्य मादक द्रव्यों का प्रयोग, एवं आराम।

उपर्युक्त कारणों में से अधिक से अधिक ऐसे कारण हैं जो त्याज्यनीय है। कुछ ही ऐसे कारण है जिनको हम आवश्यक कह सकते हैं।

अनुपस्थिति के हानिकारक प्रभाव

इस प्रकार से यह स्पष्ट है कि अनुपस्थिति उत्पादन के लिए मूल्यवान समय में होने वाली अनावश्यक हानि है। साधारणतया अनुपस्थिति श्रमिकों का ही अहित करती है क्योंकि उद्योगों में बहुसंख्यक श्रमिक दैनिक मजदूरी वाले होते हैं जिनकी अधिक अनुपस्थिति का अर्थ जीविकोपार्जन का न होना है जो अंततः इस बात के लिए बाध्य कर देती है कि वह महाजनों के पास जायँ और अपने गहने इत्यादि को बेचे, जो कि कभी संकटकालीन स्थिति में उनके जीवन का सहारा बन सकते थे, या अपनी झोपड़ी में बिना भोजन के सो रहे थे। ऐसी स्थिति में उनका मनोबल और कार्य क्षमता बुरी तरह प्रभावित होती है। अनेक औद्योगिक संस्थानों ने अपने अध्यादेशों द्वारा बार–बार होने वाली और आदतन अनुपस्थिति को दुराचरण का कार्य घोषित कर दिया है और साथ ही अपने प्रबंध को इस बात के लिए सक्षम कर दिया है कि वह इसके लिए सख्त से सख्त कार्यवाही कर सकते हैं और यहाँ तक कि वह श्रमिक को सेवा मुक्त भी कर सकते हैं।

बार–बार होनेवाली एवं अधिक अनुपस्थिति उद्योगों के लिए भी बड़ी हानि कारक साबित होती है क्योंकि इससे कार्य की गुणात्मकता प्रकृति और मात्रा दोनों बुरी तरह से

प्रभावित होती है जिससे संस्थानों की साख गिरती है तथा मालिकों को बहुत बड़ी क्षति उठानी पड़ती है। यद्यपि प्रबंधकगण उत्पादन को आरक्षित और स्थानापन्न श्रमिकों के द्वारा बनाये रखने का भरसक प्रयास करते हैं लेकिन इस प्रकार के श्रमिक उतनी क्षमता के साथ कार्य नहीं कर पाते। बदली के श्रमिकों को बड़ी मात्रा में सेवायोजित करने की समस्या भी हमारे उद्योगों के समक्ष एक महत्त्वपूर्ण समस्या है क्योंकि बदली के श्रमिक अपनी अस्थाई और असुरक्षित सेवा के कारण कार्य को उतनी क्षमता और लगन से नहीं कर पाते जितनी क्षमता के साथ एक रोज कार्य करने वाला और स्थायी श्रमिक कर सकता है। इस प्रकार से यह बदली के श्रमिक उद्योग के लिए अधिक अनुशासनहीन और घातक सिद्ध होते हैं। अंत में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अनुपस्थिति से देश और समाज की इतनी बड़ी क्षति होती है कि इसकी तुलना में हड़ताल और तालाबंदी द्वारा कम मानवदिवसों की क्षति होती है।

अनुपस्थिति के निराकरण के लिए सुझाव

समस्या के परिणाम गंभीर होने के बावजूद यह बहुत बड़े दुःख का विषय है कि हमारे औद्योगिक प्रबंधकों ने जहाँ हड़ताल और तालाबंदी जैसी समस्याओं पर कुछ अधिक ध्यान दिया है अपेक्षाकृत इस मूल समस्या के प्रति उनकी मनोवृत्ति उपेक्षापूर्ण रही है। अभी तक इस महत्त्वपूर्ण मानव शक्ति की बर्वादी को रोकने के लिए कोई आंकड़ों को इकट्ठा करने, उनका विश्लेषण करने तथा विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्षो में निरोधात्मक उपायों को ढूँढ़ने के लिए संगठित प्रयासों की आवश्यकता है जिसे केवल श्रमिक, मालिक, सरकार एवं श्रमिक संघों के सम्मिलित प्रयासों से ही पूरा किया जा सकता है।

उद्योग के क्षेत्र में प्रगतिशील देशों में अनुपस्थिति के अनुवर्तीकरण की क्रिया एक प्रभावशाली यंत्र के रूप में मान्यता प्राप्त कर चुकी है। इसमें अनुपस्थिति के दूसरे या तीसरे दिन नर्स या अन्वेषक अनुपस्थित होने वाले श्रमिक के घर भेज दी जाती है जो वहाँ पहुँच कर अनुपस्थित से संबंधित कारणों का पता लगाती है कि श्रमिक बीमारी, दुर्घटना या घरेलू कामों की वजह से या अन्य किसी ऐसी परिस्थिति की वजह से अनुपस्थित हो गया है जो कि प्रबंधक या श्रमिक संघ के कार्यकर्ताओं या उसी अन्वेषक की ही थोड़ी सी मदद से इस योग्य हो जाय कि वह अपने कार्य पर उपस्थित हो सके, अथवा श्रमिक सिर्फ बहाना ही बनाकर कार्य से अनुपस्थित रहना चाहता है। इस प्रकार के अनुवर्तीकरण से अनुपस्थिति के छिपे हुए कारण प्रकाश में आयेगें और उनके निरोधात्मक उपाय ढूँढने में भी सफलता मिलेगी जिससे कि प्रबंधकों और श्रमिकों के बीच गलतफहमियाँ नहीं रहेगी जिससे कि सौहार्दपूर्ण औद्योगिक संबंधों की स्थापना में सफलता मिलेगी।

यही नहीं वर्ष में कम से कम दिन अनुपस्थित रहने वाले श्रमिकों को इनाम या उपस्थिति बोनस भी दिया जा सकता है, साथ ही इसका प्रचार रेडियों तथा संस्थान से

निकलने वाली पत्रिकाओं में भी करना चाहिए। अनुपस्थिति के द्वारा हुए मानव दिवसों की क्षति के आंकड़ों से श्रमिकों को समय–समय पर अवगत करते रहना चाहिए जिससे उनके अंदर एक आत्मग्लानि की भावना तथा देश एवं संस्थान के प्रति अपने कर्तव्यों की भावना भी जागृत हो सके।

अंत में अनुपस्थिति को रोकने हेतु श्रमिकों की कार्य–शर्तो तथा परिस्थितियों को उपयुक्त बनाना होगा। उनके जीवन स्तर को उन्नत बनाना होगा। उचित मजदूरी, मंहगाई भत्ता तथा बोनस प्रदान करना होगा। उनके लिए पौष्टिक आहार की व्यवस्था करनी होगी। उन्हें आवास, सामाजिक सुरक्षा तथा श्रम कल्याण जैसी अनेक सुविधाएँ प्रदान करनी होगी। आराम के उचित अवसर तथा अवकाश प्रदान करना होगा। सारांश में श्रमिक के अंतर्गत कार्य संतोष की भावना उत्पन्न करने हेतु प्रत्येक संभव उपाय करने होगें।

1.6 श्रमावर्त

इसका परिमापन करने के लिए किसी निश्चित वर्ष में उन व्यक्तियों की संख्या का अनुमान लगाया जाता है। जो संस्थान को छोड़ने वाले व्यक्तियों को पुनः स्थापित करने के लिये भर्ती किये जाते हैं और इस अनुमानित संख्या का औसतन कार्य करने वाले श्रमिकों की संख्या से अनुपात निकाला जाता है। कुछ लोग श्रमावर्त की गणना औसतन कार्य करने वाले श्रमिकों की संख्या तथा छोड़कर जाने वाले श्रमिकों की संख्या के बीच अनुपात को बिना इस बात की परवाह किये हुए कि छोड़कर जाने वालों के स्थान पर नये श्रमिक कितने भर्ती हुए, निकालते हुए करते हैं। उन संस्थानों में जहाँ औद्योगिक नीति के कारण छँटनी की जाती है और उनकी जगह पर नये व्यक्ति नहीं लगाये जाते हैं वहाँ इन श्रमिकों को छँटनी किये हुए श्रमिक मानते हुए श्रमावर्त की गणना हेतु छोड़कर जाने वाले श्रमिकों की संख्या में नहीं सम्मिलित किया जाता।

सांख्यिकीय दृष्टिकोण से एक निश्चित समय में कार्य करने वाले श्रमिकों और उस समय में छोड़कर जाने वाले श्रमिकों के बीच पाये जाने वाले अनुपात को श्रमावर्त कहते है। सामान्य तौर पर श्रमावर्त की गणना औसतन कार्य करने वाले श्रमिकों और छोड़कर जाने वाले श्रमिकों का प्रतिशत निकालते हुए की जाती है। एक सूत्र के रूप में श्रमावर्त की गणना इस प्रकार प्रदर्शित की जा सकती है।

$$\text{श्रमावर्त} = \frac{\text{एक निश्चित समय में कार्य छोड़कर जाने वाले श्रमिकों की संख्या}}{\text{इसी निश्चित समय में औसतन कार्य करने वाले श्रमिकों की संख्या}} \times 100$$

यह गणना इस मान्यता को आधार मानती है कि छोड़कर जाने वालों और आने वाले श्रमिकों की दरें स्थिर है, किन्तु यह व्यावहारिक रूप में संभव नहीं है क्योंकि

आजीविका के अवसरों में परिवर्तन होते रहते हैं, छोड़कर जाने वाले श्रमिकों के स्थान की पूर्ति बदली श्रमिकों द्वारा की जाती है, एक ही उद्योग के किसी अन्य संस्थान में स्थानान्तरण हो सकता है तथा अवकाश के दिनों में इन्हें अन्य श्रमिकों के साथ पुनर्स्थापित किया जा सकता है।

श्रमावर्त के कारण

श्रमावर्त की वृद्धि के कारण बहुमुखी हैं। मृत्यु और अवकाश प्राप्ति इसके दो प्राकृतिक कारक हैं जिसके कारण श्रमिक का उसके कार्य से अलगाव होता है। साथ ही यह स्थान शीघ्र ही भर लिये जाते हैं ताकि उत्पादन प्रक्रिया में बाधा न पड़े।

श्रमिकों द्वारा कार्य से ऐच्छिक वापसी दूसरा महत्त्वपूर्ण कारक है जो कि श्रमावर्त को बढ़ाता है। यह दो रूपों में व्यक्त होता है (1) त्याग पत्र के रूप में (2) कार्य परित्याग के रूप में। प्रथम रूप में, श्रमिक कार्य से त्याग पत्र देने की इच्छा व्यक्त करता है और कार्य को छोड़ने के इरादे को व्यक्त करने के लिए प्रबंधक को विधिवत् सूचना देता है जबकि दूसरे रूप में वह कार्य को बिना बताये ही छोड़ देता है। त्याग पत्र के लिए अनेक कारण उत्तरदायी हो सकते हैं। उदाहरणार्थ – अधिक नौकरी मिल जाना, संस्थान की शर्तो का मंजूर न होना, संस्थान के अंतर्गत अपमानित किया जाना, संस्थान का अनुपयुक्त होना, पारिवारिक मामलों में उलझ जाना इत्यादि।

तीसरा महत्त्वपूर्ण कारक निष्कासन है। निष्कासन के लिए भी अनेक कारक उत्तरदायी हो सकते हैं। उदाहरणार्थ, अनुशासनहीनता का प्रदर्शन, कार्य का गुणात्मक और परिमाणात्मक दृष्टिकोण से उचित रूप में न किया जाना, संस्थान के विरुद्ध बगावत, कार्य के समय बिना अवकाश लिए अनुपस्थित रहना इत्यादि।

श्रमावर्त के परिणामों को हम तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं।

प्रत्यक्ष परिणाम : वे परिणाम है जिनके अंतर्गत नये भर्ती किये गये श्रमिकों के प्रशिक्षण हेतु व्यय किये गये खर्च को सम्मिलित किया जाता है, साथ ही भर्ती किये जाने में होने वाले छोटे मोटे खर्चे भी आते हैं।

पुनर्स्थापन में होने वाला अतिरिक्त व्यय : इसके अंतर्गत अतिरिक्त व्यय नये भर्ती किये गये श्रमिकों की कुशलता की कमी के कारण होता है जो कि उत्पादन को गुणात्मक एवं परिमाणात्मक दोनों रूपों में प्रभावित करता है।

नये श्रमिकों को भर्ती करने से पूर्व होने वाले अतिरिक्त व्यय : यह हानि इसलिये होती है क्योंकि पुराने श्रमिकों के स्थान पर नये श्रमिकों को भर्ती करने में भी समयान्तर हो जाता है। उस समयान्तर में उत्पादन गिर जाता है जिससे कि संस्थान को क्षति पहुँचती है।

श्रमावर्त कम करने के उपाय

श्रमावर्त की उच्च दर औद्योगिक संबंधों एवं कर्मचारियों में स्थिरता और भक्ति भावना तथा विश्वसनीयता उत्पन्न करने में सहायक नहीं हो सकती। श्रमावर्त के

दुष्परिणामों को तभी रोका जा सकता है जबकि इससे संबंधित आंकड़ों को विश्वसनीयता के साथ सतत् एकत्रित किया जाय और उनके विश्लेषण में उन कारकों को ढूँढा जाय जो कि बदलती हुई परिस्थितियों में श्रमावर्त की उच्च दरों के लिए उत्तरदायी रहे हैं। साथ ही भारतीय श्रम सम्मेलन के द्वारा श्रमावर्त की एक मान्य परिभाषा की जानी चाहिए जिससे कि उद्योग से संबंधित सभी पक्षों में किसी भी प्रकार का भ्रम न उत्पन्न हो।

औद्योगिक दृष्टि से प्रगतिशील पश्चिमी देशों में बहिर्गमन साक्षात्कार श्रमावर्त की दरों को घटाने के लिए एक कारगर यंत्र के रूप में सामने आया है। इसके अंतर्गत कार्मिक विभाग द्वारा एक टोली की नियुक्ति की जाती है जो इस बात के लिए सतत् कार्यरत रहती है कि श्रमिकों के संस्थान से अलगाव का क्या कारण है, यह ऐच्छिक है या अनैच्छिक। जब भी कोई त्याग पत्र प्राप्त होता है, त्याग पत्र देने वाले श्रमिक का साक्षात्कार किया जाता है और उसे इस बात की पूर्ण स्वतंत्रता दी जाती है कि वह बिना किसी भय और संकोच के अपनी भावनाओं को व्यक्त कर सके। यदि श्रमिक कार्य को बिना सूचना के ही छोड़ जाता है तो इस बात का सतत् प्रयास किया जाता है कि उससे वहीं संबंध स्थापित किया जाये जहाँ वह मिल सके और उन तथ्यों को प्रकाश में लाने की कोशिश की जाती है जिनके कारण श्रमिक कार्य को छोड़कर चला गया था। यदि मामला छँटनी या बर्खास्तगी का है तो इस बात की पूर्ण परीक्षा की जाती है कि जो भी कार्यवाही की गई है वह श्रम विधानों एवं स्थायी अध्यादेशों के प्राविधानों के अंतर्गत की गई है या नहीं। इस प्रकार के बहिर्गमन साक्षात्कार प्रबंधकों को इस बात की विशेष सूझ बूझ और जानकारी प्रदान करते हैं कि किन परिस्थितियों एवं कारणों के अंतर्गत श्रमिक संस्थान को छोड़कर चले जाते हैं। इस प्रकार प्रबंधक इस बात का निर्णय लेने में अपने को सक्षम पाता है कि उसके संस्थान में श्रमावर्त की ऊँची दर का कारण खराब कार्य की परिस्थितियों, या अन्य जगहों पर उत्तम कार्य की प्राप्ति, प्रबंध की श्रम नीति या व्यवहार, श्रमिक की खुद की गलतियाँ या दुराचरण, श्रमिक संघ के नेताओं का व्यवहार या कार्य की नीरसता है; इन कारकों में से कौन से कारक श्रमावर्त की उच्च दर के लिए कितना जिम्मेदार है, और इनको समाप्त करने के लिए कौन से निरोधात्मक उपाय अपनाये जा सकते हैं।

इस प्रकार के बहिर्गमन साक्षात्कारों के परीक्षण हेतु प्रबंधकों को अपने–अपने संस्थानों के अंतर्गत अवसर अवश्य प्रदान किया जाना चाहिए ताकि उच्च श्रमावर्त की दरों के कारकों का पता लगाया जा सके और उनको समाप्त करने के लिए निरोधात्मक उपायों को भी ढूँढा जा सके। इस प्रक्रिया को सुचारू रूप से चलाने के लिए मालिकों और श्रमिकों की संयुक्त समितियों का गठन प्रत्येक संस्थान में किया जाना चाहिए। इन समितियों में मालिकों और श्रमिकों के प्रति निधि होने चाहिए। साथ ही इन सबकों इस दिशा में संयुक्त प्रयास करने चाहिए।

सामान्यतया श्रमावर्त कम करने के लिए मौलिक रूप से उन सभी उपायों को अपनाया जाना चाहिए जो त्याग पत्र और निष्कासन से संबंधित हुआ करते है। त्याग पत्रों को कम करने के लिए संस्थान के अंतर्गत कार्य की शर्तो एवं दशाओं में सुधार करते हुए वे सभी कार्य करने होंगे जिससे कि श्रमिक कार्य संतोष की भावना का अनुभव कर सकें और किसी भी स्तर पर उसके आत्म सम्मान को ठेस न पहुँचे। श्रमिक को जो वेतनमान संस्थान के बाहर प्राप्त हो सकता है उसे संस्थान के अंतर्गत उतना वेतन अवश्य दिया जाना चाहिए। निष्कासन को कम करने के लिए श्रमिकों में कार्य तथा संस्थान के प्रति भक्ति भावना को बढ़ाते हुए अुशासनहीनता को कम करना होगा। इसके लिए श्रमिकों के साथ प्रबंधकों, निरीक्षकों एवं सहकर्मियों को सहानुभूति पूर्ण व्यवहार करना चाहिए। श्रमिकों को प्रबंध में भाग लेने का अवसर प्रदान किया जाय, साथ ही उनके द्वारा अनुभव की गयी कठिनाइयों को भी दूर किया जाय, श्रमिक संघों की बहुलतता को कम किया जाय और श्रमिकों में प्रजातांत्रिक मूल्यों को विकसित किया जाय ताकि उनके अपने वर्ग में पारस्परिक सम्मान की वृद्धि हो सके। सहकारिता जैसे उपायों को प्रयोग में लाया जाए। निपुणतापूर्ण भर्ती, कार्य एवं श्रमिक विश्लेषण आदि अधिक कारगर सिद्ध हो सकते हैं।

1.7 उत्पादकता की अवधारणा

सर्वप्रथम उत्पादकता का विचार 1766 में प्रकृतिवाद के संस्थापक क्वेसने के लेख में सामने आया। बहुत समय तक इसका अर्थ अस्पष्ट रहा। एम0एम0 मेहता ने इस संबंध में ठीक ही लिखा है, ''दुर्भाग्य से, उत्पादकता शब्द औद्योगिक अर्थशास्त्र के उन कुछ शब्दों में से है जिन्होनें अनेक विभिन्न एवं विरोधी विवेचन उत्पन्न किये है।''

उत्पादकता की अवधारणा को भली प्रकार समझने के लिए निम्न प्रमुख विद्वानों के विचार प्रस्तुत किये जा रहे हैं :

लिटर (Litre, 1883) ''उत्पादकता शब्द, उत्पादन करने की क्षमता है।''

स्मिथ, (Smith, 1937) ''उत्पादकता का विचार श्रम–विभाजन की अवधारणा में सन्निहित है।''

मार्शल (Marshell, 1938) ''श्रम उत्पादकता सूचकांक औद्योगिक कुशलता है, जिसका निर्धारण जलवायु एवं प्रजाति जीवन की आवश्यकताओं भोजन, वस्त्र, आवास तथा आग, विश्राम की आशा, स्वतंत्रता एवं परिवर्तन, व्यवसाय एवं विशेषीकृत योग्यता शिशुक्षता इत्यादि द्वारा किया जाता है।''

सम्पूर्ण उत्पादकता वस्तुओं एवं सेवाओं के रूप में उत्पाद सम्पत्ति के उत्पादन तथा उत्पादन की प्रक्रिया में प्रयोग किये गये साधनों, की लागत के मध्य अनुपात का द्योतक है।

उत्पादकता को समझने के लिए उत्पादन एवं लागत की स्पष्ट परिभाषा करनी होगी। उत्पादन के अंतर्गत उन सभी वस्तुओं एवं सेवाओं को सम्मिलित किया जाता है,

जिनके अंतर्गत न केवल औद्योगीकरण एवं कृषि संबंधी उत्पाद पदार्थ सम्मिलित होते हैं, बल्कि चिकित्सकों, शिक्षकों, दुकानों, कार्यालयों, परिवहन संस्थानों तथा अन्य सेवा उद्योगों में रत व्यक्ति भी सम्मिलित होते हैं। लागत से हमारा अभिप्राय उत्पादन में सम्मिलित सभी प्रकार के प्रयासों एवं बलिदानों अर्थात् प्रबंधकों, शिल्पियों एवं श्रमिकों के कार्य से है।

सारांश में लागत का अभिप्राय उत्पादन को अपना योगदान देने वाले सभी कारकों का प्रयास एवं बलिदान है। इस प्रकार पूर्ण उत्पादकता की अवधारणा को स्पष्ट करने हेतु निम्न सूत्र को प्रयोग में लाया जा सकता है।

$$\text{उत्पादकता} = \frac{\text{समस्त प्रकार का उत्पादन}}{\text{समस्त प्रकार की लागत}}$$

दूसरे शब्दों में उत्पादकता को समस्त प्रकार की लागत का प्रति इकाई उत्पादन कहा जा सकता है।

1.8 उत्पादकता एवं उत्पादन में अंतर

प्रायः 'उत्पादकता' एवं 'उत्पादन' शब्द को पर्यायवाची समझे जाने की भूल की जाती है। वास्तव में इन दोनों शब्दों में पर्याप्त अंतर है। 'उत्पादकता' साधनों का कुल उत्पत्ति से अनुपात है यानी प्रति साधन की इकाई का उत्पादन से अनुपात है। समस्त साधनों से प्राप्त होने वाला माल एवं सेवाएँ 'उत्पादन' है। इसमें व्यय के पहलू पर ध्यान नहीं दिया जाता है क्योंकि साधनों पर अधिक से अधिक व्यय करके उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है, लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि उत्पादकता में वृद्धि हो गई हो। उदाहरणार्थ यदि एक कारखाने में 1000 व्यक्ति 500 वस्तुयें बनाते हैं तथा दूसरे कारखाने में समान दशा में 2000 व्यक्ति केवल 800 वस्तुयें बनाते हैं। निश्चय ही दूसरे कारखाने का उत्पादन प्रथम कारखाने से अधिक है, लेकिन दूसरे कारखाने की उत्पादकता प्रथम कारखाने से कम है।

उत्पादकता को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारक

उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारक अत्यंत जटिल तथा अंतर्संबंधित है क्योंकि इन्हें किसी तार्किक एवं क्रमबद्ध क्रम में व्यवस्थित करना कठिन है। यह प्रमाणित करना कठिन है कि उत्पादन में वृद्धि अमुक कारक के परिणाम स्वरूप है अथवा अनेक कारकों के सम्मिलित प्रभाव के कारण है। वर्गीकरण की प्रविधि एवं विधितंत्र में विभेद होते हुए भी कुछ प्रमुख कारकों को सरलतापूर्वक विभेदीकृत किया जा सकता है।

इस कारकों पर प्रकाश डालने वाले कुछ प्रमुख विचार निम्न है –

अंतराष्ट्रीय श्रम संगठन (I. L. O., 1956) : श्रम उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारकों को सामान्य, संगठनात्मक एवं प्राविधिक तथा मानवीय कारकों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

रेनाल्ड (Reynolds, L. G. 1959) : प्राविधिक प्रगति की कारक अनुपातिक दर प्रबंधकीय योग्यता एवं निष्पादन क्षमता तथा श्रम शक्ति का निष्पादन, अर्थ व्यवस्था का आकार, इसकी औद्योगिक संरचना तथा औद्योगीकरण की स्थिति।

मेहता (Mehta, M. M. 1959) : (अ) सामान्य कारकों में, प्रोद्योगिकी, आकार, आय, संगठनात्मक कारक, बाजार एवं श्रम कुशलता को सम्मिलित किया जा सकता है।

(ब) प्राकृतिक एवं भौगोलिक कारकों जैसे प्राकृतिक कारकों सहित विशिष्ट कारक।

(स) सरकारी आर्थिक, भूगर्भ शास्त्रीय तथा मनोवैज्ञानिक कारकों जैसे संस्थागत कारक।

संघा (Sangha, K. 1964) प्राद्योगिक प्रगति, श्रम शक्ति की गुणात्मक प्रकृति, पूँजी घनत्व, खनिज पदार्थो की उपलब्धता तथा सामाजिक एवं आर्थिक संगठन। सामाजिक संगठनों के अंतर्गत परिवार, धर्म निषेधों तथा अन्य इसी प्रकार के कारक सम्मिलित है तथा आर्थिक संगठनों के अंतर्गत सम्पत्ति संबंधी अधिकार, निर्णय लेने की भूमिका, व्यक्तियों अथवा व्यक्तियों के समूह की क्षमता उपभोक्ताओं की प्रमुखता इत्यादि सम्मिलित है।

उत्पादकता को प्रभावित करने वाले उपर्लिखित कारकों को 'मानवीय' एवं 'प्राविधिक' दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। इन दोनों प्रकार के कारकों का अन्वेषण एवं विकास उद्योग की सम्पन्नता हेतु आवश्यक है। ह्वाइट ने ठीक ही लिखा है, ''इन समस्याओं के अन्वेषण में प्रगति और अधिक स्पष्ट करती है कि औद्योगिक समाज को कार्यरत बनाने हेतु मानवीय एवं प्राविधिक दो पहलुओं को अवश्य समझना पड़ता है।'' कारकों की इन दो श्रेणियों में वर्तमान समय के मानवीय कारकों के महत्त्व को भली भाँति स्वीकार कर लिया गया है क्योंकि औद्योगिक प्रोद्योगिकी के विकास ने इसके प्रयोग हेतु मानवीय तत्त्वों के उत्तरदायित्वों में और अधिक वृद्धि कर दी है। उनकी लेश मात्र लापरवाही, ढिलाई, अनिच्छा एवं अज्ञानता संस्थान की उत्पादकता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकती है। मानवीय तत्त्वों के इस योगदान पर विस्तृत प्रकाश डालने हेतु कुछ प्रमुख लेखकों के विचार प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

फ्रांसिस (Francis, C. 1948) : मेरा यह विश्वास है कि एक व्यवसाय की सबसे बड़ी पूंजी उसकी मानवीय पूंजी है और उनके महत्त्व में सुधार, भौतिक लाभ तथा नैतिक उत्तरदायित्व दोनों का ही विषय है इसलिये मेरा यह विश्वास है कि कर्मचारियों के साथ मानवीय व्यक्तियों जैसा वर्ताव किया जाना चाहिए, संगत पुरष्कार प्रदान किया जाना चाहिए, उनकी प्रगति को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए, उन्हें पूर्णरूपेण सूचित किया

जाना चाहिए, औचित्यपूर्ण कार्यभार का निर्धारण किया जाना चाहिए, कार्य करते समय तथा उसके पश्चात् उनके जीवन को अर्थ एवं महत्त्व प्रदान किया जाना चाहिए।

ड्रकर (Drucker, P. F. 1951) : मानव एक औद्योगिक समाज का केन्द्रीय, कठिनता से प्राप्य एवं अत्यधिक मूल्य पर पूंजी संबंधी साधन है। यह औद्योगिक संस्थान की हमारी नवीन अवधारणा में व्यक्तियों के एक संगठन के रूप में, एक संस्थान के रूप में प्रदर्शित होता है। यह हमारी प्रबंध की अवधारणा में मानवीय प्रयासों के समन्वय कर्ता के रूप में प्रदर्शित होता है।

गांगे और फलीशमैन (Gange, R. M. Fleishman, E. A., 1959) एक औद्योगिक संगठन के अंतर्गत मानव जीवन मशीन अन्तक्रिया की संपूर्ण जटिलता में मानवीय कारक सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान ग्रहण करते हैं।

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि औद्योगिक संगठन के अंतर्गत अधिकतम उत्पादकता की दृष्टि से, यद्यपि मानवीय एवं प्राविधिक दोनों कारक मुख्य हैं, किन्तु प्राविधिक कारकों की तुलना में मानवीय कारक कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। मानवीय कारकों की यह अधिक महत्त्वपूर्ण स्थिति अनेक कारणों से हैं :

1. यह मनुष्य ही है जो उत्पादन के आवश्यक निर्माणकारी तत्त्वों–मानव, यन्त्र, पूँजी, खनिज पदार्थ एवं प्रबंध के विषय में नियोजन, संगठन, कर्मचारीगण प्रबंध निर्देशन, समन्वय, आय–व्यय विवरण प्रपत्र का निर्माण एवं प्रतिवेदन तैयार करने से संबंधित निर्णय लेता है।
2. यह मनुष्य ही है जो इन निर्णयों को वास्तविक रूप से कार्य रूप में परिणित करते हैं।
3. यह मनुष्य ही है जो वास्तव में इन निर्णयों के कार्य रूप में परिणत करने के मार्ग में आने वाले व्यवधानों का पता लगाते हैं, इन्हें दूर करने के लिए विविध प्रकार के साधनों एवं ढंगों को विकसित करते हैं तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया को भविष्य संबंधी कार्यकलाप में आवश्यकतानुसार इच्छित दिशा में ले जाने हेतु संशोधित करते हैं।

मानवीय कारकों की प्राविधिक कारकों की तुलना में उच्च स्थिति किसी भी प्रकार के संदेह से परे हैं क्योंकि मानवीय कारक ही प्राविधिक कारकों के प्रयोगकर्ता, मूल्यांकनकर्ता तथा नियंत्रक के रूप में कार्य करते हैं। भारत वर्ष के अंतर्गत मानवीय साधनों का बाहुल्य होने के कारण इनकी स्थिति और भी महत्त्वपूर्ण हो जाती है किन्तु इस सबका यह अभिप्राय कदापि नहीं कि यान्त्रीकरण द्वारा प्रदत्त योगदान को पूर्णरूपेण भुला दिया जाय। यद्यपि औद्योगिक क्रिया के अनेक क्षेत्रों में यान्त्रीकरण हेतु पर्याप्त विषय क्षेत्र है, फिर भी हमारे देश के अंतर्गत सरलता पूर्वक उपलब्ध बेकार जनशक्ति का श्रम के रूप में सेवाएँ सापेक्षतया अधिक वांछनीय है। ए0 के0 बोस ने अत्यधिक अभिरुचिपूर्ण एवं प्रिय परिणाम निकाले है। इनके मत में एक–एक मशीन घंटे की

निष्क्रियता, एक निष्क्रिय मानवीय घंटे की तुलना में साढ़े तीन से लेकर 6 गुने तक महंगा है।

अंतराष्ट्रीय श्रम संगठन के उत्पादकता मिशन ने जो भारत में 1952–54 में रहा तथा जिसने भारत सरकार को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया इस विचार से सहमति व्यक्त की है कि इस दिशा की संपूर्ण औद्योगिक व्यवस्था में प्राविधिक प्रतिरूपों की तुलना में मानवीय कारकों के सेवायोजन पर अधिक बल दिया जाना चाहिये। इसने यह विचार व्यक्त किया, ''भारत में जनशक्ति का बाहुल्य तथा पूँजी की कमी है। उत्पादन–वृद्धि करने हेतु प्रविधियों का प्रयोग, आवश्यक रूप से बहुलता पूर्ण मानवीय साधनों के सबसे अधिक अच्छे प्रयोग तथा समस्त स्वरूपों में पूँजी की बर्बादी को रोकने की आवश्यकता द्वारा नियंत्रित होना चाहिये।

उद्योग के क्षेत्र में मनुष्य स्थूल रूप से श्रमिकों, प्रबंधकों एवं अधीक्षकों के रूप में वर्गीकृत किए जा सकते हैं। उत्पादन की प्रक्रिया से प्रत्यक्ष रूप से संबंधित होने के कारण श्रमिकों का महत्व सर्वोपरि है। वी0 वी0 गिरि ने ठीक ही लिखा है कि औद्योगिक संस्थान के अंतर्गत श्रमिक प्रभुत्व पूर्ण अंशधारी है तथा उनके सहयोग, अच्छे कार्य, अनुशासन, ईमानदारी एवं चरित्र के बिना उद्योग प्रभाव पूर्ण परिणामों अथवा लाभों को प्राप्त करने में समर्थ नही होगा। उद्योग के अंतर्गत मानसिक व्यवस्था चाहे जितनी कुशल क्यों न हो, यदि मानवीय तत्त्व सहयोग करने से इन्कार कर दे तो उद्योग चल पाने में असमर्थ हो जाता है।

नियोजन, नियंत्रण, समन्वय एवं सम्प्रेरणा से संबंधित नाना प्रकार के कार्यो का संपादन करते हुए प्रबंधकों के प्रतिनिधि भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। कुछ विशेषज्ञों ने तो इन्हें आर्थिक क्षेत्र की युद्ध भूमि में महत्त्वपूर्ण अधिकार कहा है।

किन्तु ये दोनों औद्योगिक संगठन के अंतर्गत विरोधी दिशाओं में कार्य करते हैं और इन दोनों को एक दूसरे के समक्ष अधीक्षकगण ही ला सकते हैं जैसा कि इस कथन से स्पष्ट है, ''व्यवसायिक संसार में अधीक्षक विरोधी दिशाओं में कार्य करने वाली दो आर्थिक शक्तियों के मध्य एक विवेचक है। प्रबंधकों को उत्पादन की इकाई को लागत को कम करने हेतु निरंतर संघर्ष करते हुए बचत–पूर्ण मनोवृत्ति वाला होना चाहिए जबकि श्रमिक वैयक्तिक रूप से तथा अपने संगठन दोनों के माध्यम से निरंतर अपनी आर्थिक स्थिति को अधिक अच्छा बनाने के लिए दबाब डालते रहते हैं। अधीक्षक प्रबंध का एक सदस्य है, इसलिए उससे यह आशा की जाती है कि श्रमिकों के साथ अपने दैनिक संपर्को में प्रबंधकों की आर्थिक विचारधारा को परावर्तित करें। श्रमिकों द्वारा अन्य दिशाओं में डाले गये दबाब, मजदूरी बढ़ाने की लगातार मांग तथा श्रमिकों के सामाजिक संगठन द्वारा उत्पादन के चेतन परिसीमन जैसे कारकों में परावर्तित होते हैं।

1.9 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में श्रम की अवधारणा तथा परिभाषा के बारे में विस्तृत चर्चा की गई है जिसमें भारतीय श्रम की विशेषताओं पर बिन्दुबार प्रकाश डाला गया है। इसी इकाई में असंगठित क्षेत्र से संबंन्धित श्रम के विभिन्न मुद्दों पर राष्ट्रीय श्रम आयोग की संस्तुतियों की रिपोर्ट के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है। अनुपस्थिति तथा श्रमावर्त की परिभाषा तथा इनसे होने वाली हानियों के बारे में बृहद रूप से तथ्य प्रस्तुत किये गये है। इसी इकाई में उत्पादकता की परिभाषा, सूत्र तथा उत्पादकता को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों का भी विवरण प्रस्तुत किया गया है।

1.10 स्व–मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. श्रम से आप क्या समझते हैं ? भारतीय श्रमिकों की विशेषतायें लिखिए ?
2. असंगठित क्षेत्र से सम्बन्धित विभिन्न मुद्दों पर राष्ट्रीय श्रम आयोग ने कौन–कौन सी संस्तुतियां प्रदान की है।
3. अनुपस्थिति से आप क्या समझते हैं ? तथा इससे होने वाली हानियों के बारे में लिखिये ?
4. श्रमावर्त क्या होता हैं ? तथा श्रमावर्त से उद्योग को क्या हानियां हैं ?
5. उत्पादकता क्या होती है ? तथा इसको प्रभावित करने वाले कारकों के बारे लिखिए ?

1.11 परिभाषिक शब्दावली

Labour	श्रम	Inevitable	आवश्यक
Human Effort	मानवीय प्रयास	Act of Misconduct	दुराचरण का कार्य
Wage	मजदूरी	Substitute	स्थानापन्न
Characterstics	विशेषतायें	Attitude	मनोवृति
Physical	शारीरिक	Data	तथ्य
Mental	मानसिक	Indiscipline	अनुशासनहीन
Element	तत्व	Strike	हड़ताल
Technique	तकनीक	Lockout	तालाबंदी
Technology	प्रोद्योगिकी	Statistically	सांख्यिकीय रूप से
Illeteracy	अशिक्षा	Abandanment	छोड़ देना
Absenteeism	अनुपस्थिति	Factor	कारक
Turn Over	श्रमावर्त	Exit	बाहर जाना
Man-days	मानव दिवसों	Interview	साक्षात्कार
Unavoidable	अत्याजनीय	Standing -Orders	अध्यादेशों
Avoidable	त्याजनीय	Physio-Cracy	प्रकृतिवाद

Apprenticeship	शिशुक्षता	Productivity	उत्पादकता

1.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बघेल, डी. एस., औद्योगिक समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली, पृष्ठ 144–145, वर्ष 2002।
2. वर्मा, आर.बी.एस., औद्योगिक अधीक्षण, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी प्रकाशन, लखनऊ, पेज 109–117, वर्ष 1976।
3. वर्मा, आर.बी.एस., उल्लेखित, पृष्ठ 78–86।
4. आर्गेनाइजेशन फॉर यूरोपियन इकोनॉमिक कोआपरेशनः (ओ.ई.ई.सी.), प्रोडक्टिविटी एजेन्सी, पेरिस, अगस्त, 1955, पेज 21।
5. स्मिथ, एवं एड्म, ऐन इन्क्वाइरी इन्टू दि नेचर एण्ड काजेज आफ दि वेल्थ आफ नेशन्श, न्यूयार्क, 1937, पेज 6।
6. बेरी, जी.सी., मैनेजमेंट आफ प्रोडेक्टिविटी इन इंडियन इंडस्ट्रीज विद स्पेशल रिफरेन्स टू एम मेथडोलाजिकल अस्पेक्टस, बम्बई, 1962, पेज 90।
7. रोस्तास, एल0 ''प्रोडक्टिविटी इन दि काटन टेक्सटाइल इन्डस्ट्री इन इंडिया'', इंडियन लेवर गजट, वाल्यूम 10, 1952–53।
8. सक्सैना आर.सी. श्रम समस्यायें एवं श्रम कल्याण, के नाथ एण्ड कम्पनी, मेरठ, पेज 511–513, वर्ष 1997।
9. सिन्हा एवं इंदूबाला, श्रम एवं समाज कल्याण, भारती भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स पेज 229–230, वर्ष 2006।

इकाई – 2

श्रम कल्याण : अवधारणा, क्षेत्र एवं वर्गीकरण

Labour Welfare : Concept,Scope & Classification

इकाई की रूपरेखा

2.1 परिचय
2.2 उद्देश्य
2.3 श्रम–कल्याण की परिभाषा
2.4 श्रम–कल्याण की विशेषताए
2.5 श्रम–कल्याण कार्य का उद्देश्य
2.6 श्रम–कल्याण कार्य के अंग
2.7 श्रम–कल्याण कार्य की आवश्यकता
स्व–मूल्यांकन हेतु प्रश्न– रिक्त स्थान, विकल्पीय ,एक शब्द ,अति लघु
2.8 श्रम–कल्याण कार्य का वर्गीकरण
2.9 कल्याण कार्यो की असफलता के कारण
2.10 श्रम कल्याण कार्य का महत्त्व
2.11 कल्याण अधिकारी
2.11.1 कल्याण अधिकारी के कर्त्तव्य
2.11.2 अन्य कर्त्तव्यों का गैर निर्वाहन
स्व–मूल्यांकन हेतु प्रश्न –रिक्त स्थान, विकल्पीय ,एक शब्द ,अति लघु
2.12 सार संक्षेप
2.13 पारिभाषिक शब्दावली

2.14 अभ्यास प्रश्न –लघु , विस्तृत
2.15 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.1 परिचय

कारखानों में काम करने वाले श्रमिकों के कल्याण, उनकी सुरक्षा और स्वास्थ्य संबंधी विभिन्न पहलुओं को नियमित करने का दायित्व सरकार अपने ऊपर लेती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद औद्योगिक विकास को गति प्रदान करने के लिए भारत सरकार ने कारखाना अधिनियम, 1948 (Factory Act, 1948) प्रतिपादित किया। इसका उद्देश्य श्रमिकों को औद्योगिक और व्यावसायिक खतरों से सुरक्षा प्रदान करना था। केन्द्रशासित प्रदेश और विभिन्न राज्य सरकारें इस अधिनियम के तहत अपने प्रावधान और नियम बनाती हैं और निरीक्षणालयों की मदद से इन्हें कार्यान्वित करती है।

श्रम–कल्याण सामूहिक सौदेबाजी का एक प्रमुख तत्त्व कैसे बन गया, इसको जानने से पहले हम यह जान लें कि श्रम–कल्याण क्या है ? इसकी क्या विशेषताएं हैं ? इसकी आवश्यकता क्यों है ? तथा इस दिशा में भारत में लिए गए ठोस कदम कितने सफल हुए हैं ?

2.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

1. श्रम कल्याण की अवधारणा एवं परिभाषा के बारे में जान सकेगें।
2. श्रम कल्याण के क्षेत्र के बारे में लिख सकेगें।
3. श्रम कल्याण का वर्गीकरण कर सकेगें।
4. श्रम कल्याण अधिकारी के बारे में जान सकेगें।
5. श्रम कल्याण अधिकारी की भूमिका के बारें में लिख सकेगें।

2.3 श्रम–कल्याण की परिभाषा

श्रम–कल्याण की प्रमुख परिभाषाओं में से कुछ निम्न हैं –

1. **कैली** – ''श्रम–कल्याण कार्य का अर्थ किसी फर्म द्वारा श्रमिकों के व्यवहार और कार्य के लिए अपनायें जाने वाले कुछ सिद्धान्तों से है।''
2. **सामाजिक विज्ञान का विश्वकोष** – ''श्रम–कल्याण से अर्थ, कानून, औद्योगिक व्यवस्था और बाजार की आवश्यकताओं के अतिरिक्त मालिकों द्वारा वर्तमान औद्योगिक व्यवस्था के अन्तर्गत श्रमिकों के काम करने और कभी–कभी जीवन निर्वाह और सांस्कृतिक दशाओं के उपलब्ध करने के ऐच्छिक प्रयासों से हैं।''
3. **पेन्टन** – ''श्रम–कल्याण कार्यो से अर्थ श्रम से सुख, स्वास्थ्य और समृद्धि के लिए उपलब्ध की जाने वाली दशाओं से है।''

4. **अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन** – ''श्रम–कल्याण से ऐसी सेवाओं और सुविधाओं को समझा जाना चाहिए जो कारखाने के अन्दर या निकटवर्ती स्थानों में स्थापित की गई हो ताकि उनमें काम करने वाले श्रमिक स्वस्थ और शान्तिपूर्ण परिस्थितियों में अपना काम कर सकें तथा अपने स्वास्थ्य और नैतिक स्तर को ऊँचा उठाने वाली सुविधाओं का लाभ उठा सकें।''
5. **ग्राउण्ड** – ''श्रम–कल्याण से तात्पर्य विद्यमान औद्योगिक प्रणाली तथा अपनी फैक्ट्रियों में रोजगार की दशाओं का उन्नत करने के लिए मालिकों द्वारा किये जाने वाले ऐच्छिक प्रयासों से है।''
6. **आर्थर जेम्स टोड** ने इस सम्बन्ध में उचित ही कहा है, ''औद्योगिक कल्याण के सम्बन्ध में कार्य की प्रेरणा एवं औचित्य सम्बन्धी विभिन्न विचारधाराओं की श्रृंखला ही उपलब्ध है।'' कुछ लोग श्रम–कल्याण कार्य को कारखानों के अन्तर्गत किए जाने वाले कार्यो तक सीमित बताते हैं, यद्यपि यह परिभाषा बहुत ही संकुचित है। श्रमिक कल्याण की प्रगति के लिए सुविधाओं की व्यवस्था पर।
7. **श्रम अन्वेषण समिति, 1943** के अनुसार, ''अपनी दिशा में, हम श्रम–कार्यो के अन्तर्गत श्रमिकों के बौद्धिक, शारीरिक, नैतिक और आर्थिक उन्नति के लिए किए गए किसी भी कार्य को सम्मिलित करने को प्राथमिकता देते हैं। चाहे यह मालिकों अथवा सरकार अथवा किसी अन्य संस्था द्वारा किए गए हों। इसके अतिरिक्त जो कानून द्वारा निश्चित कर दिया गया है अथवा वह सब जिसे श्रमिकों के संविद्–जनित लाभों के अंश के रूप में, जिसके लिए श्रमिक स्वयं सौदा कर सकते हैं, साधारणतया अपेक्षित समझा जाता है वह भी श्रम–कल्याण के अन्तर्गत माना जाता है।

इस प्रकार इस परिभाषा के अन्तर्गत हम आवास समस्या, स्वास्थ्य एवं शिक्षा सम्बन्धी सुविधाएँ, आहार सुविधाएँ (कैंटीन को भी सम्मिलित करते हुए), आराम तथा खेल–कूद की व्यवस्था, सहकारी समितियाँ, बाल–क्रीड़ा स्कूल, स्वच्छ गृहों की व्यवस्था, वेतन सहित अवकाश, मालिकों द्वारा अकेले ऐच्छिक रूप से अथवा श्रमिकों के सहयोग से चलाई गई सामाजिक बीमा व्यवस्था, जिसमें बीमारी तथा प्रसूति सुविधा योजना, प्राविडेण्ट फण्ड, सेवोपहार और पेंशन इत्यादि को भी सम्मिलित कर सकते हैं।

2.4 श्रम–कल्याण की विशेषताएं

श्रम–कल्याण कार्य की निम्न विशेषताएं होती हैं –

1. श्रम–कल्याण कार्य का अर्थ कुछ विशेष सुविधाओं से है जो श्रमिकों को प्रदान की जाती है,
2. इन विशेष सुविधाओं का सम्बन्ध कार्य करने की उन्नत दशाओं से है।

3. विशेष सुविधाओं का उद्देश्य श्रमिकों के शारीरिक, मानसिक, आत्मिक, नैतिक, बौद्धिक और सामाजिक जीवन की उन्नति है,
4. इससे श्रमिकों का जीवन–स्तर ऊँचा होता है और उनका दृष्टिकोण विस्तृत होता है,
5. श्रम–कल्याण कार्य सिर्फ मालिकों से ही सम्बन्धित न होकर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय जीवन से भी सम्बन्धित है,
6. इन कार्यों का उद्देश्य सामाजिक असन्तोष और क्रान्ति को समाप्त करना है,
7. ये कल्याण कार्य ऐच्छिक संस्थाओं द्वारा भी किये जा सकते हैं।

2.5 श्रम–कल्याण कार्य का उद्देश्य

श्रम–कल्याण कार्यो के उद्देश्यों को निम्न भागों में बाँटा जा सकता है –

1. श्रमिकों को कार्य की मानवीय दशाएं उपलब्ध करना,
2. कार्यक्षमता में वृद्धि करना,
3. नागरिकता की भावना का ज्ञान कराना,
4. श्रमिकों, मालिकों और सरकार के बीच स्वस्थ सम्बन्धों का निर्माण करना,
5. राष्ट्रीय उत्पादन को प्रोत्साहित करना, तथा
6. अनुकूल सामाजिक परिस्थितियां निर्मित करना।

2.6 श्रम–कल्याण कार्य के अंग

श्रम–कल्याण कार्य के प्रमुख अंग क्या हैं? श्रम–कल्याण कार्यो के अन्तर्गत कौन–कौन से तत्वों का समावेश होता है। संक्षेप में श्रम–कल्याण कार्यक्रम के निम्न अंग होते हैं –

1. श्रमिकों की भर्ती के वैज्ञानिक तरीके,
2. वातावरण जहां श्रमिक काम करते हैं – की समुचित व्यवस्था। वहां स्वच्छता, वायु और प्रकाश का उचित प्रबंन्ध,
3. प्रौद्योगिकी तथा सामान्य शिक्षा की व्यवस्था,
4. दुर्घटनाओं की रोक–थाम की उचित व्यवस्था,
5. साफ–सुधरे मकानों का निर्माण,
6. चिकित्सा, स्वास्थ्य और पोषण की पर्याप्त सुविधाएं,
7. मनोरंजन की व्यवस्थाएं
8. भोजन की उचित व्यवस्था,
9. काम के सन्तोषजनक और वैज्ञानिक घण्टे,
10. पर्याप्त मजदूरी की दरें,
11. उत्तम मजदूरी और यन्त्र,
12. मितव्ययी जीवन की शिक्षा,
13. श्रमिक केन्द्रों को आकर्षक बनाना।

2.7 श्रम–कल्याण कार्य की आवश्यकता

श्रमिकों के कल्याण, अधिक उत्पादन तथा राष्ट्रीय आर्थिक प्रगति के लिए श्रमिकों के लिए कल्याण कार्यो की आवश्यकता है। भारत में श्रम–कल्याण कार्य की आवश्यकता के सम्बन्ध में निम्न तर्क दिए जा सकते हैं –

1. **औद्योगिक शान्ति की स्थापना** – भारत में श्रम–कल्याण कार्यो की पहली आवश्यकता औद्योगिक शान्ति को स्थापित करने की दृष्टि से है। औद्योगिक शान्ति के अभाव में न तो पर्याप्त उत्पादन ही हो सकेगा और न ही औद्योगिक विकास तथा प्रगति ही सम्भव है। श्रम–कल्याण कार्यो का श्रमिकों के मन पर यह प्रभाव पड़ता है और वे मानसिक दृष्टि से ऐसा अनुभव करने लगते हैं कि उद्योगपति और राज्य उनके कल्याण कार्यो के प्रति जागरूक हैं। इससे स्वस्थ वातावरण का निर्माण होता है और औद्योगिक शान्ति की स्थापना हो सकती है।
2. **सामाजिक गुणों का विकास** – कल्याण कार्यो का दूसरा प्रभाव यह पड़ता है कि इससे श्रमिकों में अनेक सामाजिक गुणों का विकास होता है। कैण्टीन, मनोरंजन और स्वास्थ्य सुविधाओं का परिणाम यह होता है कि श्रमिकों में अनेक सामाजिक गुणों का विकास होता है।
3. **उत्तरदायित्व की भावना** – श्रम–कल्याण कार्यो का परिणाम यह होता है कि इससे श्रमिकों में उत्तरदायित्व की भावना का विकास होता है। इससे वे औद्योगिक कार्यो में विशेष रुचि लेते हैं।
4. **मानसिक शान्ति** – श्रम–कल्याण कार्य औद्योगिक शान्ति की स्थापना करते हैं। साथ ही श्रमिकों के सामाजिक गुणों का विकास और उत्तरदायित्व की भावना को जाग्रत करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि श्रमिकों में मानसिक शान्ति की भावना विकसित होती है।
5. **कार्यक्षमता में वृद्धि** – श्रम–कल्याण कार्यो से श्रमिकों में अनेक सामाजिक गुणों का विकास होता है। उन्हें अनेक प्रकार की सुविधाएं प्रदान की जाती है। इन सुविधाओं का परिणाम यह होता है कि श्रमिकों की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।

2.8 श्रम–कल्याण कार्य का वर्गीकरण

भारत में श्रम–कल्याण कार्यो में अनेक सरकारी और गैर–सरकारी संस्थाओं का योग है। भारत में श्रमिकों के कल्याण–कार्य से सम्बन्धित भावना का विकास द्वितीय विश्व युद्ध के बाद हुआ था। अनियोजित नगरीकरण और औद्योगीकरण का परिणाम यह हुआ कि अनेक प्रकार की समस्याओं का जन्म हुआ। इन समस्याओं के कारण श्रमिकों

की कार्यक्षमता में कमी आने लगी और उत्पादन पर इसका प्रभाव पड़ने लगा। ऐसी परिस्थिति में उद्योगपति, सरकार तथा अन्य संस्थाओं ने श्रमिकों के कल्याण कार्यो की ओर ध्यान दिया। भारत में निम्न संस्थाओं ने श्रम–कल्याण सम्बन्धी कार्यो का सम्पादन किया है –

1. केन्द्र सरकार,
2. राज्य सरकारें,
3. उद्योगपति,
4. श्रमिक संघ,
5. समाज सेवी संस्थाएं, और
6. नगरपालिकाएं।

इन संस्थाओं द्वारा श्रमिकों के लिए किये गए कल्याण कार्यो का विवरण इस प्रकार है –

1. **केन्द्र सरकार** – भारत सरकार ने श्रमिकों के कल्याण की दृष्टि से अनेक अधिनियमों का निर्माण किया है। इन अधिनियमों का विवरण इस प्रकार है –
   - **क)** मीटर परिवहन कर्मचारी अधिनियम 1961
   - **ख)** अभ्रक खान श्रम–कल्याण निधि
   - **ग)** कोयला खान श्रम–कल्याण निधि
   - **घ)** बागान श्रमिक अधिनियम, 1951
   - **ड़)** लोहा खान श्रम–कल्याण सेस अधिनियम, 1961
   - **च)** खानों में सुरक्षात्मक उपाय
   - **छ)** श्रम–कल्याण केन्द्र
   - **ज)** राष्ट्रीय सुरक्षा पुरस्कार योजना
   - **झ)** श्रम दशाओं का सर्वेक्षण
   - **व)** श्रम–कल्याण निधियाँ
2. **राज्य सरकार** – केन्द्रीय सरकार के अतिरिक्त राज्य सरकारों ने भी इस सम्बन्ध में अधिनियमों का निर्माण किया है। ये अधिनियम राज्य की परिस्थितियों के अनुसार होते हैं। इसके साथ ही राज्य सरकार ने श्रमिकों के कल्याण के लिए श्रम–कल्याण विभाग की स्थापना भी की है।
3. **उद्योगपति** – जहां तक श्रमिकों के कल्याण का सम्बन्ध है। इसके लिए विभिन्न उद्योगपतियों ने भी महत्त्वपूर्ण कार्य किये है। आधुनिक युग में परिस्थितियों के अनुसार होते है। इसके साथ ही राज्य सरकार ने श्रमिकों के कल्याण के लिए श्रम–कल्याण विभाग की स्थापना भी की है।
   - **क)** चिकित्सा की व्यवस्था,
   - **ख)** शिक्षा की व्यवस्था,

ग) जलपान–गृहों की स्थापना,
घ) सरकारी समितियों की स्थापना,
ड़) मनोरंजन गृह और वाचनालयों की व्यवस्था,
च) प्राविडेण्ट फण्ड आदि की व्यवस्था।

4. **श्रमिक संघ** – श्रमिक संघों का गठन जिस उद्देश्य से किया जाता है वह श्रमिक कल्याण है। भारत में श्रमिकों के कल्याण की दृष्टि से जो श्रमिक संघ स्थापित है उनमें से कुछ के नाम हैं –
   क) अहमदाबाद टैक्साटाइल श्रम संघ,
   ख) कानपुर मजदूर सभा,
   ग) इन्दौर मिल संघ,
   घ) रेल कर्मचारी संघ।
5. **समाज–सेवी संस्थाएँ** – श्रम–कल्याण के क्षेत्र में बहुत–सी स्वयंसेवी संस्थाएँ कार्य कर रही हैं। उदाहरण के लिए –
   क) मुम्बई समाज सेवा लोग,
   ख) सेवा सदन समिति,
   ग) मुम्बई प्रेसीडेन्सी महिला मण्डल।
6. **नगरपालिकाएँ** – अनेक नगरनिगमों और नगरपालिकाओं ने भी श्रम–कल्याण के सम्बन्ध में अनेक कार्य किए है। इन नगरपालिकाओं में दिल्ली, मुम्बई, अजमेर, कानपुर, चेन्नई हैं। इन नगरपालिकाओं ने श्रमिकों के कल्याण के लिए जो कार्यक्रम किये, उनमें से कुछ निम्न हैं –
   क) निवास की व्यवस्था,
   ख) प्राथमिक स्कूल एवं स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना,
   ग) रात्रि पाठशालाएँ,
   घ) प्राविडेण्ट फण्ड, आदि।
   ख) शिक्षा की व्यवस्था,
   ग) जलपान–गृहों की स्थापना,
   घ) सरकारी समितियों की स्थापना,

2.9 कल्याण कार्यो की असफलता के कारण

अनेक योजनाओं और संस्थाओं द्वारा श्रम–कल्याण कार्य किये गये हैं, किन्तु इनमें उतनी सफलता नहीं मिली, जितनी मिलनी चाहिए। श्रम–कल्याण कार्यो की असफलता के प्रमुख कारण निम्न हैं –

क) नियोजन एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव,
ख) उद्योगपतियों द्वारा उपेक्षा,
ग) प्रशिक्षित कार्यकर्त्ताओं का अभाव,

घ) अधिनियमों की अपर्याप्तता,

ड़) मजदूरों में जागरूकता की कमी।

उपर्युक्त कमियों को दूर कर देने से श्रम समस्याओं का समाधान होगा, और कल्याण कार्यो को गति मिलेगी।

2.10 श्रम कल्याण कार्य का महत्त्व

श्रमिकों के लिए कल्याण–कार्य के महत्त्व पर बल देने की कोई आवश्यकता विशेषकर भारत में नहीं प्रतीत होती। यदि हम अपने देश में श्रमिक वर्ग की दशा को ध्यान से देखें तो हमें मालूम होगा कि उन्हें अस्वस्थ वातावरण में बहुत लम्बे समय तक काम करना पड़ता है और अपने खाली समय में अपने जीवन की परेशानियों को दूर करने के लिए उसके पास कोई साधन नहीं है। ग्रामीण समुदाय से दूर हटाए जाने के कारण तथा एक अनजान एवं अस्वस्थ शहरी समुदाय के शिकार बन जाते हैं जो उन्हें अनैतिकता और विनाश की ओर उन्मुख कर देती है। भारतीय श्रमिक औद्योगिक रोजगार को एक बुराई की दृष्टि से देखते हैं, जिससे वे यथासम्भव शीघ्र से शीघ्र बच निकलने का प्रयास करते हैं। अतः औद्योगिक केन्द्रों में श्रमिकों के जीवन तथा काम करने की दशाओं में सुधार किए बिना सन्तुष्ट, स्थायी और कुशल श्रम–शक्ति नहीं प्राप्त की जा सकती। इसलिए कल्याण–कार्य का महत्त्व पश्चिमी देशों की अपेक्षा भारत में अधिक है।

कल्याण–कार्य से होने वाले लाभदायक प्रभावों के सम्बन्ध में श्रम अन्वेषण समिति ने तीन आवश्यक लाभों की ओर विचार किया है –

1. कल्याण सुविधाएँ– जैसे शिक्षा सम्बन्धी सुविधाएँ, खेल–कूद, मनोविनोद आदि–कारखाने में भावनात्मक वातावरण पर लाभपूर्ण प्रभाव रखती हैं, साथ ही साथ औद्योगिक शान्ति को कायम रखने में भी सहायता करती हैं। जब श्रमिक यह अनुभव करने लगते हैं कि मालिक तथा राज्य–सरकारें उनके दैनिक जीवन में रुचि रखते हैं तथा प्रत्येक सम्भव तरीके से उनके भाग्य को खुशहाल बनाना चाहते हैं, तब उनकी असन्तोष एवं विषाद की प्रवृत्ति स्वयं धीरे–धीरे समाप्त हो जाती है।
2. उत्तम गृह–व्यवस्था, सहकारी समितियाँ, जलपान–गृह, बीमारी तथा प्रसूति–सुविधाएँ, प्राविडेण्ड फण्ड, ग्रेचुटी एवं पेंशन और इसी तरह की अन्य बातें श्रमिकों में यह भावना आवश्यक रूप से उत्पन्न करती है कि वे उद्योगों में अन्य लोगों की भाँति की महत्त्व रखते हैं। आधुनिक स्थिति के अन्तर्गत श्रम–पलटाव तथा गैरहाजरी अधिक व्यापक हैं और सामाजिक सुरक्षा तथा मनोविनोद की खोज में श्रमिक अपने गाँवों की ओर नियमित रूप से जाते नजर आते हैं। कल्याण–कार्यो के द्वारा नई स्थिति उत्पन्न हो जाती है जिसमें श्रमिक वर्ग अधिक स्थायी तथा आर्थिक दृष्टि से अधिक कुशल हो जाता है।

3. मानवता के मूल्य के अतिरिक्त यहाँ तक सामाजिक लाभ भी होता है। जलपान–गृहों की व्यवस्था से, जहाँ श्रमिकों को सस्ता, तथा संतुलित आहार उपलब्ध होता है, उनकी शारीरिक उन्नति होती है। मनोविनोद के साधनों से उनकी बुराइयों को कम करना चाहिए, चिकित्सा सहायता तथा प्रसूति एवं शिशु–कल्याण से श्रमिकों तथा उनके परिवारों का स्वास्थ्य सुधारना चाहिए और सामान्य मातृ तथा शिशु मृत्युओं की दर कम करनी चाहिए। शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओं द्वारा उनकी मानसिक कुशलता तथा आर्थिक उत्पादन शक्ति को बढ़ाया जाना चाहिए। भारतीय औद्योगिक मजदूर को सदैव आलसी तथा अकुशल मानकर उसकी अवहेलना की गई है परन्तु बम्बई की कपड़ा श्रम जाँच समिति का यह निराकरण उचित ही है कि ''यह स्वतः सिद्ध–सिद्धान्त है कि सभी बातों में कुशलता के एक उच्च स्तर की अपेक्षा उन व्यक्तियों से की जा सकती है जो शारीरिक दृष्टि से योग्य तथा मानसिक परेशानियों और चिन्ताओं से मुक्त हैं। ऐसा उन्हीं मनुष्यों से सम्भव है जो कायदे से प्रशिक्षित किए गए हैं, जिनकी गृह–व्यवस्था ठीक और आहार उचित है तथा जिनके वस्त्रों की व्यवस्था सन्तोषपूर्ण है।'' कल्याण–कार्यो से मजदूरों की उत्पादन कुशलता में वृद्धि होती है और उनमें स्वानुभूति और चेतना की एक नई भावना का प्रादुर्भाव होता है।

2.11 कल्याण अधिकारी

औद्योगिक व्यवसाय के बुनाई उद्योग में 'Jobbers' या इंजनियरिंग उद्योग में, 'Mukadams' या खेती या बागानी में 'Sirdars', की कड़ी जकड़ में था वे मजदूरों/श्रमिकों की नियुक्ति और उनको अनुशासन में रखते थे, तैयार हुये माल की देखरेख, आवश्यकताओं और समय–समय पर फैक्ट्री यूनियन पर ध्यान भी रखते थे। वे बड़े पैमाने पर श्रमिकों के उत्पीड़न में लिप्त थे। श्रम पर बने रॉयल कमीशन ने 'Jobber' व्यवस्था को खत्म करने तथा श्रम अधिकारी को नियुक्त करने की सिफारिश 1831 में की। कमीशन का कहना था कि – ''हम सभी फैक्ट्रीयों से 'Jobber' के श्रमिकों को हटाने तथा नियुक्त करने के कार्य का निषेध करने की वकालत करते हैं।'' यह पूर्ण व अच्छी तरह से श्रम अधिकारी की नियुक्ति से हासिल किया जा सकता है और यह क्रम हम सिफारिश करते हैं जहाँ पर भी फैक्ट्रीयां मापदण्ड की मान्यता है। वह श्रमिक अधिकारी सिर्फ फैक्ट्री के कार्मिक प्रबन्धक के अधीन रहेगा और उसका चुनाव सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

उसमें – सच्चाई, ईमानदारी, व्यक्तित्व, ऊर्जा, दूसरों को समझने की क्षमता, बहुभावी ये सारे गुण होने चाहिये, कोई भी श्रमिक बिना श्रम अधिकारी तथा संस्थान या विभागअध्यक्षों की बिना सहमति के व्यक्तिगतरूप से नियुक्त नहीं किया जा सकता न ही बिना श्रम अधिकारी के विचार से हटाया जा सकता है। यह श्रम अधिकारी की जिम्मेदारी है कि कोई भी श्रमिक बिना पर्याप्त या तर्क संगत कारण के हटाया न जाये।

अगर श्रम अधिकारी सही या कर्तव्यनिष्ठ है तो श्रमिक उससे जल्द ही विश्वास करना सीख लेगें तथा उसे अपना मित्र समझेंगे, यहां और भी कार्य/दायित्व है जो एक अधिकारी को पूरे करने पड़ते हैं जब बात कल्याण की होती है। इस प्रकार से श्रम अधिकारी के पद की शुरूआत प्रारम्भ में निम्न के लिये हुयी –

- Jobber – व्यवस्था की बुराईयों तथा खराब अभ्यासों को दूर करने।
- श्रम प्रबन्धन को मीलों में बढ़ाने तथा बेहतर करने में।
- राज्य श्रम आयुक्त के साथ एक कड़ी के रूप में सेवा करने हेतु।

कॉटन कपड़ा मील, मुम्बई तथा जूट उद्योग, कलकत्ता में 1930 में सर्वप्रथम श्रम अधिकारी की नियुक्ति हुई। उस समय के श्रम अधिकारी को व्यवस्था सुदृढ़ करने, कानून को, अनुशासन को बनाये रखने की जिम्मेदारी थी। जबकि बाद में व्यवस्था सुदृढ़ करने का काम धीरे–धीरे कल्याणकारी गतिविधियों में बदल गया और श्रम अधिकारी ने कुछ कल्याणकारी सेवायें जैसे – कि अनाज, खेल, सहयोग, संगठन इत्यादि लागू की इन कारणों से श्रम अधिकारी – श्रम कल्याण अधिकारी बन गया।

श्रम अनुसंधान समिति ने श्रम अधिकारी के संस्थान को भी महत्व दिया। इस समिति की सिफारिशों का आजादी से पहले सरकार की सोच पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा।

1948 के फैक्ट्री अधिनियम में कानूनन एक कल्याण अधिकारी की नियुक्ति का प्रावधान है, धारा 49(1) और (2) – फैक्ट्र अधिनियम में दिया गया है कि –

1. जिस भी फैक्ट्री में 500 या उससे अधिक श्रमिक कार्यरत् हों वहाँ पर श्रमिकों के अनुकूल संख्या में मालिकों को श्रम अधिकारी की नियुक्ति करना चाहिये।
2. राज्य सरकार को सह धारा (i) के अन्तर्गत नियुक्त श्रम अधिकारी की योग्यता, कत्तर्व्य तथा सेवा की शर्तो को निश्चित करने का अधिकार हैं।

फैक्ट्री अधिनियम के द्वारा दिये गये मार्गदर्शन को बाद में कानूनन कार्यरत बागानी तथा खदान उद्योग द्वारा भी अपनाया गया। बागानी श्रम अधिनियम, 1951 के धारा 18 के (1) व (2) के अनुसार (1) जिस भी बागान में 300 या इससे अधिक श्रमिक कार्यरत है वहां मालिक को उनकी संख्या के अनुकूल श्रम अधिकारी की नियुक्ति करनी चाहिये। (2) राज्य सरकार सह धारा (i) के अन्तर्गत नियुक्त श्रम अधिकारी की योग्यता, कर्त्तव्य तथा सेवा की शर्त्तो को निश्चित कर सकती है।

खदान अधिनियम, 1952 में यह प्रावधान धारा 58(q) के अन्तर्गत बनाया गया है, खदान अधिनियम के धारा 72 (1955), में प्रत्येक खदान में जहाँ पर भी 500 या अधिक सामान्य श्रमिक कार्यरत है वहां मालिक, या प्रबन्धक को एक योग्य श्रम अधिकारी या योग्य व्यक्ति को एक कल्याण अधिकारी के रूप में नियुक्त करना पड़ता है। इसके आगे नियम कल्याण अधिकारी की योग्यता, कर्त्तव्य, तथा सेवा की शर्तो को बताते हैं।

राज्य सरकारों को कानूनी रूप से आवश्यक नियमों जिसमें एक कल्याण अधिकारी की योग्यता कत्तर्व्य तथा नियुक्ति की दशा निहित हो का ढांचा बनाने की बाध्यता है।

केन्द्र सरकार ने भी उपरोक्त 3 मुख्य अधिनियमों के तहत मार्गदर्शन के लिये ढांचा तथा मॉडल तैयार किये है। सभी तीन मॉडल नियम ने कल्याण अधिकारी के पद के लिये निम्नलिखित योग्यता बनायी है –

1. इसके सन्दर्भ में राज्य सरकार से मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय द्वारा एक डिग्री रखता हो।
2. समाज विज्ञान या श्रमिक कल्याण खदान के मामले में या समाज कार्य का डिप्लोमा या डिग्री – राज्य सरकार से मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय से प्राप्त किया।

इसके अतिरिक्त – खदान नियम ने कुछ निम्नलिखित और नियम दिये है।

''किसी भी औद्योगिक व्यवसाय में कम से कम 3 वर्ष तक श्रमिक समस्या को देखने तथा उनके निवारण का आभ्यासिक अनुभव।''

3. जहाँ पर फैक्ट्री, खदान या बागान स्थित है उस जगह पर कार्यरत श्रमिकों द्वारा बोली जाने वाली भाषा की पर्याप्त जानकारी/ज्ञान हो।

धारा 49 (फैक्ट्री अधिनियम, 1948) तथा महाराष्ट्र कल्याण अधिकारी (कर्त्तव्य, योग्यता तथा सेवा की शर्तो) के अनुसार जिस भी फैक्ट्री में 500 या अधिक श्रमिक (संविदा कान्ट्रेक्ट श्रमिकों को मिलाकर) है, उन्हें एक कल्याण अधिकारी को नियुक्त करना आवश्यक है –

इसमें कल्याण अधिकारी, अतिरिक्त कल्याण अधिकारी तथा उप/सह. कल्याण अधिकारी शामिल है। इसकी सूची निम्नलिखित है।

जहां पर श्रमिकों की संख्या इससे ज्यादा हो	परन्तु इससे ज्यादा न हो	कल्याण अधिकारी/ उप कल्याण अधिकारी/ अरिक्ति कल्याण अधिकारी की संख्य
1	2	3
500	2500	एक कल्याण अधिकारी
2500	3500	एक कल्याण अधिकारी और एक उप कल्याण अधिकारी
3500	4500	एक कल्याण अधिकारी एवं 1–अतिरिक्त कल्याण अधिकारी
4500	6500	1–कल्याण अधिकारी 1– उप कल्याण अधिकारी 1– अतिरिक्त कल्याण अधिकारी
6500	8500	1– कल्याण अधिकारी

		2– अतिरिक्त कल्याण अधिकारी
8500	10500	1– कल्याण अधिकारी 2– अरिक्ति कल्याण अधिकारी 1– उप कल्याण अधिकारी
10500		1– कल्याण अधिकारी 3– अरिक्ति कल्याण अधिकारी

फैक्ट्री अधिनियम के तहत नमूना (मॉडल) नियमों में कल्याण अधिकारी के कर्त्तव्यों की एक सूची तैयार की गयी है यह कर्त्तव्य है –

1. कानून के तहत प्राप्त सेवाओं की देख रेख, सुरक्षा, स्वास्थ्य तथा कल्याण कार्यक्रम जैसे रहना (आवास, निर्माण, सफाई आदि।
2. श्रमिकों को व्यक्तिगत, पारिवारिक तथा कार्य क्षेत्र में सहायता सम्बन्धी मामलों में सलाह या परामर्श देना।
3. प्रबन्धन को श्रमिक कल्याण नितियों तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम बनाने में सलाह देना।
4. श्रमिक, प्रबन्धन तथा अन्य बाहरी संस्था जैसे – फैक्ट्री निरीक्षक, केन्द्रीय श्रम संस्थान तथा अन्य सामाजिक कल्याण संस्थाओं के बीच एक कड़ी के रूप में कार्य करना।
5. औद्योगिक सम्बन्धों तथा सामान्य सहिष्णुता, श्रमिकों के भले के लिये सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध तथा उसके विकास के लिये मापदण्ड का सुझाव देना, श्रमिकों के कष्टों को दूर करने तथा कार्य की क्षमता बढ़ाने के लिये भिन्न तरह के मापदण्ड अपनाना।

मानव संसाधन शक्ति प्रबन्धन के 3 क्षेत्रों में कल्याण अधिकारी के कार्यो को वर्गीकृत किया जा सकता है।

1. श्रमिक कल्याण (कल्याणकारी प्रणाली/कार्य)
2. श्रमिक प्रबन्धन (व्यक्तिगत कार्य)
3. श्रमिक सम्बन्ध (समझौता/मैत्री कार्य)

श्रम–कल्याण अधिकारी के श्रमिक कल्याण कारी कार्यो में सलाह देना स्वास्थ्य, सुरक्षा तथा कल्याण, कार्य के समय, छुट्टी, कल्याण समिति के गठन सम्बन्धी कानूनी तथा गैर कानूनी प्रावधान को लागू करने में सहायता देना सम्मिलित है। उसके श्रमिक प्रबन्धन उत्तरदायित्व के अन्तर्गत संगठनात्मक अनुशासन सुरक्षा तथा स्वास्थ्य प्रबन्धन के मध्य कड़ी के रूप में (प्रबन्धन तथा श्रमिक के बीच), वेतन तथा भत्तों के प्रबन्धन, श्रमिक शिक्षा शामिल है। उसके श्रमिक सम्बन्धी क्रियाओं में श्रमिकों की शिकायतों का निवारण त्वरित आदेश प्रबन्धन, कार्य क्षमता बढ़ाने हेतु कदम उठाना, झगड़ो का शान्तिपूर्वक निवारण, श्रमिक–प्रबन्धन के बीच सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों को बढ़ाना शामिल है। यह मुख्यतः

एक अधिकारी समूह के सलाहकार या विशेषज्ञ के रूप में अधिकारी समूह में कार्यरत रहता है।

कल्याण अधिकारी से एक सलाहकार, परामर्शदाता, बिचौलिया तथा मध्यस्थ कड़ी (प्रबन्धन तथा श्रमिक के बीच) के रूप में कार्य करने की अपेक्षा की जाती है।

फैक्ट्री अधिनियम, 1948 (L-XIII of 1948) के भाग 49 के सह भाग (2) भाग 50, तथा 112 के अन्तर्गत दिये गये अधिकार के अभ्यास में महाराष्ट्र सरकार ने निम्नलिखित नियम बनाये :

2.11.1 कल्याण अधिकारी के कर्त्तव्य

कल्याण अधिकारी, सह–कल्याण अधिकारी तथा अतिरिक्त कल्याण अधिकारी को करना चाहिये –

i) फैक्ट्री मालिक तथा कर्मचारियों के बीच सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखने की दृष्टि से सुझाव व सम्बन्ध स्थापित करना।

ii) कर्मचारियों के दु:खों, व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से फैक्ट्री प्रबन्धन के समक्ष शीघ्र निदान की दृष्टि से लाना या प्रबन्धन को उससे अवगत कराना।

iii) कर्मचारियों को समझना व उनका अध्ययन, ताकि वह फैक्ट्री प्रबन्धन के निर्माण तथा कर्मचारी नितियों को बना सके तथा इन नितियों को कर्मचारी के समझने योग्य भाषा में परिवर्तित करे ताकि कर्मचारी उसे समझ सके।

iv) फैक्ट्री प्रबन्धन तथा कर्मचारियों के बीच झगड़े को होने से रोकने की दृष्टि से औद्योगिक सम्बन्धों को देखना, अगर ऐसी कोई झड़प हो जाती है तो उसे शान्त करना।

v) कर्मचारियों को फैक्ट्री के खिलाफ अवैध हड़ताल तथा प्रबन्धन के खिलाफ तालाबन्दी करने से रोकना और असामाजिक गतिविधियों को रोकने में सहायता देना।

vi) हड़ताल और तालाबन्दी के दौरान एक निष्पक्ष नजरिया रखना ताकि शान्तिपूर्वक समझौता हो सके।

vii) फैक्ट्री अधिनियम 1948, के अन्तर्गत बने नियमों को लागू करने तथा फैक्ट्री प्रबन्धन को कानूनी तथा बन्धन सम्बन्धी आवश्यकताओं पूर्ति में सहायता तथा सलाह देना। स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं और फैक्ट्री निरीक्षक के बीच कड़ी स्थापित करना, कर्मचारियों का चिकित्सीय स्वास्थ्य परीक्षण, स्वास्थ्य ब्यौरा, जोखिम भरी नौकरी की देख–रेख बीमारों का दौरा और स्वास्थ्य लाभ, हादसा प्लान्ट निरीक्षण, सुरक्षा शिक्षा हादसों की छानबीन, मात्त्व लाभ, कर्मचारियों को क्षतिपूर्ति सम्बन्धी मामलों में प्रावधान लागू करना।

viii) कर्मचारियों तथा प्रबन्धन के बीच सम्बन्धों को बढ़ाना ताकि उत्पाद क्षमता बढ़ सके तथा साथ ही साथ कार्य स्थिति में सुधार तथा कर्मचारियों को कार्य के वातावरण में सुधार लाने तथा सहज करने में सहायता करता है।

ix) कार्य शैली के निर्माण तथा सन्धि उत्पाद समिति, सहकारी संस्थाओं सुरक्षा तथा कल्याण समिति को प्रोत्साहन तथा उनके कार्यो की देख–रेख करना।

x) फैक्ट्री प्रबन्धन को कल्याण के प्रावधान जैसे कैन्टीन, आराम करने के लिये स्थान, बच्चों के देख–रेख का स्थान, पर्याप्त शौचालय व्यवस्था, पीने का पानी, तथा अच्छी तनख्वाह/वेतन, पेंशन, भविष्य निधि, ऐच्छिक वेतन में सलाह तथा सहयोग देना।

xi) फैक्ट्री प्रबन्धन को छुट्टी के साथ कर्मचारी को तनख्वाह निर्धारित करने, तथा कर्मचारियों के छुट्टी की समय तनख्वाह सम्बन्धी अन्य नियमों को बताने तथा इसके सम्बन्ध में कर्मचारियों को आवेदन सम्बन्धी जानकारी देने तथा उनका निर्देशन करने में सहायता देना।

xii) फैक्ट्री प्रबन्धन को कल्याणकारी सुविधा देने जैसे आवास सुविधा खाना, सामाजिक तथा पुनः निर्माण सुविधा, सफाई, बच्चों की शिक्षा तथा व्यक्तिगत समस्याओं में सलाह देने में सलाह देना तथा सहायता करना।

xiii) फैक्ट्री प्रबन्धन को नये कर्मचारियों, प्रशिक्षुओं, कर्मचारी स्थानान्तरण प्रोन्नति, शिक्षक व निरीक्षक, निरीक्षक व सूचना नियन्त्रण और कर्मचारियों को आगे किसी प्रकार की शिक्षा दी जाये ताकि वे किसी तकनीकि की जगह उपलब्ध रह सकें, इन मुद्दों पर सलाह देना।

xiv) कर्मचारियों के जीवन स्तर में वृद्धि तथा उनके भले के लिये मापदण्डों का सुझाव देना।

xv) कर्मचारियों को उनके अधिकार, दायित्व को बताना तथा उनके कर्त्तव्यों को परिभाषित करना जो फैक्ट्री व उनके अनुशासन, सुरक्षा तथा बचाव में बनाये गये हैं।

2.11.2 अन्य कर्त्तव्यों का गैर निर्वाहन

यदि मुम्बई, फैक्ट्री का मुख्य निरीक्षक इस मत में हो कि फैक्ट्री के मालिक द्वारा कल्याण अधिकारी, सह कल्याण अधिकारी या अतिरिक्त कल्याण को नियम 7 में दिये गये कार्यो से असंगत कार्यो को करने को कहता है तो इस दशा में मुख्य निरीक्षक सीधे या लिखित तौर पर ऐसे कल्याण अधिकारी इस प्रकार का कार्य नहीं करेगें।

कल्याण अधिकारी की भूमिका और स्थिति को लेकर यह एक मतभेद का प्रश्न बना हुआ है। श्रमिक कल्याण पर बनी समिति ने विभिन्न पक्षों राज्य सरकार पब्लिक सेक्टर उद्योग, निजी नियोक्ता संगठन, कर्मचारी संगठन तथा श्रमिक सम्बन्धों के क्षेत्र में

प्रसिद्ध व्यक्तियों के मतों के आधार पर कल्याण अधिकारी की भूमिका और स्थिति इच्छित की है। इस संदर्भ में दिये गये कुछ मत निम्नवत है –

1. यह सुझाव दिया कि कल्याण अधिकारी को सरकार के द्वारा नियुक्त करना चाहिये तथा कर्मचारी अपने वेतन तथा भत्ते सरकार के साथ जमा करें और उनके कार्य सरकारी श्रम विभाग द्वारा देखे जाये जिसके प्रति उनकी जबाब देही हो।
2. कल्याण अधिकारी को कर्मचारियों के झगड़ों में पेश होने की अनुमति नहीं होनी चाहिए। व्यक्तिगत तथा कल्याण कार्यक्रम को स्पष्ट रूप से परिभाषित तथा उन्हें भिन्न अधिकारियों को सौप देना चाहिये, उसे किसी प्रकार के व्यक्तिगत मामलों को देखने या हल करने की अनुमति नहीं क्योंकि वह प्रबन्धन का प्रतिनिधि है। सिवाय की प्रबन्धन का होता है।
3. एक मत है कि कल्याण अधिकारी को कानूनी रूप से सुरक्षा प्राप्त होनी चाहिये ताकि वह अपना विचार बिना किसी भय के दे सके। वह प्रबन्धन के हाथों में कर्मचारी के विरुद्ध एक हथियार भी बन सकता है। और दूसरा मत यह है कि कानूनी सुरक्षा कल्याण अधिकारी को प्रभावशाली ढंग से कार्य करने के लिये आवश्यक नहीं है। क्योंकि कानूनी सुरक्षा बाहरी शक्ति को ग्रहण करने की प्रवृत्ति को बढ़ाता है।
4. कल्याण अधिकारी की अनिवार्यता को रद्द कर देना चाहिये क्योंकि यह कर्मचारियों को कोई लाभ नही पहुंचाता तथा यह नियोक्ता द्वारा कर्मचारी के खिलाफ प्रयोग किया जाता है। यह पद केवल एक भ्रम पैदा करता है तथा उसे बनाये रखता है।
5. अधिनियम के कुछ सम्बन्धित भागों में परिवर्तन/संशोधन कल्याण अधिकारी को प्रबन्ध द्वारा दिये गये कार्यो को पूर्ण रूप से क्रियान्वित करने के लिये आवश्यक है कुछ प्रतिबन्धित कार्यो को छोड़कर। ये प्रतिबन्धित कार्य निम्नवत् हैं –
    a. कोर्ट के समक्ष प्रबन्धन की तरफ से प्रस्तुत होना या इसके बारे में तैयारी करना।
    b. कर्मचारियों के खिलाफ अनुशासनात्म कार्यवाही करना/करने का निर्णय लेना।
6. श्रम कल्याण अधिकारी के कार्यो की 'उदासीन' अवधारणा जहाँ तक उद्देश्यपूर्ण कार्य है वह बहुत ही खराब ढंग से अनुमानित, अव्यक्त/अपरिभाषित और सामान्य तौर पर अर्थ हीन है। कल्याण अधिकारी प्रबन्धन के द्वारा नियुक्त किया जाता है तथा वेतन प्राप्त करता है और बाद में उसकी दक्षता, उद्देश्य को आकलित किया जाता है तथा यही उसकी प्रान्नति तथा वेतन वृद्धि तय करती

है। इन परिस्थितियों के अन्तर्गत वह श्रमिक तथा प्रबन्धन के बीच तृतीय शक्ति नहीं बन सकता जो स्वतन्त्र तथा निर्णय लेने की शक्ति अपने पास रखता हो।

7. यहां व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थानों के बीच यह भावना है कि कल्याण अधिकारी उद्योगों में समाज कार्य करने की भूमिका निभाता है। यह माना जाता है कि कल्याण अधिकारी की भूमिका एक समाजकार्य तथा व्यवसाय पूर्वदेशीयत्व का अनोखा समागम है ।

सारे सम्बन्धित पहलू तथा विचारों की अभिव्यक्ति को देखने के बाद श्रम कल्याण पर बनी समिति ने यह संस्तुति दी कि प्रबन्धन को नियमों के निर्माण पूर्ति के लिये अपने व्यक्तिगत विभाग में उपस्थिति अधिकारी में से एक कल्याण अधिकारी का पद बनाना चाहिये। प्रबन्धन को यह निश्चित करना चाहिये कि उनके व्यक्तिगत विभाग का जो ऐसे अधिकारी है वह कल्याण कारी गतिविधियों को देखने के लिये पूरी तरह प्रशिक्षित दक्ष तथा उनके पास कल्याण कार्यो के लिये योग्यता होनी चाहिये।

श्रम पर बने राष्ट्रीय आयोग के शब्दों में ''कर्मचारी की देखभाल हर तरह से जो कार्य स्थल पर बाहर उन्हें प्रभावित करती हैं, कल्याण अधिकारी के ऊपर एक विशेष उत्तरदायित्व है जिसे मानव पक्ष में एक रख–रखाव अभियन्ता बनना पड़ता है। कई मामलों में कल्याण अधिकारी व्यक्तिगत प्रबन्धन की ओर से कर्मचारियों के दुख, शिकायतों जो कि सेवा के नियम व शर्तो से सम्बन्धित है तथा घरेलू तथा अन्य मामलों से सम्बन्धित है।

2.12 सार संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में श्रम कल्याण की अवधारणा, अर्थ एवं परिभाषा के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है। इसी इकाई में श्रम कल्याण अधिकारी के बारे में लिखा गया है तथा श्रम कल्याण के अधिकारी की नियुक्ति के उन सभी प्रावधानों के बारे में भी लिखा गया है जो विभिन्न अधिनियमों में वर्णित हैं। श्रम कल्याण अधिकारी के साथ कितने श्रमिकों पर कितने सहायक श्रम कल्याण अधिकारी होने चाहिए इसकी भी व्याख्या की गई है। श्रम कल्याण अधिकारी की भूमिका के बारे में भी विस्तृत प्रकाश डाला गया है।

स्व–मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. श्रम कल्याण की अवधारणा, अर्थ एवं परिभाषा लिखिए ?
2. श्रम कल्याण कार्य के वर्गीकरण पर एक टिप्पणी लिखिए ?
3. श्रम कल्याण अधिकारी की नियुक्ति से संबंधित विभिन्न अधिनियमों में दिये गये उपबन्धों के बारे में प्रकाश डालिये ?
4. श्रम कल्याण अधिकारी की भूमिका के बारे में एक निबन्ध लिखिए ?

2.13 पारिभाषिक शब्दावली

Work Efficiency	कार्य क्षमता	Supervision	पर्यवेक्षण
Mental Peace	मानसिंक शांति	Monitoring	अवबोधन
Agencies	संस्थायें	Counseling	परामर्श
Trade Unions	श्रम संघ	Hormonious	सौहार्दपूर्ण
Mines	खान	Policies	नीतियां
Coal	कोयला	Amelioration	सुधार
Plantation	बगान	Poverty	गरीबी
Safety	सुरक्षा	Eradication	उन्मूलन

2.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

10. बघेल, डी. एस., औद्योगिक समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली, पृष्ठ 178–190, वर्ष 2002।
11. मदन, जी.आर., समाज कार्य, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली, पेज 179–182, वर्ष 2006।
12. शर्मा, ए.एम., आस्पेक्टस ऑफ लेवर वेलफेयर एण्ड सोशल सिक्यूरिटी, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई, पेज 42–48, वर्ष 2000।

इकाई –3

श्रम कल्याण : सिद्धान्त एवं प्रशासन

Labour Welfare : Principles & Administration

इकाई की रूपरेखा

3.1 परिचय

3.2 उद्देश्य

3.3 श्रम कल्याण के सिद्धान्त
3.4 श्रम कल्याण प्रशासन
3.5 राज्य सरकार का श्रम प्रशासन
3.6 श्रमिक शिक्षा
3.6.1 श्रमिक शिक्षा क्या है ?
3.6.2 भारत में श्रमिक शिक्षा के उद्देश्य
3.7 सार संक्षेप
3.8 अभ्यास प्रश्न
3.9 पारिभाषिक शब्दावली
3.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.1 परिचय

कोई भी श्रम कल्याण सम्बन्धी योजना अथवा कार्यक्रम तब तक प्रभावपूर्ण रूप से नही बनाया जा सकता जब तक कि समाज के नीति निर्धारक श्रम कल्याण की आवश्यकता को स्वीकार करते हुये इसके सम्बन्ध में उपयुक्त नीति बनाते हुए अपने इरादे की स्पष्ट घोषणा न करें और इसे कार्यान्वित कराने की दृष्टि से राज्य का समुचित संरक्षण प्रदान करने हेतु उपयुक्त इसे वैधानिक स्वरूप प्रदान न करें।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- श्रम कल्याण के सिद्धान्तों के बारे में जान सकेगें।
- श्रम कल्याण के प्रशासन के बारे में लिख सकेगें।
- केन्द्रीय तथा राज्य स्तर पर श्रम कल्याण प्रशासन के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- कर्मकार शिक्षा के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।
- कर्मकार शिक्षा के उद्देश्यों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

3.3 श्रम कल्याण के सिद्धान्त

सिद्धान्त शब्द का प्रयोग यहां पर उन सामान्यीकरण को सम्बोधित करने के लिए किया जा रहा है जो श्रम कल्याण के क्षेत्र से सम्बन्धित व्यक्तियों के अनुभवों पर आधारित हैं और श्रम कल्याण नीतियों के निर्धारण, योजनाओं के निर्माण, कार्यक्रमों के आयोजन तथा सेवाओं के प्रावधान को अधिक प्रभावपूर्ण बनाने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। ये कुछ सिद्धान्त इस प्रकार है :

1. श्रम कल्याण की आवश्यकता की स्वीकृति

कोई भी श्रम कल्याण सम्बन्धी योजना अथवा कार्यक्रम तब तक प्रभावपूर्ण रूप से नही बनाया जा सकता जब तक कि समाज के नीति निर्धारक श्रम कल्याण की आवश्यकता को स्वीकार करते हुये इसके सम्बन्ध में उपयुक्त नीति बनाते हुए अपने इरादे की स्पष्ट घोषणा न करें और इसे कार्यान्वित कराने की दृष्टि से राज्य का समुचित संरक्षण प्रदान करने हेतु उपयुक्त इसे वैधानिक स्वरूप प्रदान न करें। नीति निर्धारकों द्वारा 'श्रमेव जयते' को स्वीकार करते हुये श्रम को व्यक्ति एवं समाज के विकास के लिये आवश्यक मानते हुये श्रम कल्याण को सामाजिक नीति का एक अभिन्न अंग स्वीकार करना चाहिये और श्रमिकों की कल्याण सम्बन्धी योजनाओं एवं कार्यक्रमों को राज्य का संरक्षण प्रदान करने हेतु आवश्यक श्रम सम्बन्धी विधान बनने चाहिये।

2. श्रमिक, उनके विचार, उद्योग तथा समाज की अन्योन्याश्रयिता

श्रम कल्याण के महत्व को सही अर्थ में तभी स्वीकार किया जा सकता है जबकि इस बात पर सहमति व्यक्त की जाय कि श्रमिक, उनसे परिवार, उद्योग तथा समाज एक दूसरे पर निर्भर हैं और वे एक दूसरे के पूरक के रूप में कार्य करते हैं। जिस प्रकार समाज के विघटित होने का प्रतिकूल प्रभाव उद्योग पर, उद्योग के ठीक से न चलने का प्रतिकूल प्रभाव श्रमिक पर और श्रमिक के विघटित होने का प्रतिकूल प्रभाव परिवार पर पड़ता है उसी प्रकार श्रमिक के व्यक्तित्व सम्बन्धी संगठन के उचित न होने तथा उसके द्वारा अपने दायित्वों का निर्वाह न किये जाने पर उद्योग, उनके परिवार और समाज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। धनात्मक रूप में एक सुसंगठित समाज उद्योग को, उद्योग श्रमिकों को तथा श्रमिक परिवार को उपयुक्त रूप से चलाने में सहायक सिद्ध होता है तथा एक अच्छे व्यक्तित्व सम्बन्धी संगठन वाला श्रमिक अपने उद्योग, परिवार तथा समाज को अच्छी प्रकार चलाने में अपना योगदान देता है।

3. अनुभूत आवश्यकताओं का सिद्धान्त

कोई भी श्रम कल्याण कार्यक्रम तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक कि वह श्रमिकों की उन अनुभूत आवश्यकताओं पर आधारित न हो जिनके लिये वास्तव में वह आयोजित किया जाता है। श्रमिकों की वास्तविक आवश्यकताओं को जानने के लिये उनसे सम्पर्क स्थापित करते हुये, विचार–विमर्श और पर्यवेक्षण का आश्रय लेते हुये उनकी अनुभूत आवश्यकताओं की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। श्रमिकों की अनुभूत आवश्यकताओं के अन्तर्गत उनके परिवार के सदस्यों, विशेष रूप से आश्रित सदस्यों की अनुभूत आवश्यकतायें भी सम्मिलित हैं।

4. अनुभूत आवश्यकताओं में प्राथमिकता का सिद्धान्त

श्रमिकों एवं उनके परिवार के सदस्यों की अनुभूत आवश्यकतायें अनेक प्रकार की होती हैं। इनमें से कुछ अल्पकालीन तथा कुछ दीर्घकालीन होती हैं, इनमें से कुछ आर्थिक, कुछ मनोवैज्ञानिक, कुछ सामाजिक होती है, इनमें से कुछ स्वयं श्रमिकों के मत में अन्य की तुलना में अधिक अनिवार्य होती है। चूँकि इन सभी आवश्यकताओं की पूर्ति

एक साथ सम्भव नहीं है इसलिये इन आवश्यकताओं में प्राथमिकता स्थापित की जानी चाहिये और उन आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रयास पहले किया जाना चाहिये जिन्हें स्वयं श्रमिक तथा उनके परिवार के सदस्य सापेक्षतः अधिक महत्वपूर्ण समझते हैं।

5. श्रमिकों के लचीले प्रकार्यात्मक संगठन के विकास का सिद्धान्त

जीवन के किसी भी क्षेत्र में आवश्यकताओं को पूर्ति के लिये कोई–न–कोई योजना एवं कार्यक्रम बनाना ही पड़ता है। अनवरन् रूप से योजनाबद्ध ढंग से कार्यक्रम बनाये जाते रहें और उन्हें सुचारू रूप से आयोजित किया जाता रहे इसके लिये यह आवश्यक है कि श्रमिकों के संगठन का निर्माण किया जाय जिसमें विभिन्न प्रकार के श्रमिकों की अभिरूचियों का प्रतिनिधित्व करने वाले लोग रखे जायें। इन प्रतिनिधियों का चयन यथासम्भव मतैक्य के आधार पर किया जाना चाहिए किन्तु जहाँ मतैक्य सम्भव न हो वहाँ चयन बहुसंख्यक मत के आधार पर किया जाना चाहिए। इस संगठन के अन्तर्गत् श्रमिकों, उद्योग से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित सरकारी विभागों तथा लोकोपकारी एवं स्वयंसेवी संगठनों के प्रतिनिधियों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिये।

6. श्रमिकों के सक्रिय सम्मिलन का सिद्धान्त

श्रमिकों के हितों का संरक्षण एवं सम्बर्द्धन करने के लिये आयोजित किये जाने वाले श्रम कल्याण कार्यक्रमों के साथ श्रमिकों में अपनत्व एवं लगाव की भावना तब तक विकसित नहीं की जा सकती जब तक कि उन्हें इन कार्यक्रमों के आयोजनों में सक्रिय रूप से सम्मिलित न किया जाय। 'श्रमिकों के लिये' कार्य करने के बजाय 'श्रमिकों के साथ' कार्य करना अधिक उपयुक्त है और इसलिये यह आवश्यक है कि श्रम कल्याण के नीति निर्धारण से लेकर कार्यक्रमों के आयोजन और मूल्यांकन तक के प्रत्येक स्तर पर श्रमिकों को निर्णय लेने एवं उनके द्वारा उपयुक्त समझे गये तरीकों का प्रयोग करते हुये कार्य करने के अवसर सुनिश्चित किये जाने चाहिये।

7. प्रभावपूर्ण कार्यक्रम के निर्माण का सिद्धान्त

प्राथमिकता के आधार पर निश्चित की गयी अनुभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये आयोजित किये जाने वाले श्रम कल्याण कार्यक्रमों की रूपरेखा इस प्रकार तैयार की जानी चाहिये कि वे सभी प्रकार के श्रमिकों की व्यक्त एवं सन्निहित, अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन अभिरूचियों की सन्तुष्टि में सहायक सिद्ध हो सके। कुछ कार्यक्रम ऐसे होने चाहिये जिनके परिणाम प्रत्यक्ष रूप से इनके आयोजन के साथ ही साथ दिखाई देने लगें तथा कुछ कार्यक्रम ऐसे होने चाहिये जिनके परिणाम दीर्घकालीन योजना का अनुसरण करते हुये सापेक्षतः अधिक लम्बे समय के उपरान्त परिलक्षित हो सकें।

8. सामुदायिक संसाधनों के अधिकतम सुदपयोग का सिद्धान्त

श्रम कल्याण कार्यक्रमों के लिये संसाधन आवश्यक होते हैं। सामान्यतः ये संसाधन मालिकों द्वारा प्रदान किये जाते हैं क्योंकि यह माना जाता है कि श्रमिक द्वारा

किये गये काम से होने वाले लाभों का सबसे बड़ा हिस्सा मालिक ही लेता है। ऐसी उत्पादन की व्यवस्था में जिसमें श्रमिकों की सहभागिता को प्रत्येक स्तर पर सुनिश्चित किये जाने का प्रावधान हो तथा जिसमें उद्योग को होने वाले लाभों में श्रमिकों की उत्पादकता पर आधारित लाभांश प्राप्त करने का कानूनी प्रावधान हो, केवल यह स्वीकार करना कि श्रम कल्याण के लिये अपेक्षित साधन जुटाना मालिकों का दायित्व है, उपयुक्त नहीं प्रतीत होता। श्रमिकों को भी विशेष रूप से अपने संगठनों के माध्यम से श्रम कल्याण कार्यक्रमों के लिये संसाधन जुटाना चाहिये। न केवल इतना बल्कि समाज को भी इस दिशा में आगे आना चाहिये क्योंकि श्रमिकों द्वारा किये गये श्रम से उद्योग के माध्यम से किये गये उत्पादन से समाज प्रत्यक्ष रूप से लाभान्वित होता है। इसीलिये यह आवश्यक है कि श्रम कल्याण के लिये आवश्यक संसाधन जुटाने का दायित्व मालिक, श्रमिक और समाज तीनों द्वारा संयुक्त रूप से निभाया जाय। समुदाय में अनेक लोकोपकारी व्यक्ति एवं संगठन पाये जाते हैं जो इस कार्य में सहायता कर सकते हैं। इन व्यक्तियों एवं संगठनों की सहायता लेते हुये समुदाय में उपलब्ध संसाधनों का अधिक से अधिक सदुपयोग किया जाना चाहिये।

9. मार्गदर्शन हेतु समुचित विशेषज्ञ सहायता उपलब्धि का सिद्धान्त

श्रमिकों से इस बात की अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वे प्राथमिकता के आधार पर निश्चित की गयी विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति से सम्बन्धित कार्यक्रमों के निर्णय के सभी पहलुओं की जानकारी रखते हों। इसी प्रकार श्रम कल्याण के लिये संगठन में सम्मिलित मालिकों, उद्योग से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित सरकार के विभिन्न विभागों के प्रतिनिधियों तथा लोकोपकारी एवं स्वयंसेवी संगठनों के प्रतिनिधियों से भी इस बात की आशा नहीं की जा सकती कि वे आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये बनाये जाने वाले कार्यक्रमों के सभी पहलुओं के बारे जानकारी रखते हों। चूँकि कुछ विशिष्ट प्रकार के कार्यक्रमों के निर्माण में कुछ ऐसे पहलू होते हैं जिनमें तकनीकी ज्ञान एवं निपुणताओं की आवश्यकता होती है इसलिये समय–समय पर विभिन्न विशेषज्ञों को आमंत्रित करके उनसे आवश्यक परामर्श लेते हुए कार्यक्रमों का निर्माण किया जाना चाहिये, किन्तु कार्यक्रम निर्माण से लेकर इसके कार्यान्वयन तक के प्रत्येक स्तर पर एक प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ता की सेवायें ली जानी चाहिये क्योंकि श्रम कल्याण सम्बन्धी कार्यक्रम मानव संसाधनों के विकास से सम्बन्धित हैं तथा इनका आयोजन सौहार्दपूर्ण तथा अर्थपूर्ण मानवीय सम्बन्धों का आश्रय लेते हुए किया जाता है। सामाजिक कार्यकर्ता की उपस्थिति इस बात को सुनिश्चित करेगी कि कार्यक्रम सोद्देश्यपूर्ण बनेगे तथा इनके कार्यान्वयन के दौरान उत्पन्न होने वाली अन्तःक्रिया को आवश्यक मार्गदर्शन प्राप्त हो सकेगा।

10. सतत् मूल्यांकन एवं संशोधन का सिद्धान्त

श्रम कल्याण कार्यक्रमों का अनवरत् मूल्यांकन होते रहना चाहिये ताकि इनकी प्रगति, इनके कार्यान्वयन के दौरान आने वाली विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों तथा अपेक्षित संशोधनों की जानकारी प्राप्त हो सके और इनके आधार पर श्रम कल्याण से सम्बन्धित प्रत्येक स्तर के सभी पहलुओं में आवश्यक संशोधन किये जा सकें।

3.4 श्रम कल्याण प्रशासन

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 246 और अनुसूची 7 में केन्द्र एवं राज्य सरकारों के बीच विधायी शक्तियों के विभाजन–संबंधी उपबंध है। श्रम–संबंधी विधान बनाने के विषयों को संघ–सूची समवर्ती सूची तथा राज्य–सूची तीनों में रखा गया है, लेकिन इनमें अधिकांश महत्त्वपूर्ण विषय समवर्ती सूची में रखे गए है। संघ–सूची में उल्लिखित विषयों पर केवल संसद ही कानून बना सकती है। समवर्ती सूची में उल्लिखित विषयों पर संसद और राज्यों के विधानमंडल दोनों कानून बना सकते है। राज्य–सूची के विषय राज्य विधानमंडलों के अधिकार–क्षेत्र में आते हैं। संघ एवं समवर्ती सूचियों में उल्लेखित विषयों में मुख्य हैं – औद्योगिक संबंध, नियोजन, श्रम–प्रबन्ध–सहयोग, मजदूरी और कार्य की अन्य दशाओं का विनियमन, सुरक्षा, श्रम–कल्याण, सामाजिक सुरक्षा, श्रम–विवाद, प्रशिक्षण तथा सांख्यिकी। इन विषयों के संबंध में केन्द्र सरकार राष्ट्रीय नीतियाँ निर्धारित करती है तथा रेलवे, खानों, तेलक्षेत्रों, बैंकिग और बीमा, मुख्य पतनों और गोदियों तथा केन्द्रीय सरकार के उपक्रमों के संबंध में इन नीतियों का कार्यान्वयन भी करती है। अन्य नियोजनों में श्रम–नीतियों का क्रियान्वयन मुख्यतः राज्य सरकारों का दायित्व है। केन्द्र सरकार राज्य सरकारों के श्रम–सम्बन्धी कार्यकलाप को समन्वित करती है तथा आवश्यकतानुसार उन्हें परामर्श और निदेश देती है। श्रम–विधानों के कार्यान्वयन तथा श्रम–सम्बन्धी अन्य बातों के निष्पादन के लिए केन्द्रीय एवं राजय दोनों स्तरों पर प्रशासनिक तंत्रों की व्यवस्था की गई है। इन तंत्रों के कार्यो का संक्षिप्त वितरण निम्नलिखित है।

केन्द्र सरकार का श्रम–प्रशासन

केन्द्र सरकार के श्रम–प्रशासन का दायित्व श्रम–मंत्रालय का है। इस मंत्रालय में मुख्य मंत्रालय (सचिवालय) के अतिरिक्त संबद्ध कार्यालय, अधीनस्थ कार्यालय, स्वायत्त संगठन, न्यायनिर्णयन निकाय तथा विवाचन निकाय हे।

1. श्रम–मंत्रालय (सचिवालय)

श्रम–मंत्रालय का सचिवालय भारत सरकार के श्रम–संबंधी सभी विषयों पर विचार करने वाला केन्द्र है। यह श्रम–नीतियों, श्रम–अधिनियमों के प्रवर्तन तथा श्रम–कल्याण के संवर्धन के संबंध में केन्द्रीय प्रशासनिक संयंत्र है। भारत सरकार के कार्यो के आबंटन–संबंधी नियमावली के अंतर्गत श्रम–मंत्रालय को आबंटित विषयों में निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण हैं –

1. **संघीय विषय** – (i) रेलवे के संबंध में मजदूरी का भुगतान, श्रम–विवाद, ऐसे कर्मचारियों के कार्य के घंटे जो कारखाना अधिनियम के दायरे में नहीं आते, तथा बालकों के नियोजन का विनियमन; (ii) गोदियों के संबंध में गोदी–श्रमिकों की सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कल्याण–उपायों का विनियमन, तथा (iii) खानों तथा तेलक्षेत्रों में श्रम एवं सुरक्षा का विनियमन।
2. **समवर्ती विषय** – जैसे – (i) कारखानों में श्रम की दशाओं का विनियमन; (ii) श्रम–कल्याण, जैसे – औद्योगिक, वाणिज्यिक तथा कृषि–श्रमिकों की दशाओं का विनियमन, भविष्य–निधि, परिवार–पेंशन, उपदान; नियोजकों का दायित्व और कर्मकार–क्षतिपूर्ति, स्वास्थ्य एवं बीमारी–बीमा, जिसमें अशंक्तता–पेंशन शामिल है; तथा वार्धक्य पेंशन; (iii) बेरोजगारी बीमा; (iv) श्रमसंघ, औद्योगिक एवं श्रम–विवाद; (v) श्रम–सांख्यिकी; (vi) ग्रामीण रोजगारी और बेरोजगारी को छोड़कर रोजगारी और बेरोजगारी; तथा (vii) शिल्पियों का व्यावसायिक और प्रौद्योगिक प्रशिक्षण।
3. **अन्य विषय** – जैसे – (i) दूसरे देशों के साथ हुई संधियों एवं समझौतों का कार्यान्वयन; (ii) रोजगार कार्यालय, (iii) अंतराष्ट्रीय श्रम संगठन, (iv) त्रिदलीय श्रम सम्मेलन; (v) खानों में सुरक्षा एवं कल्याण–सम्बन्धी कानूनों का प्रशासन; (vi) भारतीय गोदी श्रमिक अधिनियम, न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, बागान श्रमिक अधिनियम तथा उत्प्रवासन से संबद्ध कानूनों का प्रशासन; (vii) केन्द्रीय क्षेत्र के उपक्रमों में श्रम–कानूनों का प्रशासन; (viii) श्रम–सांख्यिकी; (ix) औद्योगिक न्यायधिकरणों, श्रम–न्यायालयों तथा राष्ट्रीय औद्योगिक न्यायाधिकरणों का प्रशासन; (x) मुख्य श्रमायुक्त के कार्यालय तथा कारखाना सलाह सेवा तथा श्रम–संस्थान महानिदेशालय का संगठन, (xi) भारत सरकार के श्रम–अधिकारियों की भर्ती, स्थानान्तरण और प्रशिक्षण; (xii) श्रमिक शिक्षा; (xiii) प्रबन्ध में श्रमिकों की भागीदारी; (xiv) औद्योगिक अनुशासन; (xv) मजदूरी–बोर्ड; (xvi) मोटर परिवहन कर्मकारों के कार्य की दशाओं का विनियमन; तथा (xvii) देश में श्रम–कानूनों का मूल्यांकन तथा कार्यान्वयन।

2. संबद्ध कार्यालय श्रम–मंत्रालय से संबद्ध कार्यालय है – (i) मुख्य श्रमायुक्त (केन्द्रीय) का कार्यालय, (ii) रोजगार और प्रशक्षिण महानिदेशालय, (iii) कारखाना सलाह सेवा और श्रम संस्थान महानिदेशालय, (iv) श्रम ब्यूरो। इन कार्यालय के कार्यो का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है –

1. मुख्य श्रमायुक्त (केन्द्रीय) का कार्यालय – मुख्य श्रमायुक्त (केन्द्रीय) का कार्यालय नई दिल्ली में हैं। इस कार्यालय के महत्त्वपूर्ण कार्य है – 1. केन्द्रीय क्षेत्र में औद्योगिक विवाद अधिनियम के अंतर्गत औद्योगिक विवादों की रोकथाम, उनकी जाँच करना तथा समझौते कराना, 2. केन्द्रीय क्षेत्र में अधिनिर्णयों तथा सुलहों तथा

मजदूरी–बोर्डो की सिफारिशों का प्रवर्तन कराना; 3. उन उद्योगों तथा प्रतिष्ठानों में श्रम–कानूनों का कार्यान्वयन कराना जिनके संबंध में केन्द्रीय सरकार समुचित सरकार है; 4. केन्द्रीय श्रमसंघ संगठनों की सदस्यता का सत्यापन करना; तथा 5. अनुशासन संहिता के उल्लघंन के मामलों की जाँच करना। यह कार्यालय केन्द्रीय क्षेत्र में जिन श्रम–कानूनों के प्रवर्तन का कार्य देखता है, उनमें मुख्य है– (i) मजदूरी भुगतान अधिनियम, (ii) बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम, (iii) औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, (iv) औद्योगिक विवाद–अधिनियम, (v) न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, (vi) गोदी कर्मकार (नियोजन का विनियमन), अधिनियम, (vii) प्रसूति हितलाभ अधिनियम, (viii) बोनस भुगतान अधिनियम, (ix) ठेका श्रम (विनियमन तथा प्रतिषेध) अधिनियम, (x) उपदान संदाय अधिनियम, (xi) समान पारिश्रमिक अधिनियम तथा (xii) अंतरराज्यीय उत्प्रवासी कर्मकार (नियोजन एवं सेवा–शर्त विनियमन) अधिनियम। मुख्य श्रमायुक्त (केन्द्रीय) के कार्यालय को केन्द्रीय औद्योगिक संबंध सयंत्र भी कहा जाता है।

इस कार्यालय का प्रधान श्रमायुक्त (केन्द्रीय) होता है। उनके अधीनस्थ क्षेत्रीय कार्यालय है। संगठन में एक संयुक्त मुख्य श्रमायुक्त, कुछ उप–श्रमायुक्त, कई क्षेत्रीय श्रमायुक्त, सहायक श्रमायुक्त और श्रम–प्रवर्तन अधिकारी है। मुख्य श्रमायुक्त की सहायता के लिए श्रम–कल्याण के मुख्य परामर्शी तथा निदेशक (प्रशिक्षण) भी नियुक्त है।

2. रोजगार और प्रशिक्षण महानिदेशालय – इस महानिदेशालय का मुख्य कार्य व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए सारे देश में नीतियाँ, मानक एवं पद्धतियाँ निर्धारित करना और रोजगार–सेवाओं का समन्वय करना है। महानिदेशालय अधिकारियों के प्रशिक्षण तथा कार्यक्रमों के मूल्यांकन के कार्य भी संपन्न करता है। इस कार्यालय के तत्वावधान में ही देशभर में रोजगार–कार्यालयों, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों तााि अन्य विशिष्ट संस्थाओं के जरिए रोजगार–सेवाओं एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण–सबंधी कार्यक्रम चलाए जाते हैं। रोजगार–कार्यालय तथा औद्योगिक प्रशिक्षण–संस्थानों के दिन–प्रतिदिन के कार्य राज्य सरकारों तथा संघ राज्य–क्षेत्रों द्वारा संचालित होते हैं। राष्ट्रीय व्यावसायिक प्रशिक्षण परिषद तथा केन्द्रीय शिशुक्षुता परिषद इसी महानिदेशालय के महत्वपूर्ण सलाहकार निकाय है। इस महानिदेशालय द्वारा संचालित महत्त्वपूर्ण प्रशिक्षण योजनाएं या कार्यक्रम है – शिल्पी प्रशिक्षण योजना, शिक्षु प्रशिक्षण योजना, शिल्प अनुदेशक प्रशिक्षण योजना, शिल्प अनुदेशक प्रशिक्षण योजना, अत्यधिक कुशल शिल्पीकार तथा पर्यवेक्षक प्रशिक्षण योजना, महिला प्रशिक्षण योजना, स्टाफ प्रशिक्षण एवं शोध तथा अनुदेशीय सामाधियों का विकास। इस संगठन का मुख्यालय नई दिल्ली में हैं।

3. कारखाना सलाह सेवा एवं श्रम संस्थान महानिदेशालय – इस महानिदेशालय के मुख्य कार्य कारखानों और गोदियों के कर्मकारी की सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कल्याण से संबद्ध है। यह महानिदेशालय कारखाना अधिनियम के कार्यान्वयन को समन्वित करता है

तथा अधिनियम के अधीन आदर्श नियम बनाता है। इसके कार्य गोदी कर्मकार (सुरक्षा, स्वास्थ्य तथा कल्याण) अधिनियम, 1986 के प्रशासन से भी संबद्ध है। महानिदेशालय औद्योगिक सुरक्षा, व्यावसायिक स्वास्थ्य, औद्योगिक स्वच्छता, औद्योगिक मनोविज्ञान और औद्योगिक शरीर क्रियाविज्ञान के क्षेत्रों में अनुसंधान कार्य भी करता है। यह औद्योगिक सुरक्षा तथा स्वास्थ्य–संबंधी क्षेत्र में प्रशिक्षण–कार्यक्रम भी चलाता है। महानिदेशालय के कार्यो में कारखाना–निरीक्षकों का नियमित प्रशिक्षण भी सम्मिलित है। महानिदेशालय द्वारा संचालित श्रम संस्थान मुंबई, कानपुर, कोलकाता और चेन्नई में अवस्थित है। इसका मुख्यालय मुंबई है।

श्रम–मंत्रालय में एक स्वायत राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद का भी गठन किया गया है। इस परिषद का मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय स्तर पर सुरक्षा–जागृति आंदोलन का विकास करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए परिषद कई प्रकार के शैक्षणिक एवं प्रशिक्षण–संबंधी क्रियाकलाप का संचालन करता है।

4. श्रम ब्यूरो – इस ब्यूरो का कार्यालय शिमला और चड़ीगढ़ में है। श्रम ब्यूरों के मुख्य कार्य है – 1. अखिल भारतीय आधार पर श्रम–सांख्यिकी का संग्रहण, सकेतन तथा प्रकाशन, 2. चुने हुए केन्द्रों के लिए श्रमिक वर्ग उपभोक्ता मूल्य सूचकांक तथा औद्योगिक श्रमिकों के लिए अखिल भारतीय उपभोक्ता–मूल्य–सूचकांक का निर्माण एवं अनुरक्षण करना, 3. कृषि–श्रमिकों के लिए उपभोक्ता–मूल्य–सूचकांक का निर्माण एवं अनुरक्षण करना, 4. औद्योगिक श्रमिकों के कार्य की दशाओं से सम्बद्ध अद्यतन आँकड़े अनुरक्षित करना, 5. श्रम–नीति के निर्माण के लिए श्रम–सम्बन्धी विशिष्ट समस्याओं के सम्बन्ध में शोध करना, 6. श्रम से सम्बद्ध विभिन्न पहलुओं पर रिपोर्ट, पुस्तिका तथा विवरणिका का प्रकाशन करना, 7. इंडियन लेवर ईयर बुक, इंडियन लेबर जर्नल, इंडियन लेबर स्टैटिस्टिक्स, तथा श्रम सांख्यिकी लघु पुस्तिका, का प्रकाशन करना, तथा 8. राज्य/जिला/इकाई के स्तरों पर श्रम–सांख्यिकी में प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करने के लिए आवश्यक सलाह देना। ब्यूरों के प्रधान इसके महानिदेशक होते हैं।

3. अधीनस्थ कार्यालय

श्रम–मंत्रालय के अधीनस्थ कार्यालय हैं – (क) खान सुरक्षा महानिदेशालय, तथा (ख) कल्याण आयुक्तों के कार्यालय।

1. **खान सुरक्षा महानिदेशालय –** इस कार्यालय को खान अधिनियम, 1952 के उपबंधों तथा उसके अधीन बनाए गए नियमों और विनियमों को लागू करने का दायित्व सौंपा गया है। इसका मुख्यालय धनवाद में है तथा इसके मंडलीय, क्षेत्रीय एवं उपक्षेत्रीय कार्यालय विभिन्न खान–क्षेत्रों में हैं। इसके महानिदेशक की अध्यक्षता में गठित खान–बोर्ड खान–प्रबन्धकों, सर्वेक्षकों तथा वोअरमेन के लिए आवधिक परीक्षाएँ लेता है और योग्यता–प्रमाणपत्र देता है। यह कार्यालय खानों

में हितलाभ अधिनियम, 1961 तथा भारतीय बिजली अधिनियम, 1910 के उपबंधों का खानों और तेल–क्षेत्रों में प्रवर्तन करता है।

2. **कल्याण आयुक्त के कार्यालय** – कल्याण आयुक्तों के कार्यालयों का मुख्य दायित्व विभिन्न श्रम–कल्याण निधि अधिनियमों के उपबन्धों का प्रवर्तन है। देश में इनके नौ कार्यालय अभ्रक, चूना–पत्थर और होलोमाइट, लौह अयस्क, मैंगनीज अयस्क, क्रोम अयस्क, खानों और बीड़ी तथा सिनेमा उद्योगों में नियोजित कर्मकारी के लिए स्थापित किए गए है। कल्याण आयुक्तों के कार्यालयों के तत्वाधान में चलाए जाने वाले श्रम–कल्याण के महत्वपूर्ण क्षेत्र है – आवासीय, मनोरंजनात्मक, चिकित्सकीय तथा शैक्षिक सुविधाएँ, पेयजल की आपूर्ति, छात्रवृतियों की व्यवस्था, तथा दुर्घटना–हितलाभ ये कार्यालय स्वीकृत योजनाओं के लिए राज्य सरकारों, स्थानीय प्राधिकारियों तथा कर्मचारियों को ऋण एवं सहायिकी भी उपलब्ध कराते हैं।

4. स्वायत्त संगठन

भारत सरकार के श्रम–मंत्रालय के अधीनस्थ स्वायत्त संगठन है – 1. कर्मचारी राज्य बीमा निगम, 2. कर्मचारी भविष्य–निधि संगठन, 3. वी0वी0 गिरी राष्ट्रीय श्रम संस्थान तथा 4. केन्द्रीय श्रमिक शिक्षा बोर्ड।

1. कर्मचारी राज्य बीमा निगम – इस निगम का गठन कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1952 के अधीन किया गया है। यह अधिनियम के उपबंधों के अनुसार बीमारी–हितलाभ, प्रसूति–हितलाभ, अशक्तता–हितलाभ, आश्रित–हितलाभ, अंत्येष्टि व्यय तथा चिकित्सा–हितलाभ की व्यवस्था के लिए उत्तरदायी है। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में तथा क्षेत्रीय कार्यालय देश के विभिन्न भागों में है।

2. कर्मचारी भविष्य–निधि संगठन – यह संगठन कर्मचारी भविष्य निधि एवं प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम, 1952 के प्रशासन के लिए उत्तरदायी है। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है तथा इसके शाखा कार्यालय देश विभिन्न भागों में है। इस संगठन द्वारा कर्मचारी भविष्य–निधि योजना, कर्मचारी निक्षेप संबद्ध बीमा योजना तथा कर्मचारी पेंशन योजना का संचालन होता है।

3. वी0वी0 गिरी राष्ट्रीय श्रम संस्थान – यह संथान नोएडा (उत्तर प्रदेश) में है। यह संस्थान एक पंजीकृत संस्थान है। इसके मुख्य कार्य संगठित तथा असंगठित दोनों क्षेत्रों में श्रम–सम्बन्धी समस्याओं पर कार्योन्मुखी अनुसंधान करना तथा ग्रामीण एवं शहरी दोनों क्षेत्रों में श्रमसंघ आंदोलन में निचले स्तर श्रमिकों तथा औद्योगिक संबंध, कार्मिक प्रबंध, श्रम–कल्याण आदि से संबद्ध विभिन्न स्तरों के अधिकारियों को प्रशिक्षण प्रदान करना है। संस्थान श्रम–सम्बन्धी विषयों पर कार्यशालाएँ एवं सेमिनार भी आयोजित करता है।

4. केन्द्रीय श्रमिक शिक्षा बोर्ड – इस कार्यालय का मुख्यालय नागपुर है इसके मंडलीय निदेशालय दिल्ली, कोलकाता, मुंबई और चेन्नई है तथा देश के कई भागों में इसके क्षेत्रीय, निदेशालय और केन्द्र स्थापित किए गए है। यह संगठन भी एक पंजीकृत संस्था है। बोर्ड श्रमसंघवाद की तकनीकों में प्रशिक्षण देने से संबद्ध योजना संचालित करता है और श्रमिकों को उनके अधिकारों, कर्त्तव्यों और दायित्वों से अवगत कराने के लिए शैक्षिक कार्यक्रम चलाता है। बोर्ड ने राष्ट्र–स्तरीय प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए मुंबई में भारतीय श्रमिक शिक्षा संस्थान की स्थापना भी की है। बोर्ड ग्रामीण शिक्षा तथा क्रियात्मक प्रौढ़ शिक्षा संबंधी कार्यक्रम का भी संचालन करता है।

5. न्यायनिर्णयन या अधिनिर्णयन निकाय

देश के कुछ औद्योगिक केन्द्रों या नगरों में केन्द्रीय सरकार द्वारा औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन उन स्थापनों के औद्योगिक विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए औद्योगिक अधिकरण और श्रम–न्यायालय गठित किए गए है, जिनके संबंध में समुचित सरकार केन्द्रीय सरकार है। ऐसे अधिकरण तथा श्रम–न्यायालय धनबाद, मुंबई, कोलकाता, आसनसोल, जयपुर, जबलपुर, नई दिल्ली, चण्डीगढ़, कानपुर तथा बंगलोर में स्थापित किए गए है। आवश्यकता पड़ने पर, केन्द्रीय सरकार राज्य सरकारों द्वारा गठित अधिकरणों की सेवाओं का भी उपयोग करती है। वर्तमान समय में अधिकरण–सह–श्रम न्यायलयों की संख्या 17 है।

6. विवाचन–निकाय

केन्द्रीय सरकार ने संयुक्त परामर्शदात्री तंत्र एवं अनिवार्य मध्यस्थता योजना के अधीन तथा सरकारी कर्मचारियों के वेतन तथा भत्ते, साप्ताहिक कार्य के घंटे तथा किसी वर्ग या श्रेणी के कर्मचारियों के लिए अवकाश–संबंधी विवादों या मतभेदों के निपटान के लिए विवाचन बोर्ड का गठन किया है। बोर्ड में एक अध्यक्ष और दो अन्य सदस्य होते हैं।

श्रम प्रशासन के लिए केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकार के तंत्रों में तालमेल के लिए निरंतर प्रयास किए जाते हैं। अधिकांश स्थितियों में, केन्द्रीय सरकार राज्य सरकारों के श्रम–संबंधी क्रियाकलाप को समन्वित करती है और आवश्यकतानुसार उन्हें परामर्श एवं निर्देश देती है।

3.5 राज्य सरकार का श्रम–प्रशासन

जैसा कि इस अध्याय के आरंभ में कहा जा चुका है, 'श्रम' से संबंद्ध अधिकांश महत्वपूर्ण विषय संविधान की समवर्ती सूची में है। सामान्यतः अधिकांश श्रम–कानून केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाए गए है, तथा उनका प्रवर्तन अपने–अपने अधिकार–क्षेत्र के स्थापनों में केन्द्रीय एवं राज्य सरकारें दोनों करती है, लेकिन कुछ श्रम–कानूनों के कार्यान्वयन का दायित्व राज्य सरकारों को भी सौंपा गया है। कुछ श्रम–कानून राज्य सरकारों द्वारा भी बनाए गए है और उनका प्रवर्तन भी राज्य सरकारों द्वारा ही होता है।

केन्द्रीय सरकार तथा अन्य राज्य सरकारों में भी श्रम–प्रशासन के लिए तंत्रों की व्यवस्था की गई है जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है।

1. सरकार पक्ष

राज्य में श्रम–प्रशासन का दायित्व 'श्रम, नियोजन एवं प्रशिक्षण' विभाग का है। सरकार पक्ष में इस विभाग के शीर्ष में मंत्री होते हैं। व्यवहार में, वे कैबिनेट स्तर के मंत्री होते है, और आवश्यकतानुसार उनकी सहायता के लिए राज्य–मंत्री तथा उप–मंत्री भी नियुक्त होते रहे है। इस पक्ष में प्रधान अधिकारी आयुक्त–सह–प्रधान सचिव होता है। आयुक्त सह प्रधान सचिव श्रम संबंधी सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों के निर्धारण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाहता है और अपने अधीनस्थ विभिन्न विभागों के कार्यो पर नियंत्रण रखता है तथा उनके कार्यकलाप को समन्वित करता है। वह श्रम–संबंधी नीतियों एवं कार्यक्रमों के संबंध में केन्द्रीय श्रम–मंत्रालय से संपर्क बनाए रखता है और उसके निर्देशों एवं सुझावों को बिहार में क्रियान्वित करने के लिए कदम उठाता है। आयुक्त–सह–प्रधान सचिव की सहायता के लिए आवश्यकतानुसार अपर प्रधान सचिव, तथा कुछ संयुक्त सचिव, उप–सचिव और अवर सचिव नियुक्त किए गए है। क्षेत्रों के प्रशासक सरकार की अनुमति या स्वीकृति के लिए अपने सुझाव या अभ्युक्तियाँ इसी तंत्र के पास भेजते हैं।

2. प्रशासनिक पक्ष

राज्य में श्रम–प्रशासन में लगे महत्त्वपूर्ण कार्यालय हैं – (क) श्रमायुक्त का कार्यालय, (ख) मुख्य कारखाना निरीक्षणालय, (ग) मुख्य बॉयलर निरीक्षणालय, (घ) कृषि श्रमिक निदेशालय, (ड़) मुख्य निरीक्षी पदाधिकारी का कार्यालय, (च) नियोजन एवं प्रशिक्षण निदेशालय, (छ) सामाजिक सुरक्षा निदेशालय, तथा (ज) निदेशालय, चिकित्सा–सेवाएँ (कर्मचारी राज्य बीमा योजना)। इनके अतिरिक्त राज्य से अधिनिर्णयन तंत्र तथा त्रिपक्षीय निकायों का भी गठन किया गया है। इन कार्यालयों के श्रम–प्रशासन–संबंधी महत्त्वपूर्ण क्रियाकलाप का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है–

1. श्रमायुक्त का कार्यालय – राज्य के श्रम–प्रशासन में श्रमायुक्त के कार्यालय की भूमिका अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण है। राज्य में अधिकांश श्रम–अधिनियमों के प्रशासन का दायित्व इसी कार्यालय पर है। इस कार्यालय के मुख्य उद्देश्य है – 1. हड़तालों, तालाबंदियों तथा अन्य औद्योगिक कार्यवाहियों की रोकथाम, 2. नियोजकों और कर्मचारियों के बीच उनके सामाजिक दायित्वों के संबंध में जागरूकता लाना, तथा 3. विभिन्न श्रम–कानूनों का प्रवर्तन। यह कार्यालय कई श्रम–अधिनियमों के प्रवर्तन का कार्य देखता है। इन अधिनियमों में अधिकांश केन्द्रीय अधिनियम है, लेकिन उनका प्रवर्तन अपने–अपने अधिकार क्षेत्रों में केन्द्रीय एवं राज्य सरकारें दोनों करती है। इन अधिनियमों में मुख्य हैं – 1. औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947, 2. श्रमसंघ अधिनियम, 1926, 3. औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946, 4. न्यूनतम मजदूरी

अधिनियम, 1948, 5. मोटर परिवहन कर्मकार अधिनियम, 1961, 6. कर्मकार क्षतिपूर्ति अधिनियम, 1923, 7. प्रसूति हितलाभ अधिनियम, 1961, 8. समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976, 9. बोनस भुगतान अधिनियम, 1965, 10. उपंदान संदाय अधिनियम, 1972, 11. ठेका श्रम (विनियमन और उत्पादन) अधिनियम, 1970, तथा 12. बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986। जिन केन्द्रीय श्रम कानूनों के प्रवर्तन का मुख्य दायित्व इस कार्यालय पर है, उनमें सम्मिलित है– 1. कारखाना अधिनियम, 1948, 2. बीडी और सिगार कर्मकार (नियोजन की शर्ते) अधिनियम, 1966, तथा 3. बॉयलर अधिनियम, 1923।

इस कार्यालय का प्रधान अधिकारी श्रमायुक्त है। श्रमायुक्त के अधीनस्थ एक अपर श्रमायुक्त तथा कुछ संयुक्त श्रमायुक्त मुख्यालय में पदस्थापित है। श्रमायुक्त के अधीन उप–श्रमायुक्त राज्य के विभिन्न प्रमंडलों तथा महत्त्वपूर्ण औद्योगिक केन्द्रों में और विशेष प्रयोजनों के लिए कार्यरत है। महत्त्वपूर्ण जिलों में तथा विशेष कार्यो के लिए सहायक श्रमायुक्त तथा कई क्षेत्रों में श्रम–अधीक्षक नियुक्त किए गए है। प्रखंड–स्तर पर बड़ी संख्या में श्रम–प्रवर्तन अधिकारियों की नियुक्ति की गई है, जिनका मुख्य कार्य कृषि–श्रमिकों तथा अन्य ग्रामीण श्रमिकों के संबंध में न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 का समुचित क्रियान्वयन सुनिश्चित करना है।

श्रमायुक्त औद्योगिक विवाद अधिनियम के अंतर्गत सुलह अधिकारी, श्रमसंघ अधिनियम के अधीन श्रमसंघों का रजिस्ट्रार तथा कुछ श्रम–अधिनियमों के अंतर्गत नियंत्रक प्राधिकारी तथा अपीलों प्राधिकारी, तथा कई श्रम–अधिनियमों के अधीन सारे राज्य का निरीक्षक होता है। वह अपने कार्यालय के स्थापन, विवाचन, पर्यवेक्षण तथा श्रम–प्रशासन–संबंधी कई अन्य कार्य भी संपन्न करता है। श्रमायुक्त के सामान्य अधीक्षण एवं पर्यवेक्षण में उप–श्रमायुक्त, सहायक श्रमायुक्त तथा श्रम–अधीक्षक अपने–अपने क्षेत्रों में औद्योगिक विवाद अधिनियम के अधीन सुलह अधिकारी के अतिरिक्त, विभिन्न श्रम–कानूनों के अंतर्गत निरीक्षक, तथा निरोक्षी पदाधिकारी की भूमिकाएँ निवाहते है। उप–श्रमायुक्तों को कृषि–श्रमिकों के श्रमसंघों के पंजीयन के लिए रजिस्ट्रार तथा कर्मकार क्षतिपूर्ति अधिनियम के अधीन क्षतिपूर्ति आयुक्त की शक्तियाँ भी प्रदान की गई है। श्रमायुक्त, अपर श्रमायुक्त तथा संयुक्त श्रमायुक्त क्षेत्रों में कार्यरत कार्मिकों के कार्यो का समय–समय पर्यवेक्षण करते हैं तथा विभिन्न श्रम–कानूनों के प्रभावी प्रवर्तन के लिए परामर्श तथा मार्गदर्शन देते रहते हैं।

मुख्य कारखाना निरीक्षणालय, मुख्य बॉयलर निरीक्षणालय तथा कृषि श्रमिक निदेशालय भी श्रमायुक्त के अधीक्षण में अपने दायित्व निबाहते है। श्रमायुक्त के कार्यालय का मुख्यालय पटना में है।

2. मुख्य कारखाना निरीक्षणालय – मुख्य कारखाना निरीक्षणालय का प्रधान मुख्य कारखाना–निरीक्षक होता है। उसके अधीन कुछ उप–मुख्य कारखाना–निरीक्षक तथा

कई कारखाना–निरीक्षक नियुक्त है। कारखाना–निरीक्षकों में कुछ चिकित्सकीय एवं रासायनिक निरीक्षक है। इस निरीक्षणालय का मुख्य कार्य राज्य में कारखाना अधिनियम का प्रवर्तन है। निरीक्षणालय कारखानों में अधिनियम के सुरक्षा, स्वास्थ्य, कल्याण आदि से संबद्ध उपबंधों का अनुपालन सुनिश्चित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाहता है। निरीक्षणालय को कारखानों में मजदूरी भुगतान अधिनियम, प्रसूति हितलाभ अधिनियम, बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम तथा मजदूरी भुगतान अधिनियम के प्रवर्तन का दायित्व भी सौंपा गया है। निरीक्षणालय उत्पादकता के संबंध में राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद के साथ सहयोग करता है। यह कारखानों तथा उनमें कार्यरत श्रमिकों की दशाओं के संबंध में आँकड़ों का संकलन भी करता है। मुख्य कारखाना–निरीक्षक श्रमायुक्त के नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण में अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह करता है।

3. मुख्य बॉयलर निरीक्षणालय – मुख्य बॉयलर निरीक्षणालय का मुख्य कार्य भारतीय बॉयलर अधिनियम का प्रवर्तन है। इस निरीक्षणालय का प्रमुख मुख्य बॉयलर निरीक्षक होता है, जो श्रमायुक्त के नियंत्रण में अपने दायित्व निवाहता है। मुख्य बॉयलर निरीक्षक की सहायता के लिए कुछ बॉयलर निरीक्षकों की नियुक्ति की गई है।

4. कृषि श्रमिक निदेशालय – इस निदेशालय का मुख्य कार्य कृषिक्षेत्र में न्यूनतम मजदूरी अधिनियम का प्रवर्तन करना है। इस कार्यालय का प्रमुख संयुक्त श्रमायुक्त की कोटि का निदेशक, कृषि श्रमिक होता है। मुख्यालय में निदेशक की सहायता के लिए उप–निदेशक तथा प्रखंडों में श्रम–प्रवर्तन–पदाधिकारी नियुक्त हे। निदेशक, कृषि श्रमिक, श्रमायुक्त के नियंत्रण तथा अधीक्षण में अपना दायित्व निवाहता है।

5. मुख्य निरीक्षी पदाधिकारी का कार्यालय – इस कार्यालय का मुख्य कार्य दुकान एवं प्रतिष्ठान अधिनियम का प्रवर्तन है। इस कार्यालय का प्रमुख उप–श्रमायुक्त की कोटि का मुख्य निरीक्षी पदाधिकारी होता है, जो श्रमायुक्त के अधीनस्थ अपने कर्तव्यों का निर्वाह करता है। क्षेत्रों में सहायक श्रमायुक्त तथा श्रम–अधीक्षक अधिनियम के प्रवर्तन का कार्य संपन्न करते हैं।

6. नियोजन एवं प्रशिक्षण निदेशालय – इस निदेशालय का मुख्य कार्य रोजगार–कार्यालयों, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों तथा अन्य विशिष्ट संस्थाओं के संचालन का कार्य संपन्न करना है। इस निदेशालय के कार्य केन्द्रीय सरकार के रोजगार और प्रशिक्षण महानिदेशालय द्वारा निर्धारित नीतियों, मानकों तथा पद्धतियों के अनुसार होते हैं। निदेशालय द्वारा राज्य के कई नगरों एवं क्षेत्रों में रोजगार कार्यालय संचालित होते हैं तथा विश्वविद्यालयों में रोजगार–सूचना–केन्द्रों तथा व्यावसायिक मार्गदर्शन ब्यूरो स्थापित किए गए है। निदेशालय रोजगार–बाजार– सूचनाएँ भी एकत्र करता है। इस कार्यालय का प्रधान निदेशक, नियोजन एवं प्रशिक्षण होता है। उसकी सहायता के लिए कुछ उपनिदेशक, सहायक निदेशक तथा कई रोजगार पदाधिकारी और सहायक रोजगार पदाधिकारी नियुक्त है।

इस निदेशालय का प्रशिक्षण विभाग शिक्षु अधिनियम, 1961 को क्रियान्वित करता है तथा राज्य के कुछ नगरों में औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं का संचालन करता है। इन प्रशिक्षण संस्थानों में विभिन्न व्यवसायों एवं शिल्पों में प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई है। इस निदेशालय पर बिहार सरकार द्वारा चलाई जानेवाली अनियोजन संकेतक भत्ता योजना के क्रियान्वयन का दायित्व भी रहा है।

7. सामाजिक सुरक्षा निदेशालय – इस निदेशालय का मुख्य कार्य केन्द्र एवं राज्य सरकार की सार्वजनिक सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का क्रियान्वयन है। इन सार्वजनिक सामाजिक सुरक्षा योजनाओं में मुख्य है– 1. राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना, 2. राष्ट्रीय परिवार हितलाभ योजना, 3. राष्ट्रीय प्रसूति हितलाभ योजना, 4. राज्य सामाजिक सुरक्षा पेंशन योजना, 5. बंधुआ श्रमिकों का पुनर्वासन तथा 6. अपंगों एवं भिक्षुकों के बीच वस्त्र वितरण योजना निदेशालय अंतराज्जीय उत्प्रवासी कर्मकार (नियोजन एवं सेवा–शर्ते) अधिनियम, 1976 के प्रवर्तन का कार्य भी देखता है। निदेशालय का प्रधान निदेशक, सामाजिक सुरक्षा होता है। उसकी सहायता के लिए मुख्यालय में उप–निदेशक तथा क्षेत्रों में सहायक निदेशक नियुक्त किए गए है। निदेशालय के अधिकांश कार्यक्रम जिलाधिकारों, अनुमंडल पदाधिकारियों तथा प्रखंड विकास पदाधिकारियों के जरिए संपन्न किए जाते हैं।

8. निदेशालय, चिकित्सा–सेवाएँ (कर्मचारी राज्य बीमा योजना)– कर्मचारी राज्य बीमा योजना के अन्तर्गत चिकित्सा–हितलाभ के संचालन का मुख्य दायित्व राज्य सरकारों का है। राज्य के श्रम–विभाग में निदेशालय, चिकित्सा–सेवाएं (कर्मचारी राज्य बीमा योजना) का गठन किया गया है। यह निदेशालय राज्य सरकार के स्वास्थ्य विभाग के सहयोग से कर्मचारी राज्य बीमा योजना के अंतर्गत स्थापित अस्पतालों के लिए चिकित्सकों तथा अन्य कार्मिकों की सेवाओं की व्यवस्था करता है। निदेशालय का प्रमुख निदेशक, चिकित्सा सेवाएं होता है जो कर्मचारी राज्य बीमा योजना के अंतर्गत चिकित्सा हितलाभ के कार्यान्वयन के कार्य को समन्वित और नियंत्रित करता है।

3. अधिनिर्णयन तंत्र

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन राज्य सरकार ने औद्योगिक न्यायाधिकरणों तथा न्यायालयों की भी स्थापना की है। इस अधिनिर्णयन प्राधिकारियों का मुख्य काम्र औद्योगिक विवादों का अधिनिर्णयन करना है।

4. त्रिपक्षीय निकाय

राज्य सरकार के श्रम विभाग के तत्वावधान में कुछ त्रिपक्षीय निकायों का भी गठन किया गया है। इनमें महत्वपूर्ण है– राज्य केन्द्रीय श्रम सलाहकार बोर्ड, मूल्यांकन तथा कार्यान्वयन स्थायी समिति, चीनी और जूट उद्योगों के लिए स्थायी समितियाँ तथा ठेका श्रमिकों और न्यूनतम मजदूरी से संबद्ध सलाहकार समितियाँ।

राज्य सरकार के श्रम विभाग ने राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में श्रम–कल्याण केन्द्रों की स्थापना की है। इन केन्द्रों के कार्यकलाप श्रम–कल्याण पदाधिकारियों की देखरेख में चलाए जाते रहे है। मुख्यालय–स्तर पर इन श्रम–कल्याण केन्द्रों के लिए संयुक्त श्रमायुक्त को प्रभार सौंपा गया है। इन केन्द्रों के श्रम–कल्याण कार्यकलाप में सम्मिलित है– प्रसवावस्था में परिचारिका सेवाएं, संगीत एवं मनोरंजन कार्यक्रमों का आयोजन, पुस्तकालय एवं वाचनालय, पारितपोषिक वितरण, सिलाई कला प्रशिक्षण, उत्पादन केन्द्र कार्यक्रम, श्रमिकों को मद्यपान–व्यसन, ऋणग्रस्तता आदि से मुक्ति पाने के लिए प्रशिक्षण, श्रमिकों के बच्चों के लिए पठन सामग्रियों का वितरण तथा औद्योगिक स्वास्थ्य सेवाएं। प्रारम्भ में श्रम–कल्याण केन्द्रों के कार्यकलाप बड़े उत्साह से चलाए गए, लेकिन विगत वर्षो में राशि की कमी के कारण ये कार्यकलाप सीमित पैमाने पर ही चलाए जाते हैं। वर्तमान समय में अधिकांश श्रम–कल्याण केन्द्र निष्क्रिय है।

3.6 श्रमिक शिक्षा

किसी भी विकासशील देश में आर्थिक विकास को तेजी से बढ़ाने के एक साधन के रूप में श्रमिकों की शिक्षा के महत्व को कम नहीं किया जा सकता। यह ठीक ही कहा गया है कि ''किसी औद्योगिक दृष्टि से विकसित देश का बड़ा पूंजी भण्डार इसकी भौतिक सामग्री में नहीं वरन् जांचे हुए निष्कर्षो से इकट्ठा किये गये ज्ञान तथा उस ज्ञान को प्रभावशाली ढंग से प्रयोग करने की योग्यता एवं प्रशिक्षण में होता है।'' अतः औद्योगिक शान्ति को कायम रखने, स्वस्थ श्रमिक प्रबन्धक सम्बन्धों को बढ़ाने, नागरिकता के गुणों को बढ़ाने, अधिकारों एवं जिम्मेदारियों की जानकारी बढ़ाने, श्रमिकों की एकता को मजबूत बनाने, आदि की आवश्यकता श्रमिक शिक्षा के एक व्यापक और विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों को जरूरी बनाते हैं। श्रमिकों की शिक्षा के प्रति अर्थशास्त्रियों का दृष्टिकोण कुछ समय से बहुत बदल गया है तथा हाल के अनुसन्धानों द्वारा शिक्षा या निपुणता निर्माण में विनियोग का आय की वृद्धि तथा आर्थिक विकास में योगदान का अलग से अनुमान लगाने की कोशिश की गयी है। इस सम्बन्ध में शुरूआत की कोशिश शुल्ज, डेनिसन, टिम्बरजेन तथा कुछ दूसरे अर्थशास्त्रियों द्वारा की गयी है।

उद्योग की तरह आधुनिक अर्थ में शिक्षा भी 19वीं शताब्दी के पहले नहीं थी। सामान्य रूप से पढ़ना और लिखना वैयक्तिक उपलब्धियां थीं। कारीगर, लुहार, आदि के व्यवसाय ज्यादातर पैतृक हुआ करते थे। गांवों में खेती खास व्यवसाय था। उच्च शिक्षा केवल धर्म से सम्बन्ध रखती थी। इस परिस्थिति में ही भारत में आधुनिक शिक्षा और उद्योग की शुरूआत हुई। इस देश में औद्योगीकरण 1850 के लगभग शुरू हुआ और इस तरह श्रमिकों के एक नये वर्ग का उदय हुआ जिसकी कोई ऐतिहासिक परम्परा नहीं थी। इस वर्ग की एक सामान्य विशेषता आधुनिक अर्थ में इसकी निरक्षरता थी क्योंकि यह उन लोगों में से कायम हुआ था जो गांवों में खेती करते थे। भारत में शाही श्रम आयोग (1930–31) ने लिखा था कि ''ज्यादातर औद्योगिक श्रमिक निरक्षर है। यह एक

ऐसी अवस्था है जो किसी भी दूसरे औद्योगिक महत्व के देश में नहीं पायी जाती।'' अतः आयोग ने यह सुझाव दिया था कि भारत में औद्योगिक श्रमिकों की शिक्षा पर खास ध्यान दिया जाना चाहिए। बहुत सी दूसरी समितियों एवं विशेषज्ञों ने भी इसके महत्व पर जोर दिया है। भारत में आधुनिक परिस्थितियों ने खास तौर पर आजादी के बाद हुई प्रगति ने श्रमिकों की शिक्षा की आवश्यकता को और भी बढ़ा दिया है।

1956 में श्रमिकों की शिक्षा का एक कार्यक्रम अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा शुरू किया गया जिसका उद्देश्य विभिन्न देशों को राष्ट्र निर्माण के कार्य में श्रमिकों को सक्रिय एवं जिम्मेदार साझेदारों के रूप में प्रशिक्षित करने के उनके प्रयत्नों को प्रोत्साहित करना था। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 24 श्रमिक संघ नेताओं एवं 13 देशों से दूसरे अनुभवी व्यक्तियों में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय द्वारा तकनीकी सहायता के विस्तृत कार्यक्रम की रूपरेखा के अन्तर्गत तथा तकनीकी सहायता पर नियुक्त डेनिश नेशनल कमेटी एवं डेनमार्क की दूसरी रुचि लेने वाली संस्थाओं के सहयोग से संगठित श्रमिकों की शिक्षा के सेमिनार में भाग लिया। इस सेमिनार में भारत में हिन्द मजदूर सभा के कोषाध्यक्ष तथा मैंसूर में INTUC के जनरल सेक्रेटरी ने भाग लिया। सेमिनार में भाग लेने वाले लोगों का श्रमिक शिक्षा का विचार अलग–अलग था, जो उनकी अलग परिस्थितियों और प्रशिक्षण के मुताबिक था। कुछ की राय में श्रमिक शिक्षा का आशय एक श्रमिक संघवादी के रूप में श्रमिकों की प्रशिक्षित किया जाना था। दूसरे लोग इसका अर्थ श्रमिकों के लिए, जिन्हें औपचारिक रूप से स्कूल में पढ़ने का मौका नहीं मिला था, मौलिक शिक्षा बढ़ाना था। कुछ और लोगों की राय में इसका आशय समाज के एक सदस्य तथा एक उत्पादक, उपभोक्ता अथवा नागरिक के रूप में श्रमिक की शिक्षा था। सेमिनार का एक महत्वपूर्ण लक्षण इन विभिन्न दृष्टिकोणों को मिलाकर श्रमिक शिक्षा का एक ऐसा विचार प्रस्तुत करना था जो भाग लेने वाले सभी प्रतिनिधियों को मान्य हो। वास्तव में इस तरह के एक अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनार के संगठन का विचार उस समय आया जब श्रमिक शिक्षा के बारे में बढ़ती हुई रुचि न केवल औद्योगिक दृष्टि से अल्प विकसित देशों में दिखायी दे रही थी वरन् उन देशों में भी बहुत जोर पर थी जहां इस तरह का शिक्षा कार्यक्रम कुछ समय से चलाया जा रहा था तथा विभिन्न देशों में भिन्न–भिन्न स्तरों पर श्रमिक शिक्षा के विचारों, दृष्टिकोणों एवं तरीकों का मूल्यांकन करने का प्रयत्न किया जा रहा था। कुछ नयी परिस्थितियों ने श्रमिक शिक्षा के महत्व को और अधिक बढ़ा दिया था जैसे श्रमिकों का बढ़ता हुआ महत्व उनकी जिम्मेदारियां औद्योगिक राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय जीवन में श्रमिक संघों का बढ़ता हुआ महत्व, श्रमिकों के लिए शिक्षा के बढ़ते हुए अवसर, आदि।

3.6.1 श्रमिक शिक्षा क्या है ?

श्रमिक शिक्षा पर विचार देश में प्रचलित शिक्षा के सन्दर्भ में किया जाता है, किन्तु स्कूल व कॉलेजों में दी जाने वाली शिक्षा और श्रमिक शिक्षा में एक आवश्यक

अन्तर यह है कि जब पहले की तरह शिक्षा शैक्षिक सिद्धान्तों और व्यवहारों से जो हमें आज तक विरासत में मिले हैं, सम्बन्धित है, श्रमिक शिक्षा श्रमिकों की आवश्यकताओं के अनुसार होती है। इन आवश्यकताओं में स्कूलों और कॉलेजों में पढ़ाये जाने वाले कुछ पाठ्यक्रम शामिल हो सकते हैं तथा सफेदपोश श्रमिकों को तो कुछ परीक्षाओं को पास करना भी आवश्यक होता है, किन्तु व्यापक रूप से सामान्य शिक्षा और श्रमिक शिक्षा में एक अन्तर रेखा खींची जा सकती है।

सामाजिक विज्ञानों की एन्साइक्लोपीडिया के अनुसार, ''श्रमिक शिक्षा दूसरी तरह की प्रौढ़ शिक्षा के विपरीत, श्रमिक को अपने सामाजिक वर्ग के एक सदस्य के रूप में न कि एक व्यक्ति के रूप में अपनी समस्याओं को हल करने में सहायता देती है।'' पूरी तरह से श्रमिक–शिक्षा श्रमिक की शैक्षिक आवश्यकताओं को विचार में लेती है, जैसे व्यक्तिगत विकास के लिए व्यक्ति के रूप में कुशलता एवं उन्नति के लिए श्रमिक के रूप में, एक सुखी एवं समन्वित सामाजिक जीवन के लिए एक नागरिक के रूप में तथा श्रमिक वर्ग के एक सदस्य के नाते उसके हितों की रक्षा करने के लिए किसी श्रमिक संघ के एक सदस्य के रूप में शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकताएं। दिसम्बर 1957 में जिनेवा में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने श्रमिक शिक्षा के विशेषज्ञों की एक सभा की जिसने बदलती हुई सामाजिक, आर्थिक एवं तकनीकी प्रगति के सन्दर्भ में यह महसूस किया कि श्रमिक शिक्षा का अन्तिम उद्देश्य, जहां कहीं भी और जिस दशा या स्थिति में श्रमिक रहते हों, उनका सुधार करना है।

बहुत से अल्प–विकसित देशों में यह महसूस किया जाता है कि एक वास्तविक श्रमिक आन्दोलन के लिए सजग, शिक्षित एवं आत्मनिर्भर श्रमिक संघवादियों का विकास करने तथा बाहरी नेताओं का चुनाव करने के बजाय श्रमिकों में से ही नेता तैयार करने की दृष्टि से श्रमिकों के लिए खास तरह के शिक्षा कार्यक्रमों की आवश्यकता है। भारत में श्रमिक शिक्षा कार्यक्रम में दूसरी बातों या गुणों के साथ–साथ यह बातें भी होनी चाहिए : (अ) श्रमिक संघ के पदाधिकारियों, सदस्यों एवं प्रतिनिधियों को संगठन के उद्देश्य बनावट एवं ढ़ंगों में, उनके कानूनी अधिकारों एवं जिम्मेदारियों से सम्बन्धित सामाजिक कानूनों एवं व्यवहार में, तथा उनके हितों पर असर डालने वाली बुनियादी एवं सामाजिक समस्याओं में प्रशिक्षित करना, (ब) सभाओं एवं दूसरी श्रमिक संघीय कार्यवाहियों में हिस्सा लेने की सुविधा के लिए श्रमिकों को लिखित एवं मौखिक विचार व्यक्त करने की शिक्षा देना और (स) लगातार अध्ययन के लिए उन्हें प्रशिक्षित करना।

3.6.2 भारत में श्रमिक–शिक्षा के उद्देश्य

1958 में शुरू की गयी श्रमिक शिक्षा उद्देश्य श्रमिकों को श्रमिक–संघ विचारधारा, सामूहिक सौदेबाजी तथा सम्बन्धित मामलों में निर्देशन देना जिससे जनतन्त्रीय आधार पर ठोस श्रमिक–संघ आन्दोलन के विकास को मदद मिल सके। योजना का लक्ष्य ''कुछ समय के अन्दर सामान्य शिक्षा की कमी होते हुए भी, एक अच्छी जानकारी रखने

वाले, रचनात्मक एवं जिम्मेदार औद्योगिक श्रमिक वर्ग को तैयार करना है जो श्रमिक संघों का ठीक–ठीक संगठन एवं संचालन कर सके, बाहरी सहायता पर व्यापक रूप से निर्भर न रहे और स्वार्थी तत्वों द्वारा शोषित न किया जा सके।'' सामान्य रूप से श्रमिक–शिक्षा योजना के उद्देश्य एवं लक्ष्य इस प्रकार हैं : (1) बेहतर प्रशिक्षण पाये हुए एवं ज्यादा प्रबुद्ध सदस्यों द्वारा ज्यादा मजबूत व प्रभावशाली श्रमिक–संघों का विकास करना; (2) श्रमिक वर्ग में से ही नेताओं को तैयार करना तथा श्रमिक–संघों के संगठन और प्रशासन में जनतन्त्रीय तरीकों और परम्पराओं को बढ़ाना; (3) संगठित श्रमिकों को एक जनतन्त्रीय समाज में अपना ठीक स्थान पाने तथा अपने सामाजिक एवं आर्थिक कार्यो और जिम्मेदारियों को प्रभावपूर्ण ढंग से पूरा करने में समर्थ बनाना; तथा (4) श्रमिकों को अपने आर्थिक वातावरण की समस्याओं तथा संघों के सदस्य एवं कर्मचारियों के रूप में नागरिकों के रूप में अपने विशेषाधिकारों एवं जिम्मेदारियों की ज्यादा जानकारी कराना। इस प्रकार आज के प्रमुख उद्देश्यों में राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में श्रमिकों के सब वर्गो को विवेकपूर्ण सहयोग के लिए तैयार करना, उनके अपने बीच में विस्तृत समझ का विकास करना तथा श्रमिकों के बीच नेतृत्व को प्रोत्साहन देना, आदि महत्वपूर्ण है।

एक विकासशील देश में इन उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का बहुत महत्व होता है। कोई भी श्रमिक जो अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों दोनों को समझता है, उद्योग और राष्ट्र दोनों के लिए उपयोगी हो सकता है। इस प्रकार की शिक्षा से विकसित होने वाला दृष्टिकोण उत्पादकता बढ़ाने, अनुपस्थिति कम करने, मजबूत एवं स्वस्थ श्रमिक संघ तैयार करने तथा अच्छे औद्योगिक सम्बन्धों का क्षेत्र बढ़ाने में बहुत सहायक होगा। इस तरह शिक्षा की यह योजना एक आत्म निर्भर एवं उचित जानकारी रखने वाला श्रमिक वर्ग, जो अपने हित के विषय में सोचने में समर्थ हो तथा अपने आर्थिक तथा सामाजिक वातावरण के प्रति सजग हो, तैयार कर सकेगी।

3.7 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में श्रम कल्याण के सिद्धान्त जैसे – श्रम कल्याण की आवश्यकता की स्वीकृति, श्रमिक, उनके विचार, उद्योग तथा समाज की अन्योन्याश्रयिता, अनुभूत आवश्यकताओं का सिद्धान्त, अनुभूत आवश्यकताओं में प्राथमिकता का सिद्धान्त, श्रमिकों के लचीले प्रकार्यात्मक संगठन के विकास का सिद्धान्त, श्रमिकों के सक्रिय सम्मिलन का सिद्धान्त, प्रभावपूर्ण कार्यक्रम के निर्माण का सिद्धान्त, सामुदायिक संसाधनों के अधिकतम सुदपयोग का सिद्धान्त, मार्गदर्शन हेतु समुचित विशेषज्ञ सहायता उपलब्धि का सिद्धान्त, सतत् मूल्यांकन एवं संशोधन का सिद्धान्त आदि का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया गया है।

श्रम कल्याण के केन्द्रीय एवं राज्य स्तर पर प्रशासन के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है जो विभिन्न बिन्दुओं के माध्यम से दिये गये है। श्रमिक शिक्षा की

परिभाषा, श्रमिक शिक्षा क्या है, तथा श्रमिक शिक्षा की योजनाओं एवं उद्देश्यों के बारे में संक्षिप्त रूप से विवरण प्रस्तुत किया गया है।

3.8 स्व–मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. श्रम कल्याण के सिद्धान्तों के बारे में लिखिए ?
2. केन्द्रीय स्तर पर श्रम कल्याण प्रशासन पर एक लेख लिखिए ?
3. राज्य स्तर पर श्रम कल्याण प्रशासन के रूपरेखा प्रस्तुत कीजिए ?
4. श्रमिक शिक्षा क्या है ?
5. श्रमिक शिक्षा के उद्देश्यों के बारे में एक संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए ?
6. श्रमिक शिक्षा की योजनाओं के बारे में लिखिए ?

3.9 पारिभाषिक शब्दावली

Labour Welfare	श्रम कल्याण	Funds	निधियां
Legal	विधिक	Failure	असफलता
Component	तत्व, अंग	Labour Welfare Officer	श्रम कल्याण अधिकारी
Need	टावश्यकता	Management	प्रबन्ध
Recruitment	भर्ती	Organization	संगठन
Recreational	मनोरंजनात्मक	Qualification	योग्यता
Responsibility	उत्तरदायित्व	Assistant	सहायक
Social Attributes	सामाजिक गुण	Provision	उपबन्ध

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वर्मा, आर0 वी0 एस0 समाज कार्य के क्षेत्र, न्यू रॉयल बुक डिपो, लखनऊ, पेज 542–546, वर्ष 1998।
2. सिन्हा एवं इन्दुबाला, श्रम एवं समाज कल्याण, भारती भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, पेज 231–238, वर्ष 2006।
3. भगोलीवाल एवं भगोलीवाल, श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक संबंध, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पेज–120–125, वर्ष 2001।

इकाई –4

श्रम कल्याण से सम्बन्धित महत्वपूर्ण उपाय
Significant Labour Welfare Measures

इकाई का रूपरेखा

4.1 परिचय
4.2 उद्देश्य
4.3 आवास का महत्व तथा आवास समस्या के पक्ष
4.3.1 खराब आवास व्यावस्था दोष
4.3.2 श्रमिक सहकारी कार्य समितियां
4.3.3 श्रमिक सहकारी कार्य समितियों की विषेशताएं
4.3.4 अन्य क्षेत्रो में सहभागिता
4.4 औद्योगिक आवास नीति तथा आवास कार्यक्रम
4.5 सार संक्षेप
4.6 स्वा मूल्यांकन हेतु प्रश्न
4.7 पारिभाषिक शब्दावली
4.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

4.1 परिचय

सभ्य जीवन में आवास एक मानवीय परिवार की पहली जरूरत है। यह उस भौतिक वातावरण का एक सबसे महत्वपूर्ण भाग है जो किसी व्यक्ति के स्वास्थ्य और उसकी भलाई पर लगातार असर डालता है। आवास व्यवस्था का मतलब आरामदायक आश्रय एवं ऐसे वातावरण व ऐसी सेवाओं की व्यवस्था करने से है जो श्रमिक को साल में हर समय स्वस्थ एवं खुश रखें। आवास व्यवस्था में नयी इमारतें नियोजित क्षेत्र में बनाना तथा मौजूदा मोहल्लों का सुधार करना भी शामिल है। दूसरे शब्दों में, जल–पूर्ति, जल निकासी, सड़के, प्रकाश, यातायात व संचार के साधन, मनोरंजन, क्रय–विक्रय, आदि के

केन्द्र भी आवास व्यवस्था में शामिल होते हैं। यह कहा गया है कि अच्छे आवासों का मतलब घरेलू जीवन, आनन्द एवं स्वास्थ्य की सम्भावना से है। बुरे घर गन्दगी, नशा, बीमारी, अनैतिकता, अपराध को जन्म देते हैं तथा अन्त में अस्पतालों, जेलखानों तथा पागलखानों की स्थापना जरूरी बनाते हैं जिनमें हम मानवीय परित्पक्तों को जो अक्सर समाज की अपनी ही उपेक्षा का परिणाम होते हैं, छिपाने की कोशिश करते हैं।

भारत में उद्योगवाद बहुत तेजी से बढ़ रहा है, आजकल का औद्योगिक श्रमिक शारीरिक रूप से अकुशल एवं अस्वस्थ है तो असहनीय आवास दशाएं इसके लिए कुछ कम जिम्मेदार नहीं है। आवास एवं स्वास्थ्य दोनों आपस में सम्बन्धित हैं और दोनों कुशलता पर असर डालते हैं, इस तरह पर्याप्त एवं उचित आवास व्यवस्था का महत्व बहुत ज्यादा है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- आवास की परिभाषा एवं समस्या के बारे में जान सकेगें।
- औद्योगिक आवास व्यवस्था के बारे में जान सकेगें।
- औद्योगिक आवास नीति के बारे में लिख सकेगें।
- औद्योगिक आवास से सम्बन्धित कार्यक्रमों के बारे में जान सकेगें।
- परिवार लाभ योजना के बारे में जान सकेगें।
- कार्मिकों के बच्चों के शिक्षा के बारे में जान सकेगें।
- सहकारी समितियों के बारे में लिख सकेगें।
- केन्टीन सुविधा के बारे में जान सकेगें।
- यातायात सुविधा के बारे में जान सकेगें।
- मनोरंजनात्मक सेवाओं के बारे में लिख सकेगें।

4.3 आवास का महत्व तथा आवास समस्या के पक्ष

औद्योगिक आवास की समस्या भारतीय औद्योगिक श्रमिकों की कुशलता एवं भलाई के लिए सबसे महत्वपूर्ण समस्या है। आवास की समस्या औद्योगिक विकास की एक उपज है। ज्यादातर औद्योगिक केन्द्रों में जनसंख्या तेजी से बढ़ गयी है तथा सीमित स्थान और भूमि की ऊंची कीमतों के कारण आवास व्यवस्था जनसंख्या वृद्धि के बहुत पीछे रह गयी है जिसमें भीड़–भाड़, गन्दगी एवं बीमारियां, आदि होने लगी है। औद्योगिक संस्थानों की स्थापना के लिए स्थानों के चुनाव पर किसी अधिकारों का नियन्त्रण न होने से भीड़–भाड़ एवं इसके नतीजे और भी बढ़ गये है क्योंकि ज्यादातर श्रमिक अपने काम की जगह के पास रहने के लिए उत्सुक होते हैं और नगरों के केन्द्र में ही मकान

तलाश करते हैं जहां पहले से ही मकानों की कमी महसूस की जा रही है। अतः आवास सम्बन्धी दशाएं देश के महत्वपूर्ण शहरी औद्योगिक क्षेत्रों में धीरे–धीरे बिगड़ती गयी है।

आवास व्यवस्था सबसे महत्वपूर्ण सार्वजनिक उपयोगिता एवं सामाजिक सेवाओं में से है। यह जीवन की जरूरत है जिस पर राष्ट्रीय योजना के एक अभिन्न एवं अनिवार्य अंग के रूप में ध्यान देना चाहिए। एक व्यापक अर्थ में आवास को रिहायशी क्षेत्रों के इस ढंग से विकास के साथ विचार में लिया जाता है जिससे व्यक्तियों के लिए मनोरंजन सम्बन्धी एवं सामाजिक कार्यकलापों की सुविधाओं सहित सुन्दर और स्वस्थ वातावरण में साफ सुधरे घर मिल सकें। नियोजन का सम्बन्ध समाज की विभिन्न आवश्यकताओं के मुताबिक उपलब्ध भूमि के बंटवारे से होता है जिसमें रिहायशी एवं औद्योगिक क्षेत्रों की व्यवस्था तथा आने–जाने के लिए चौड़े मार्गो, पार्को व बगीचों, आदि के लिए स्थान तथा भविष्य में विकास की व्यवस्था शामिल है। इस प्रकार भूमि के बंटवारे के नियोजन तथा आवासों के विकास का प्रयास एक साथ स्वास्थ्यप्रद रहन–सहन के लिए उपयुक्त दशाएं पैदा करके भौतिक वातावरण को बदलने का उद्देश्य प्राप्त करना होता है। आधुनिक अर्थ में आवास व्यवस्था का विकास केवल मकानों, आदि का विस्तार मात्र नहीं है। इसकी एक निश्चित शुरूआत और अन्त तथा दिखायी देने वाला स्वरूप होता है। एक भाग दूसरे भाग से सम्बन्धित होता है तथा हर भाग एक निश्चित प्रयोग में लाया जाता है। यही नहीं, आधुनिक आवास व्यवस्था हर घर के लिए कुछ न्यूनतम सुविधाओं की व्यवस्था करती है जैसे आर–पार सम्वातन सूरज की धूप, हर खिड़की से शान्त एवं अच्छा दृश्य दिखायी देना, काफी गोपनीयता और जगह तथा जरूरी सफाई सुविधाएं, पास में बच्चों के लिए खेलने की जगह, आदि। साथ ही ऐसे घर एक ऐसी कीमत पर मिलने चाहिए जो कि औसत आय या कम आय के नागरिक चुका सकें।

औद्योगिक आवास व्यवस्था एक त्रिपक्षीय समस्या है। **प्रथम,** यह एक सामाजिक समस्या – गन्दी बस्तियां बहुत ज्यादा भीड़–भाड़ के प्रमुख केन्द्र है क्योंकि बिल्कुल नीचे वर्ग के लोग उनमें इकक्ठा होते हैं। मद्रास की चैरियां, कानपुर के अहाते, कलकत्ते की बस्तियां और बम्बई व अहमदाबाद की चालें विश्व के दूसरे देशों की गन्दी बस्तियों से भी ज्यादा गन्दी है। यही नहीं, बड़े औद्योगिक केन्द्रों में श्रमिक जनसंख्या का घनत्व बहुत ऊंचा होता है क्योंकि जनसंख्या की वृद्धि नगरों में नयी आवास–व्यवस्था के विकास को बहुत ज्यादा पार कर गयी। **द्वितीय,** यह एक आर्थिक समस्या है। आवास व्यवस्था का व्यक्तियों के स्वास्थ्य तथा उसके द्वारा उनकी कार्यकुशलता एवं उत्पादकता पर एक गहरा असर पड़ता है। गन्दी आवास दशाएं औद्योगिक स्वास्थ्य, आदि को गम्भीर नुकसान पहुंचाती है। **तृतीय,** यह शहरी विघटन एवं अस्त–व्यस्त विकेन्द्रीकरण की नागरिक समस्या है।

4.3.1 खराब आवास व्यवस्था के दोष

भारत में औद्योगिक श्रमिकों की शारीरिक अस्वस्थता एवं अकुशलता काफी हद तक पायी जाने वाली असन्तोषप्रद एवं असहनीय आवास दशाओं के कारण है। औद्योगिक श्रमिकों के जीवन–स्तरों को उठाने का कोई भी प्रयास तब तक सफल नहीं होगा जब तक कि आवास समस्या जल्दी से जल्दी न सुलझायी जाय। खराब आवास व्यवस्था एक कुचक्र का सिर्फ एक अंग है जिसके दूसरे अंग है नशाखोरी, गरीबी, गन्दगी और गैर–जानकारी। इनमें से खराब आवास व्यवस्था श्रृखला में वह कड़ी है, जिसे आसानी से तथा सबसे ज्यादा स्थायी लाभों सहित तोड़ा जा सकता है। अतः यह सभी कड़ियों में सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है जिस पर समाज–सुधारकों को ध्यान देना चाहिए। स्पष्ट रूप से खराब आवास व्यवस्था स्वास्थ्य एवं जीवन के लिए बहुत हानिकारक है। (1) अंधेरे और दूषित संवातन वाले क्वार्टरों में लोगों की भीड़–भाड़ औद्योगिक शहरों में तपेदिक फैलने का सबसे महत्वपूर्ण कारण है। शहर में एक औसत श्रमिक के मकान में कमरे अन्धकारपूर्ण होते हैं, खुली जगह की कमी होती है तथा वायुमण्डल गर्द और गन्दगी से भरा रहता है। ऐसी परिस्थितियों में रहने से थके हुए श्रमिक इस रोग के आसानी से शिकार बन जाते हैं। जनसंख्या घनत्व, गन्दगी, शुद्ध वायु की कमी और तपेदिक के रोग में एक निश्चित सम्बन्ध होता है। (2) भीड़–भाड़ बच्चों के स्वास्थ्य पर बुरा असर डालती है। अतः खराब आवास की एक बड़ी बुराई बड़े शहरों की गन्दी बस्तियों में भारी संख्या में शिशु मृत्यु–दर है। (3) भीड़–भाड़ वाले रिहायशी मकानों का श्रमिकों और इनके परिवारों के न सिर्फ शारीरिक वरन् मानसिक विकास पर भी खराब असर पड़ता है। समाज के मनोबल पर आवासी दशाओं का एक सीधा असर देखा गया है। अस्वास्थ्यकर एवं अनाकर्षक आवास दशाएं श्रमिकों को अपने परिवार गांवों में ही छोड़ने तथा शहरों में अकेले रुकने के लिए मजबूर करती हैं जिससे स्त्रियों औश्र पुरुषों के अनुपात में विषमता हो जाती है जो खुद कोई बुराई नहीं है वरन् निश्चय ही यह विभिन्न सामाजिक बुराइयों का एक कारण है। (4) छोटे–छोटे मकानों में भयंकर भीड़–भाड़ एवं असमान स्वाभाव के लोगों का जमाव होने से नैतिक एवं सामाजिक पतन बढ़ा है। चूंकि स्त्री–पुरुषों के अलग–अलग रहने की ठीक व्यवस्था नहीं है, जो सभ्य स्तरों के मुताबिक शिष्टता के लिए बहुत जरूरी है, इसलिए शहरों में रहने वाले श्रमिकों की नवयुवती पत्नियों एवं पुत्रियों के सामने बड़े नैतिक खतरे होते हैं। नशाखोरी और रतिरोग बहुत प्रचलित हो गये हैं। बम्बई, कानपुर, कलकत्ता जैसे नगरों में अपराधों की जिस तरह तेजी से वृद्धि हो रही है उससे नगरपालिकाओं और स्थानीय सरकारों को बड़ी चिन्ता हो गयी है। खराब आवास–व्यवस्था ने प्रायः श्रमिकों का मनोबल इतना गिरा दिया है कि आधुनिक वर्षो में, खासतौर से आजादी मिलने के बाद, श्रमिकों की मजदूरियों में व्यापक सुधार के साथ–साथ नशाखोरी, आदि में भी वैसी ही वृद्धि देखी गयी है। (5) अपर्याप्त एवं खराब आवास–व्यवस्था देश में औद्योगिक अशान्ति के लिए जिम्मेदार कारणों में से एक है। श्रमिकों के लिए एक सभ्य निवास की व्यवस्था

उद्योग में शान्ति को बनाये रखने के लिए, जो किसी भी देश की आर्थिक तरक्की के लिए बहुत जरूरी है, बहुत महत्वपूर्ण होती है। (6) खराब आवास दशाएं श्रम–शक्ति की स्थिरता एवं निपुणता पर भी एक बहुत खराब असर डालती हैं। भारतीय औद्योगिक नगरों में आवास दशाओं का सुधार, इस तरह एक बहुत जरूरी समस्या है।

4.3.2 श्रमिक सहकारी कार्य समितियाँ

श्रम सहकारी कार्य समितियाँ भी बहुत लोकप्रिय रही हैं और फ्रांस, इटली, पैल्स्टाइन और न्यूजीलैंड जैसे देशों में इनको पर्याप्त सफलता भी मिली है। ऐसी समितियाँ श्रमिकों के समूहों को रोजगार पर लगाने के लिये संगठित की जाती हैं और इनमें श्रमिक संयुक्त रूप से कार्य करने के लिये संगठित होते हैं। भारत में, अनेक राज्यों में श्रम ठेका तथा निर्माण सहकारी समितियों का संगठन किया गया है। इनका उद्देश्य है कि भूमिहीन श्रमिकों जैसे कमजोर वर्गो को जितना रोजगार अब प्राप्त है उससे अधिक तथा लगातार रोजगार उचित मजदूरी पर प्राप्त कराने में तथा ठेकेदारों द्वारा उनका शोषण रोकने में उनकी सहायता की जाये। ऐसी श्रमिक सहकारी समितियों के संगठन को प्राथमिकता दी जाती है, विशेष रूप से ग्रामीण निर्माण तथा सार्वजनिक निर्माण कार्यक्रमों के सम्बन्ध में। कृषि श्रमिक इन समितियों के द्वारा अपनी सौदा करने की क्षमता में वृद्धि कर सकते हैं और ठेके के श्रम के दोषों को दूर कर सकते हैं। सन् 1982–83 में श्रम ठेका तथा निर्माण समितियों की संख्या 16467, सदस्यता की संख्या 10.86 लाख तथा कार्यकर पूँजी 5054 लाख रु0 थी। इन समितियों द्वारा 155.74 मूल्य के कार्य किये गये। उड़ीसा, पंजाब, महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान और आन्ध्र प्रदेश में ऐसी सहकारी समितियों ने काफी प्रगति की है। अन्य राज्यों में भी काम आगे बढ़ाया जा रहा है। रेलों में, सन् 1991 में श्रम ठेका सहकारी समितियों की संख्या 225, उनकी सदस्य–संख्या 16296 तथा प्रदत्त शेयर पूँजी 20.84 लाख रु0 थी। इन समितियों को इस अवधि में 10.17 करोड़ रु0 के ठेके प्राप्त हुए थे।

सितम्बर 1962 में नागपुर में श्रम ठेका तथा निर्माण सहकारी समितियों की एक अखिल भारतीय गोष्ठी (सेमिनार) हुई। सेमिनार में श्रमिक सहकारी समितियों की महत्ता पर जोर दिया गया और कहा गया कि ऐसी समितियाँ विकास कार्यो के सम्पादन करने तथा श्रमिकों को उचित मजदूरी दिलवाने की उपयोगी साधन है। सेमिनार में ऐसी सहकारी समितियों के विकास के लिये अनेक सुझाव दिये गये, उदाहरणतः काम का आरक्षण, बयाना और जमानत की रकम की अदायगी से छूट, प्रारम्भिक अग्रिम धन की स्वीकृति, निविदाओं के सम्बन्ध में मूल्य अधिमान अथवा छूट और नियमित पाक्षिक अदायगियां आदि। अनेक राज्य सरकारों ने सिफारिशों को कार्यान्वित किया है। उड़ीसा, गुजरात, तथा केरल में इन श्रमिक सहकारी समितियों को बिना टेंडर माँगे ही 50000 रु0 के मूल्य का कार्य, पंजाब में सभी प्रकार के अकुशल कार्य, कर्नाटक में 25000 रु0 तक के कार्य, राजस्थान, दिल्ली, महाराष्ट्र में और केन्द्रीय सार्वजनिक निर्माण विभाग को

20000 रु0 के मूल्य के कार्य और आन्ध्र प्रदेश, हिमाचल प्रदेश तथा मणिपुर में 10000 रु0 तक के मूल्य के कार्य सौंपे जाते थे। तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल, उड़ीसा और राजस्थान में श्रमिक सहकारी समितियों का बयाने तथा जमानत की अदायगी से भी मुक्त कर दिया गया है किन्तु अन्य राज्यों में सीमित छूट प्रदान की गई है। कर्नाटक में 25 प्रतिशत अग्रिम राशि दी जाती है। इसके अतिरिक्त, श्रमिक सहकारी समितियों के टेण्डरों पर 5 प्रतिशत की छूट दी जाती है (यह छूट गुजरात तथा उड़ीसा में 50 हजार रु0 से लेकर 1 लाख रु0 तक के काम पर, राजस्थान में 20 हजार रु0 से लेकर 1 लाख रु0 तक के काम पर और महाराष्ट्र में 20 हजार रु0 से लेकर 2 लाख रु0 तक के काम पर दी जाती है)। श्रमिक सहकारी समितियों के लिये राष्ट्रीय स्तर पर एक सलाहकार बोर्ड की स्थापना की गई है। बोर्ड ने एक योजना तैयार की है जिसमें कुछ चुने हुए जिलों तथा क्षेत्रों में श्रमिक सहकारी समितियों के गहन विकास की व्यवस्था है। तृतीय आयोजना में भी श्रमिक सहकारी समितियों के विकास पर काफी जोर दिया गया और कहा गया है कि ये समितियाँ विकास कार्यो को लागू करने तथा रोजगार प्रदान करने का मुख्य साधन है।

इसके अतिरिक्त, वनों का उपयोग करने के लिये अनेक राज्यों में वन श्रमिक सहकारी समितियाँ बनाई गई है। राष्ट्रीय वन नीति सम्बन्धी प्रस्ताव में कहा गया है कि वन श्रमिक सहकारी समितियों को, जहाँ तक भी सम्भव हो सके, वनों का शोषण करना चाहिये। वन सहकारी समितियों पर एक कार्यकारी दल बनाया गया है जो विभिन्न प्रकार की प्रचलित वन समितियों के कार्यो से प्राप्त अनुभव की इस उद्देश्य से समीक्षा कर रहा है ताकि उनके तीव्र विकास के लिये अन्य सुझाव दिये जा सके। 1981–82 में वन श्रमिक सहकारी समितियों की संख्या 1369, सदस्यता 249000 और कार्यकर पूँजी 8571 लाख रु0 थी।

4.3.3 श्रमिक सहकारी कार्य समितियों की विशेषतायें

इस प्रकार की श्रमिक सहकारी कार्य समितियाँ श्रमिक व मालिक दोनों ही के लिये बहुत लाभदायक होती है। इन श्रमिक सहकारी कार्य समितियों की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं : (क) श्रमिक अपने साथ कार्य करने वालों को स्वयं छाँटते हैं तथा अपने नेता को चुनते हैं, (ख) श्रमिक अपनी सामूहिक श्रम की आय को अपनी इच्छानुसार बाँट लेते हैं, (ग) श्रमिकों को इस बात की स्वतन्त्रता रहती है िकवे जिस प्रकार चाहें कार्य करने की व्यवस्था कर सकते हैं। (घ) श्रमिक किसी बाह्म ठेकेदार की अधीनता में कार्य नहीं करते, वे कार्य को स्वयं तथा अपने उत्तरदायित्व पर करते हैं, (ड़) श्रमिक मालिक के निरीक्षण में कार्य नहीं करते। कार्य पूरा हो जाने के बाद मालिक केवल यह देखता है कि कार्य योजनानुसार किया गया है अथवा नहीं, (च) यदि कार्य उत्पादन के हिसाब से निर्धारित होता है तब उनको उजरत दर पर मजदूरी दी जाती है। ऐसी समितियों को कार्य सौंपने से मालिक को लाभ होता है क्योंकि एक तो कार्य

शीघ्र पूरा हो जाता है तथा दूसरे उसको ऊपरी खर्चो में बचत हो जाती है। मालिक को श्रमिकों में अनुशासन रखने का भार भी नहीं लेना पड़ता क्योंकि श्रमिक स्वयं ही कार्य को हाथ में ले लेते हैं और पूरा करते हैं।

4.3.4 अन्य क्षेत्रों में सहकारिता

कृषि के क्षेत्र में उत्पादन सहकारिता से तात्पर्य सहकारी खेती से है। परन्तु उसका विवेचन इस अध्याय के क्षेत्र की परिधि में नहीं आता। जहाँ तक श्रमिक सहसाझेदारी का सम्बन्ध है, यह भी उत्पादन सहकारिता से एक भिन्न समस्या है और यह उद्योग में प्रबन्धकों के साथ श्रमिकों के सहयोग से सम्बन्धित है। इस पर विचार 'लाभ सहभाजन' के अन्तर्गत अध्याय 14 के अन्त में किया जा चुका है। कमजोर वर्गो की कुछ अन्य सहकारी समितियाँ भी हैं, जैसे, रिक्शा खींचने वालों तथा रेहड़ी वालों की सहकारी समितियाँ, प्रिंटिग प्रेस, यातायात सहकारी समितियाँ, दुग्ध सहकारी समितियाँ, मछली पालन सहकारी समितियाँ और मुर्गीपालन सहकारी समितियाँ। इन सब आँकड़ों से पता चलता है कि समाज के कमजोर वर्ग अपने को अधिकाधिक रूप में सहकारी समितियों के रूप में संगठित करते जा रहे हैं। कमजोर वर्ग के लोगों, जैसे निर्माण श्रमिकों के लिए सहकारी समितियों के विकास के लिए एक केन्द्र प्रेरित योजना लागू की गई। आठवीं आयोजना में इस कार्य के लिए 10.5 करोड़ रु0 प्रावधान रखा गया है।

4.4 औद्योगिक आवास नीति तथा आवास कार्यक्रम

➢ **आवास व्यवस्था की राज्यकीय योजनायें**

औद्योगिक श्रमिकों की स्वास्थ्य एवं आवास सम्बन्धी दशाओं में सुधार किये जाने के महत्व पर काफी समय पूर्व से ही जोर दिया जाता रहा है। सबसे पहले सन् 1919 में औद्योगिक आयोग द्वारा इस पर जोर दिया गया था जिसने सुझाव दिया था कि श्रमिकों को आवास सम्बन्धी सुविधाएं मुहैय्या कराने के लिये मालिकों के दायित्व पर स्थानीय सरकारों की भूमिका अनिवार्य रूप से अधिग्रहण करना चाहिये। इसके बाद भारत में शाही श्रम आयोग ने 1931 में इस सम्बन्ध में आवाज उठाई और औद्योगिक श्रमिकों की आवास सम्बन्धी दशाओं में सुधार करने के बारे में अपनी सिफारिशें दी। इन सिफारिशों के कारण ही सन् 1894 में भूमि अधिग्रहण अधिनियम में सन् 1933 में सुधार किया गया। इस संशोधन के द्वारा किसी भी कम्पनी को यह अधिकार प्राप्त हो गया था कि वह अपने कर्मचारियों के लिए मकानों का निर्माण करने हेतु अथवा इस उद्देश्य से सम्बन्धित अन्य सुख सुविधायें मुहैया कराने के लिए किसी भी भूमि का अनिवार्य रूप से अधिग्रहण कर सकते हैं।

सन् 1952 में उपदान प्राप्त औद्योगिक आवास योजना बनाई गई जिसके अन्तर्गत केन्द्र सरकार को भूमि तथा भवन की लागत का 20 प्रतिशत उपदान के रूप में देना था, वशर्ते की शेष धनराशि मालिक दे। परन्तु इस सम्बन्ध में मालिकों का रूख उत्साह

बर्धक नहीं था। अतः सरकार ने अधिक उदार शर्तो पर वित्तीय सहायता देने का निश्चय किया और प्रथम पंचवर्षीय योजना में की गई सिफारिशों के अनुसार 1952 में एक नई उपदान प्राप्त औद्योगिक आवास योजना लागू की गई।

➢ **सरकार की उपदान प्राप्त औद्योगिक आवास योजना**

यह योजना सितम्बर 1952 से लागू हुई। अप्रैल 1966 में, इस योजना को औद्योगिक श्रमिकों एवं समाज के आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्गो के लिए एकीकृत उपदान प्राप्त आवास योजना के रूप में बदल दिया गया। इसके अन्तर्गत, भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों को और उनके माध्यम से अन्य ऐसी मान्यताएं प्राप्त एजेन्सियों को दीर्घकालीन व्याजमूलक ऋणों व उपदानों के रूप में वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है, जैसे कि वैधानिक आवास बोर्ड, स्थानीय निकाय, औद्योगिक मालिकों तथा श्रमिकों की सहकारी आवास समितियां। योजना के अन्तर्गत (क) सन् 1948 के कारखाना अधिनियम के अधीन आने वाले औद्योगिक श्रमिकों, (ख) सन् 1982 में खान अधिनियम की धारा 2 (ब) की परिधि में आने वाले खान श्रमिकों (कोयला, लोहा तथा अभ्रक खानों के श्रमिकों को छोड़कर) तथा (ग) समाज के आर्थिक दृष्टि से कमजोर अन्य वर्गो के लिये मकान बनाने की व्यवस्था है।

केन्द्रीय वित्तीय सहायता भूमि की कीमत सहित, मकान की अनुमोदित निर्माण लागत पर निर्भर होती है जिसका विवरण इस प्रकार है –

मान्यता प्राप्त अभिकरण	ऋण	डपदान
1. राज्य सरकारें, आवास बोर्ड तथा स्थानीय निकाय	50 प्रतिशत	50 प्रतिशत
2. औद्योगिक मालिक	50 प्रतिशत	25 प्रतिशत
3. पात्र श्रमिकों की रजिस्टर्ड सहकारी समितियां	65 प्रतिशत	25 प्रतिशत

उपदान प्राप्त औद्योगिक आवास योजना (अब एकीकृत योजना) की प्रगति सन्तोषजनक नहीं रही है तथा निर्धारित लक्ष्यों के मुकाबले इसकी प्राप्तियां एवं सफलताएं बहुत कम रही हैं।

सामाजिक आवास योजनायें

देश में निम्नलिखित आवास योजनायें चालू थी। प्रत्येक योजना के सामने वह वर्ष दिया है, जब से कि वह योजना आरम्भ हुई –

क्रमांक	योजना	वर्ष
1.	औद्योगिक श्रमिकों एवं समाज के आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्गो के लिए एकीकृत उपदान प्राप्त आवास योजना	1982
2.	कम आय वाले वर्ग के लिये आवास योजना	1984
3.	बागान श्रमिकों के लिये उपदान–प्राप्त आवास योजना (केवल 6 राज्यों में)	1986
4.	गन्दी बस्तियों की सफाई एवं सुधार की योजना	1986

5.	ग्राम आवासीय प्रायोजनाएं	1987
6.	मध्यम आय वाले वर्ग के लिए आवास योजना	1989
7.	सरकारी कर्मचारियों के लिए किराये सम्बन्धी योजना	1989
8.	भूमि अधिग्रहण एवं विकास योजना	1989
9.	ग्रामीण क्षेत्रों में भूमिहीन श्रमिकों के लिए आवास स्थल बनाम झोपड़ी निर्माण की योजना	1971

जुलाई 1982 से, बागान श्रमिकों के लिये उपदान प्राप्त आवास योजना (जोकि केवल केन्द्रीय क्षेत्र में लागू है) तथा भूमिहीन श्रमिकों के लिये आवास स्थल निर्माण की योजनाओं को छोड़कर, प्रचलित सामाजिक आवास योजनाओं को अब, आय को आधार मानकर, निम्न वर्गो में बांटा गया है – (क) आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्ग के लिये आवास योजना, (ख) कम आय वाले वर्ग के लिये आवास योजना, (ग) मध्यम आय वाले वर्ग के लिये आवास योजना, (घ) राज्य सरकार के कर्मचारियों के लिए किराये सम्बन्धी आवास योजना, और (ड़) भूमिहीन श्रमिकों के लिये ग्रामीण आवास स्थल बनाम निर्माण सहायता योजना।

राज्य सरकार के कर्मचारियों के लिए सन् 1989 में लागू की गई किराये सम्बन्धी आवास योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारी को उनके कर्मचारियों के लिए मकान बनवाने को ऋण दिये जाते हैं। एक अन्य योजना जो सन् 1989 में ही लागू की गई थी, भूमि अधिग्रहण तथा विकास योजना थी। यह योजना इस उद्देश्य से चालू की गई थी ताकि इसकी सहायता से राज्य सरकारें तथा संघशासित प्रदेश शहरी क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर भूमि का अधिग्रहण तथा विकास कर सकें और इच्छुक लोगों को भूमिखण्ड तथा अन्य सामुदायित सुविधाएं प्रदान कर सकें।

सन् 1984 में राष्ट्रीय भवन संगठन की स्थापना की गई। यह संगठन निर्माण तथा आवास मन्त्रालय का एक संलग्न कार्यालय था तथा आवास एवं भवन से सम्बन्धित तकनीकी मामलों के बारे में एक परामर्शदात्री एवं समन्वयकारी निकाय के रूप में कार्य करता है। यह संगठन आवास तथा भवन संबंधी अनुसंधानकर्ता है तथा भवन निर्माण कला में हुई ऐसी नवीनतम प्रगति की सूचना उपलब्ध कराता है। राष्ट्रीय भवन संगठन संयुक्त राष्ट्र संघ के क्षेत्रीय आवास केन्द्र के रूप में भी कार्य करता है। इसके अतिरिक्त, एक 'नगर तथा देश नियोजन संगठन' है जो राज्य सरकारों व संघीय क्षेत्रों को तकनीकी सलाह व सहायता देता है। नवम्बर 1960 से एक राष्ट्रीय भवन निर्माण निगम की स्थापना की गई है। यह निगम सरकार तथा उनकी विभिन्न एजेन्सियों की ओर से निर्माण कार्य करता है।

भवन अनुसंधान संस्थान तथा वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद का संरचनात्मक इंजीनियरिंग अनुसंधान संस्थान अच्छा कार्य कर रहे है। आवास क्षेत्र की ओर संस्थागत वित्त का प्रवाह तेज करने के लिए तथा आवास वित्त संस्थाओं को

बढावा देने तथा नियमित करने के लिए जुलाई 1988 में भारतीय रिजर्व बैंक के सहायक के रूप में राष्ट्रीय आवास बैंक की स्थापना की गई थी यह बैंक सामान्य जनता की बचतों को गतिशील करने के लिए गृह ऋण खाता योजना का संचालन कर रहा है और वाणिज्य बैंकों से सहायता प्राप्त करने के लिए पूनर्वित्तदाता योजना भी चला रहा है।

➢ परिवार लाभ योजनायें

कोई कर्मचारी किसी भी कारखाना अथवा किसी उद्योग में कार्य करता हेतु उसके कल्याण के लिये विभिन्न प्रकार की योजनायें संस्थान तथा राज्य द्वारा उसको प्रदान की जाती है। इन योजनाओं का प्रमुख उद्देश्य कर्मचारियों का समग्र विकास करना होता है। ये योजनायें कर्मचारियों के लिए व्यक्तिगत रूप में भी होती है तथा उनके परिवार के लाभ के लिए भी होती है। कर्मचारियों के परिवार के लाभ हेतु योजनायें अग्रलिखित है –

1. परिवार चिकित्सा सुविधायें – कर्मचारियों के परिवार को मिलने वाले लाभों में चिकित्सा सुविधायें महत्वपूर्ण स्थान रखती है। विभिन्न औद्योगिक संस्थानों एवं कारखानों में कार्यरत कर्मचारियों हेतु चिकित्सालय चहारदीवारी के अन्दर ही बने रहते है। इन चिकित्सालयों में कर्मचारी अपने परिवार के लिए चिकित्सा का लाभ ले सकते हैं। यदि गम्भीर बीमारी से ग्रसित परिवार का कोई सदस्य है तो उसे चिकित्सालयों द्वारा अन्यत्र संदर्भित कर दिया जाता है तथा उसके चिकित्सा के सारे खर्चे तथा आंशिक खर्चे कम्पनी प्रदान करती है।
2. परिवार भत्ता – कुछ कारखानों एवं उद्योगों में कर्मचारियों को परिवार साथ रखने पर परिवार भत्ता का लाभ दिया जाता है जिससे परिवार भत्ता के रूप में कर्मचारियों के वेतन में कुछ बढ़ोत्तरी कर दी जाती है।
3. परिवारिक छुट्टी – कुछ कारखानों एवं उद्योगों में कर्मचारियों को साल में एक बार सपरिवार भ्रमण हेतु किराया दिया जाता है अथवा कुछ किराया भत्ता प्रदान किया जाता है।
4. कर्मचारियों के बच्चों हेतु छात्रवृत्ति की योजना – किन्ही कारखानों तथा उद्योगों में कर्मचारियों के बच्चों को शिक्षा हेतु छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है। यह छात्रवृत्ति बच्चों को 18 वर्ष की अवधि तक प्रदान की जाती है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि उपरोक्त योजनायें कर्मचारियों के परिवार कल्याण हेतु चलाई जाती है जिससे कर्मचारियों के साथ–साथ उनके परिवार वालों का विकास हो सकें।

➢ कैन्टीन सुविधा

सारे संसार में इस बात को मान लिया गया है कि कैन्टीन हर औद्योगिक संस्था का एक आवश्यक अंग है। यह श्रमिकों के स्वास्थ्य, कार्यक्षमता तथा उनके हित की दृष्टि से अत्यधिक लाभदायिक होती है। एक औद्योगिक कैन्टीन के उद्देश्य हैं –

श्रमिकों को अपूर्ण व असंतुलित आहार के स्थान पर संतुलित आहार प्रदान कराना, सस्ता और स्वच्छ भोजन प्रदान करना और काम करने के स्थान के निकट ही विश्राम करने का अवसर देना, फैक्ट्री में कई घण्टे काम करने के बाद उनके काम के स्थान से आने जाने की कठिनाईयों को दूर करना और इस प्रकार उनके समय की बचत करना, भोजन एवं खाद्य सामग्री प्राप्त करने में जो कठिनाईयां होती है उनको दूर करना आदि। इसके अतिरिक्त, कैन्टीन द्वारा एक ऐसा मिलन स्थान प्राप्त हो जाता है जिसमें कारखाने के हर विभाग के श्रमिक परस्पर मिल सकते हैं, तथा जहां वे न केवल खाना खाते बल्कि बातचीत भी कर सकते हैं और विश्राम करके अपनी थकान दूर कर सकते हैं। इस प्रकार कैन्टीन का श्रमिकों के आत्म विश्वास तथा हौसलें पर अधिक प्रभाव पड़ता है। ''कैन्टीन की स्थापना की ओर ध्यान देना राज्य का विशेष कार्य माना जाना चाहिए और कैन्टीन का चलाना मालिकों द्वारा एक राष्ट्रीय निवेश समझना चाहिए।''

यूरोप और अमेरिका के देशों के श्रमिकों में कैन्टीन अत्यधिक लोकप्रिय है तथा ये पोषण व आहार विद्या पर प्रयोग करने वाली प्रयोगशालायें मानी जाती हैं। ये औद्योगिक कल्याण के एक साधन के रूप में निरन्तर प्रगति कर रही है किन्तु भारत में श्रमिकों तथा मालिकों ने कैन्टीनों द्वारा की गई मूल्यवान सेवाओं को नही पहचाना है। अधिकांश स्थानों में कैन्टीनें नहीं चालू की गई है तथा जहां हैं भी वे अधिकतर ठेके द्वारा चलाई जाती है, जो निजी चाय के दुकानों के समान भी अच्छी नही होती। ऐसी कैन्टीनों में सस्ता और अच्छा भोजन ही मिलता है और न ही उनका वातावरण स्वच्छ, स्वस्थ तथा आकर्षक होता है। ठेकेदार श्रमिकों के हित की अपेक्षा अपने लाभ की ओर अधिक ध्यान देते हैं। परिणामस्वरूप, दोपहर के भोजन को श्रमिक अपने साथ लाना उचित समझते हैं तथा कैन्टीनें श्रमिकों में लोकप्रिय नहीं हो पाई है।

एक कैन्टीन को सफलतापूर्वक चलाने के लिए कुछ विशेष बाते होनी आवश्यक हैं। कैन्टीन खुली, साफ तथा स्वच्छ होनी चाहिए और फैक्ट्री परिसर के अन्दर होनी चाहिए। उसमें मित्रता का वातावरण पैदा करने के लिए पूरा प्रयत्न होना चाहिए। कैन्टीन को लाभ के आधार पर नहीं चलाना चाहिए तथा वहां बनने वाली वस्तुएं अच्छे प्रकार की होनी चाहिए। कारखाने के प्रबन्धककर्ता भवन, मेज कुर्सी तथा चीनी मिट्टी के बर्तन आदि भी बिना मूल्य के दे सकते हैं तथा खाद्य वस्तुओं तथा स्टाफ के वेतन के लिए आर्थिक सहायता दे सकते हैं। यह उल्लेखनीय है कि कुछ मालिकों ने, जैसे – टाटा, लोहा और इस्पात कम्पनी, देहली कपड़ा मिल, बम्बई में लीवर ब्रदर्श तथा भारतीय चाय बाजार विस्तार बोर्ड ने अपने कर्मचारियों के लिए बहुत अच्छी कैन्टीनों की व्यवस्था की है। भारत सरकार ने औद्योगिक कैन्टीनों के महत्व को पूर्णतः स्वीकार किया है और विभिन्न कानूनों के अन्तर्गत अनिवार्य रूप से इनकी सुविधाएं उपलब्ध कराई है।

- **मनोरंजन सुविधाएं**

मनोरंजन की सुविधायें, बहुत ही महत्वपूर्ण और उपयोगी होती है। अज्ञानी श्रमिकों को शिक्षा व प्रशिक्षण देने में भी इनका काफी महत्व है। कारखानों और खानों में अधिक घण्टे काम करने में जो ऊब, थकान और शारीरिक क्लांति उत्पन्न हो जाती है, उनको मनोरंजन सुविधायें कम कर सकती है तथा श्रमिक के जीवन में प्रसन्नता और शान्ति लाने में सहायक सिद्ध होती हैं। साधारण औद्योगिक श्रमिक धूल, शोर तथा गर्मी से परिपूर्ण वातावरण में कार्य करता है तथा ऐसे भीड़–भाड़ वाले अस्वच्छ मकानों में रहता है जिन्हें काल कोठरी कहना अतिशयोक्ति न होगा। श्रमिक, जो गाँव से आते हैं, अपने आपको नगरीय या औद्योगिक वातावरण के अनुकूल बनाने में कठिनाई अनुभव करते हैं, जिस स्थान पर वे कार्य करते हैं, वह उनके घरों से प्रायः दूर होता है और वे अपने मित्रों व सम्बन्धियों आदि से महीनों दूर रहते हैं। साधारण सामाजिक जीवन से वे इस प्रकार वंचित रहते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि अधिकांश श्रमिक कई दुर्गुणों के शिकार हो जाते हैं। उद्योगों में अधिक यन्त्रीकरण हो जाने से तथा कार्य के घण्टों में कमी हो जाने से श्रमिकों का समय अब पहले की अपेक्षा अधिक खाली रहता है। यह बात महत्वपूर्ण है कि इस खाली समय का किस प्रकार उपयोग किया जाता है। यह कहा जाता है कि किसी भी सभ्यता तथा कार्य–क्षमता की कसौटी यही है कि उस देश में खाली समय का उपयोग किस प्रकार किया जाता है। कार्य दिन की समाप्ति पर तथा दोपहर को विश्राम के घण्टे आदि में जो खाली समय रहता है उसमें मनोरंजन सुविधाओं की व्यवस्था में श्रमिकों के स्वास्थ्य में उन्नति होगी तथा उनके ज्ञान में वृद्धि होगी तथा एक स्थायी और सन्तोषी श्रमिक वर्ग बन सकेगा। इस भाँति मालिक–मजदूर सम्बन्ध भी सौहार्द्रपूर्ण होगे और उत्पादिता में वृद्धि होगी।

1924 के अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन ने श्रमिकों के अवकाश के समय का उपयोग करने हेतु कुछ सुविधाओं में वृद्धि करने के लिये एक सिफारिश की थी। यह विषय अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन के 1947 के 30 वें अधिवेशन और 1986 के 39 में अधिवेशन द्वारा फिर विचार के लिए रखा गया। 1986 के अधिवेशन ने, संस्थानों में या उनके समीप श्रमिकों के लिये मनोरंजन की सुविधाओं की महत्ता पर बल दिया और इस बात की सिफारिश की कि इन सुविधाओं के प्रशासन में श्रमिकों का भी हाथ होना चाहिये।

भारत में, राज्य द्वारा अथवा मालिकों द्वारा मनोरंजन सुविधाओं पर बहुत कम ध्यान दिया गया है, यद्यपि, जैसा कि ''मालिकों के कल्याण कार्य'' के अन्तर्गत उल्लेखन स्पष्ट है, कई स्थानों पर अच्छे कार्य भी किये गये हैं। सरकार ने भी अनेक राज्यों के श्रम–कल्याण केन्द्रों में मनोरंजन सुविधाओं की व्यवस्था की है। कुछ मालिक शिकायत करते हैं कि श्रमिकों में क्लब लोकप्रिय नहीं है। इसका कारण यह है कि इन केन्द्रों में या तो अच्छा प्रबन्ध नहीं होता या इनमें टेनिस, बिलियार्ड आदि जैसे आधुनिक खेलों की व्यवस्था होती है जिन्हें खेलना श्रमिकों की क्षमता के बाहर है। जहां कहीं भी उचित

मनोरंजन की व्यवस्था है तथा प्रबन्ध ठीक है, वहां मनोरंजन सुविधायें श्रमिकों तथा उनके परिवारों में बहुत लोकप्रिय सिद्ध हुई हैं।

➢ **चिकित्सा सुविधायें**

चिकित्सा सुविधाओं और स्वच्छ वातावरण का जीवन में अत्यधिक महत्व है। औद्योगिक मजदूरों के स्वास्थ्य का महत्व स्वयं उनके लिये नहीं है अपितु उसका सम्बन्ध साधारणतः औद्योगिक विकास व प्रगति से भी है। बीमारी तथा श्रमिकों की शारीरिक दुर्बलता अनेक बुराइयों का कारण बन जाती है। इन्हीं के कारण अनुपस्थिति होती है, नैतिकता गिर जाती है तथा समय की पाबन्दी नहीं हो पाती। परिणामस्वरूप उत्पत्ति कम होती है, काम बिगड़ जाता है तथा मालिक मजदूरों के सम्बन्ध खराब हो जाते हैं। भारत में श्रमिकों के स्वास्थ्य पर कई बातों का बुरा प्रभाव पड़ता है, जैसे – अस्वस्थ जलवायु में काम करना, कारखानों में अस्वास्थ्यकर दशा गर्म देशों के रोग और श्रमिकों की अज्ञानता व निर्धनता के कारण बीमारी, काम करने के अधिक घण्टे, कम मजदूरी तथा उनकी प्रवासिता, घटियां तथा अपर्याप्त भोजन तथा रहन–सहन की अस्वास्थ्यकर दशाएं आदि। इसलिये श्रमिकों के लिये देश में चिकित्सा सुविधाओं की व्यवस्था करना एक महत्वपूर्ण कार्य है।

अब कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम के अन्तर्गत चिकित्सा सुविधाएं दी जा रही हैं। कर्मचारी राज्य बीमा हितलाभ देने की व्यवस्था की गई है। अधिनियम फिलहाल कारखानों में लागू है, लेकिन सरकार को इसे अन्य प्रतिष्ठानों में भी लागू करने की शक्ति प्राप्त है। बीमारी–हितलाभ बीमाकृत कर्मचारियों को बीमारी की निर्धारित अवधि के लिए सावधिक नकद भुगतान के रूप में दिया जाता है। बीमारी–हितलाभ के अधिकारी होने के लिए बीमाकृत कर्मचारी को निर्धारित दर से तथा निर्धारित अवधियों के लिए अंशदान का चुकता कर देना आवश्यक होता है। बीमारी हितलाभ की दर केन्द्र सरकार द्वारा निर्धारित होती है। अधिनियम में कुछ विहित रोगों की स्थिति में विस्तारित बीमारी हितलाभ तथा वर्धित बीमारी हितलाभ देने की भी व्यवस्था है।

कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम के अधीन ही बीमाकृत कर्मचारियों और उनके परिवार के आश्रित सदस्यों के लिए चिकित्सा हितलाभ देने की व्यवस्था है। चिकित्सा हितलाभ के लिए भी कर्मचारी द्वारा अंशदान–संबंधी शर्तो को पूरा करना आवश्यक होता है। कुछ स्थितियों में अंशदान की शर्त के पूरी नहीं होने पर भी चिकित्सा हितलाभ दिया जा सकता है। चिकित्सा हितलाभ कई रूपों में दिया जा सकता है, जैसे– किसी औषधालय में बाह्म रोगी उपचार, बीमा चिकित्सक की निदानशाला में उपचार, अन्य संस्थाओं में उपचार, बीमाकृत कर्मचारियों के घर जाकर, या किसी अस्पताल या अन्य संस्था में भरती करके उपचार कराने के रूप में। चिकित्सा हितलाभ की व्यवस्था करने का मुख्य दायित्व राज्य सरकारों का है। लेकिन, कर्मचारी राज्य बीमा–निगम चिकित्सा

पर होने वाले व्यय का अधिकांश भार वहन करता है तथा सुसज्जित अस्पतालों की स्थापना और संकलन भी करता है।

अनसाधारण को मुफ्त चिकित्सा–सुविधाएं प्रदान करने के लिए देशभर में स्वास्थ्य सेवाओं की व्यापक व्यवस्था की गई है। अधिकांश चिकित्सा–सुविधाएं राज्य सरकारों द्वारा उपलब्ध कराई जाती है, लेकिन स्वास्थ्य संबंधी कई महत्वपूर्ण कार्यक्रम केन्द्रीय सरकार के तत्वावधान में भी चलाए जाते हैं।

➢ **बच्चों की शिक्षा**

भारत जैसे अशिक्षित देश में श्रमिकों और उनके बच्चों के लिए शिक्षा सुविधाओं की व्यवस्था करना एक महत्वपूर्ण समाज सेवा है। हमारे देश की अनेक कठिनाइयों का मूल कारण श्रमिकों में शिक्षा का अभाव है। शिक्षा की आवश्यकता और महत्ता औद्योगिक विकास के समय बहुत होती है, क्योंकि उद्योगों की स्थापना के समय कृषि व्यवसाय से उद्योगों में आने वाले श्रमिकों की संख्या बहुत होती है और उनको औद्योगिक तकनीक और कुशलता सीखनी पड़ती है। अगर सामान्य शिक्षा की नींव अच्छी नहीं होगी तो प्रशिक्षण में व्यय अधिक होगा और कठिनाई भी अधिक होगी। भारत में इस समय विभिन्न प्रकार के कुशल श्रमिकों का अभाव है। यदि शिक्षा तथा प्रशिक्षण की ओर विशेष रूप से प्रयत्न किये जाये तब ही इस अभाव की पूर्ति हो सकती है। श्रमिकों की शिक्षा का उद्देश्य केवल निरक्षरता दूर करना तथा औद्योगिक कार्य कुशलता में योग्यता प्राप्त करना ही नहीं है। शिक्षा का तात्पर्य केवल यह नहीं है कि मनुष्य को लिखना, पढ़ना हिसाब लगाना आ जाये। इसका उद्देश्य जीवन की समस्त बातों को सिखाना है, जिसमें औद्योगिक सामाजिक तथा व्यक्तिगत बातें भी होती है। सांस्कृतिक जीवन के विकास तथा रहन–सहन के स्तर में उन्नति के साथ–साथ श्रमिकों की विचार शक्ति का भी विकास होना चाहिये और उन्हें यह जानना चाहिये कि अपने संगठनों को किस प्रकार बनाया जाता है तथा अपनी समस्याओं, जैसे– काम करने के स्थानों पर कल्याण सुविधाओं की व्यवस्था करना आदि पर किस प्रकार विचार तथा कार्य किया जा सकता है। यह बात भी, कि श्रमिक किस सीमा तक कारखाने के प्रबन्ध में भाग ले सकते हैं तथा कार्य और रहने की दशाओं में किस सीमा तक उन्नति कर सकते हैं, इस बात पर निर्भर है कि शिक्षा द्वारा उनकी योग्यता का कितना विकास हुआ है। औद्योगिक शान्ति के लिए मालिक मजदूर समितियों की सफलता भी श्रमिकों की शिक्षा पर निर्भर है। आधुनिक मशीन उद्योग एक विशेष सीमा तक शिक्षा पर निर्भर है तथा अशिक्षित श्रमिकों के सहयोग से इसका निर्माण करना कठिन तथा खतरनाक है। श्री हेराल्ड बटलर का कथन है कि भारत के अधिकांश कारखानों में यह देखा गया है कि श्रमिक अपनी मशीनों के मालिक न होकर उनके दास बन जाते हैं। वे मशीनों को ठीक प्रकार से समझते भी नहीं और लापरवाही से प्रयोग करने के परिणामस्वरूप उन देशों की अपेक्षा जहां कर्मचारियों में यांन्त्रिक रूचि होती है अपने देश की मशीनें जल्दी खराब कर देते

हैं। हमारी पंचवर्षीय आयोजना की सफलता भी इस बात पर निर्भर करती है कि हमारे श्रमिक नये निर्माण के वातावरण को कहां तक समझते हैं और स्वयं को उसके अनुकूल बनाते है और उत्पादन बढ़ाने में कहां तक सहयोग देते हैं तथा देश की अर्थव्यवस्था में अपने स्थान को उचित प्रकार से समझते हैं। इस प्रकार श्रमिकों की शिक्षा के लिये विशेष रूप से प्रयत्न करने आवश्यक है।

इस प्रकार शिक्षा का अनेक कारणों से महत्व बहुत बढ़ जाता है। शिक्षा से ही श्रमिक अच्छे नागरिक बन सकते हैं। शिक्षा प्रसार से ही औद्योगिक सम्बन्धों में सुधार हो सकता है तथा श्रमिक यह समझ सकते हैं कि आधुनिक आर्थिक समस्यायें क्या हैं। शिक्षा से ही श्रमिकों में अनुशासन की भावना आ सकती है तथा उनकी विचार शक्ति तथा अविकसित गुण विकसित हो सकते हैं। मालिकों को अपने ही हित के लिये श्रमिकों की शिक्षा में रुचि लेनी चाहिये। अनेक जागरूक मालिकों ने श्रमिकों तथा उनके बालकों को अच्छी शिक्षा सुविधायें प्रदान की हैं। किन्तु वयस्क शिक्षा की सुविधायें देहली कपड़ों एवं जनरल मिल्स और उत्तर प्रदेश, प. बंगाल तथा महाराष्ट्र के राजकीय श्रम–कल्याण केन्द्रों को छोड़कर और कहीं अधिक सन्तोषजनक नहीं है। अहमदाबाद सूती कपड़ा मिल मजदूर परिषद के द्वारा भी वयस्कों के लिये रात्रि पाठशालायें चलाई जाती है। उड़ीसा तथा उत्तर प्रदेश की तरह अनेक राज्यों ने वयस्क शिक्षा की योजनायें भी बनाई है।

➢ यातायात सुविधा

वर्तमान युग अभियांत्रिक युग के नाम से जाना जा रहा है। जहां एक तरफ विभिन्न प्रकार की सुविधायें त्वरित गति से प्राप्त हो रही है वहीं एक तरफ विभिन्न प्रकार की घटनायें भी घटित हो रही है। उद्योगों तथा कारखानों में कार्यरत कर्मचारियों को अपने वाहनों से कार्य स्थल पर पहुंचने पर आकस्मिक घटनायें घटित हो जाती है। अतः आकस्मिक घटनाओं से बचने के लिए मालिकों द्वारा अपने कर्मचारियों हेतु यातायात सुविधा प्रदान की जाती है जिससे कर्मचारी सुविधानुसार कार्यस्थल पर पहुंच सके। वास्तव में यातायात सुविधा, श्रम–कल्याण की श्रेणी में आता है। मालिकों द्वारा अपने कर्मचारियों को पाली के हिसाब से डियुटी प्रदान की जाती है। अतः सभी कर्मचारियों के कल्याण तथा सुरक्षा हेतु मालिकों द्वारा यह प्रयास किया जाता है कि सभी कर्मचारी समय से कार्य स्थल पर पहुचे तथा सकुशल अपने घर जाये। इस हेतु मालिकों द्वारा यातायात सुविधा प्रदान की जाती है।

यातायात सुविधा हेतु कर्मचारियों के वेतन से कुछ न्यूनतम धनराशि काट ली जाती है। जो यात्री यातायात सुविधा नहीं लेता है तो उनके वेतन से यातायात सुविधा हेतु कोई धनराशि नहीं काटी जाती है जहां पर कारखानों में यातायात सुविधा कुछ कर्मचारियों के नजदीक स्थान तक नहीं पहुच पाती है तो उन्हें रियायत पास दिया जाता है।

यातायात सुविधा से कई लाभ है जैसे, औद्योगिक कर्मचारियों के बीच में दुर्घटना कम पाई जाती है, कर्मचारी समय से कार्य स्थल पर पहुंच जाते हैं, कर्मचारियों को परिवहन लागत पर व्यय करना पड़ता है, कर्मचारियों की सुरक्षा सुनिश्चित हो पाती है, कर्मचारियों का मनोबल ऊँचा रहता है जिससे वे अपना कार्य सुचारू रूप से कर पाते है, इत्यादि।

4.5 सार संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में श्रम कल्याण मापन के महत्व के बारे में चर्चा प्रस्तुत की गई है। औद्योगिक आवास की परिभाषा, औद्योगिक नीति तथा विभिन्न औद्योगिक आवासीय कार्यक्रमों के बारे में प्रकाश डाला गया है। इसी इकाई में परिवार लाभ योजना, बच्चों की शिक्षा, सहकारी समितियां, कैन्टीन सुविधा, यातायात सुविधा, मनोरंजनात्मक सुविधा इत्यादि के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है।

4.6 स्व–मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. आवास सुविधा क्या हैं ?
2. औद्योगिक आवास नीति क्या हैं ?
3. औद्योगिक आवास कार्यक्रम के बारे में एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ?
4. परिवार लाभ योजनाओं के बारे में लिखिए ?
5. बच्चों के शिक्षा पर एक टिप्पणी लिखिए ?
6. सहकारी समितियों से आप क्या समझते हैं ?
7. कैन्टीन सुविधा पर एक संक्षिप्त ब्यौरा प्रस्तुत कीजिए ?
8. यातायात सुविधा से आप क्या समझते हैं ?
9. उद्योग में मनोरंजनात्मक सुविधा से आप क्या समझते हैं ?

4.7 पारिभाषिक शब्दावली

Industrial Housing	औद्योगिक आवास	Schemes	योजनायें
Residential Area	रिहायशी क्षेत्र	Improvement Trust	सुधार न्यास
Chawls	झुग्गी	Urban Development	शहरी विकास
Slums	गन्दी बस्ती	Rental Housing Scheme	किराये सम्बन्धी आवास योजनायें
Ventilation	स्वातन	Family Benefit Schemes	परिवार लाभ योजनायें
Venereal Diseases	श्रतिरोग	Canteen	कैन्टीन
Characterstics	विशेषतायें	Transport Facility	यातायात सुविधा
Cooperative Societies	सहकारी समितियां	Recreation Facilities	मनोरंजनात्मक सुविधायें

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भगोलीवाल, वी.एन., एवं प्रेमलता, श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक सम्बन्ध साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पेज – 424,–425, 429, वर्ष 2001।
2. सक्सेना, आर.सी., श्रम समस्यायें एवं समाज कल्याण, के. नाथ एण्ड कम्पनी पुस्तक प्रकाशन, मेरठ, पेज–213–219, 261–265, वर्ष 1997।
3. सिन्हा एवं इन्दुबाला, श्रम एवं समाज कल्याण, भारती भवन, पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, पेज– 398, वर्ष – 2006।

इकाई –5

स्वचालनीकरण एवं इसका प्रभाव
Mechanisation / Automation & its Impact

इकाई का रूपरेखा

5.1 परिचय
5.2 उद्देश्य
5.3 स्वचालनीकरण की अवधारणा
5.3.1 स्वचालनीकरण के प्रभाव
5.3.2 स्वचालनीकरण से हानियॉ
5.4 विश्वव्यापीकरण
5.4.1 विश्वव्यापीकरण का श्रम कल्याण पर प्रभाव
5.4.2 उदारीकरण का श्रम कल्याण पर प्रभाव
5.5 श्रम कल्याण में श्रम संघों की भूमिका
5.6 सार संक्षेप
5.7 स्वा मूल्यॉकन हेतु प्रश्न

5.8 पारिभाषिक शब्दावली

5.1 परिचय

स्वचालनीकरण का मानवीय उद्धिकास में प्रमुख स्थान रहा है। स्वचालनीकरण का सामान्य सम्बन्ध परिवर्तनयुक्त विकास की गति से होता है। प्रारम्भ से लेकर 21वीं सदी तक की विकास की गति के ऊपर ध्यान देने से यह स्पष्ट होता है कि स्वचालनीकरण ने इसमें प्रमुख भूमिका अदा की है। स्वचालनीकरण ने समय–समय पर विविध स्वरूपों को प्राप्त किया है। औद्योगिक क्रान्ति ने स्वचालनीकरण के स्वरूप को पूर्णतः परिवर्तित कर दिया है।

आज विश्व के प्रायः सभी प्रगतिशील औद्योगिक देशों में स्वचालित मशीनों की स्थापना पर बल दिया जाता है। इसका कारण यह है कि ये मशीनें मनुष्य की तुलना में अधिक ईमानदारी से काम करती है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- स्वचालन का अर्थ, परिभाषा एवं विशेषताओं के बारे में जान पायेगें।
- श्रम कल्याण पर स्वचालन के प्रभाव के बारे में लिख सकेगें।
- स्वचालन से हानियां के बारे में जान सकेगें।
- विश्वव्यापीकरण का अर्थ एवं परिभाषा के बारे में जान सकेगें।
- विश्वव्यापीकरण का श्रम कल्याण पर प्रभाव के बारे में लिख सकेगें।
- उदारीकरण को अर्थ एवं विशेषता के बारे में जान सकेगें।
- उदारीकरण का श्रम कल्याण पर प्रभाव के बारे में लिख सकेगें।

5.3 स्वचालनीकरण की अवधारणा

'स्वचालनीकरण' अंग्रेजी के शब्द 'आटोमेशन' का हिन्दी रूपान्तर है। इस शब्द के अर्थ को जानने से पहले यह जानना आवश्यक है कि 'आटो' और आटोमैटिक शब्द से बना है और आटोमैटिक शब्द का निर्माण आटो से हुआ है। आटो का शब्दकोषीय अर्थ 'अपना' आप ही, है। साधारण अर्थ है 'अपने आप'। आटोमैटिक का अर्थ है 'आपसे आप

चलने वाला' या 'अचेतन कार्यकारी' सरल शब्दों में आटोमैटिक का अर्थ है अपने आप चलने वाला। आटोमेशन का अर्थ को अधिक अच्छी तरह समझने के लिए 'आटोमेटन' शब्द के अर्थ को समझना आवश्यक है। इसका कारण यह है कि आटोमेशन का आटोमेशन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। आटोमेशन का शब्दकोषीय अर्थ है 'स्वयं चलने वाला यंत्र'। इस प्रकार आटोमेशन स्वयं चलने वाली मशीनों की ओर संकेत करता है।

आटोमेशन या 'स्वचालनीकरण' एक नया शब्द है। इसका प्रयोग औद्योगिक क्षेत्र में नई मशीनों क आविष्कार के कारण किया जाता है। उत्पादन प्रक्रिया में इस शब्द का सबसे पहले प्रयोग 1936 में किया गया था। जहाँ इसके अर्थ का सम्बन्ध है, विद्वानों में मतभेद है। औद्योगिक क्षेत्र में इस शब्द का प्रयोग निम्न दो अर्थो में किया जाता है –

(अ) स्वचालित यन्त्रों और मशीनों का प्रयोग, तथा

(आ) वह प्रक्रिया जिनकी सहायता से उद्योगों में स्वचालित नियन्त्रण की व्यवस्था की जाती है।

किन्तु ये दोनों अर्थ स्वचालनीकरण के संकुचित अर्थ को ही स्पष्ट करते हैं। आधुनिक जीवन में स्वचालनीकरण शब्द का प्रयोग अत्यन्त व्यापक अर्थो में किया जाता है। आधुनिक युग में उद्योगों में स्वचालनीकरण का अर्थ सिर्फ अपने आप चलने वाले यन्त्र के प्रयोग से नहीं है। इसका अर्थ उद्योगों के विभिन्न स्तरों के मध्य संयोजन से है। इसका उद्देश्य मानवश्रम की सहायता के बिना, बिना किसी बाधा के उत्पादन कार्य करना है। इससे उद्योगों में क्रान्तिकारी परिवर्तन होते हैं, इसलिए इसे 'उत्पादन का जीवन ढंग' कहा जाता है।

विभिन्न विद्वानों ने स्वचालनीकरण की जो परिभाषाएँ दी है, वे इस प्रकर हैं–

1. **इन्साइक्लोपीडिया अमेरिकाना** – ''स्वचालन, औद्योगिक निर्माण तथा वैज्ञानिक खोजबीन की वह तकनीक है, जिसका आविर्भाव यन्त्र और भारी उत्पादन की अवधारणाओं से हुआ है।''
2. **गुडमैन** – ''स्वचालनीकरण स्वचालित क्रियाओं की प्रौद्योगिकी है, जिसमें संचालन पद्धतियों, प्रक्रियाओं और उत्पादन मालों की रूपरेखा का समन्वय विचारों और प्रयत्नों के यन्त्रीकरण का उपयोग करने के लिए किया जाता है।''
3. **इनजिंग** – ''स्वचालनीकरण का उद्देश्य मानव श्रम की सहायता के बिना निर्विघ्न उत्पादन करना है।''

इस प्रकार स्वचालनीकरण की परिभाषा 'उद्योगों में स्वचालित यन्त्रों के उपयोग और परिणामस्वरूप भारी मात्र में उत्पादन' के रूप में की जा सकती है।

5.3.1 स्वचालनीकरण के प्रभाव

उद्योग के विकास में स्वचालनीकरण के परिणाम को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। स्वचालनीकरण के परिणामस्वरूप ही उत्पादन की प्रक्रिया में व्यापक परिवर्तन हुआ है। स्वचालनीकरण के परिणाम को ही इसके लाभ के रूप की वर्णित किया जा

सकता है। स्वचालनीकरण के परिणामस्वरूप औद्योगिक विकास की गति में अतितीव्रता आयी है। इसके परिणाम सामान्यतः इस प्रकार वर्णित किए जा सकते हैं–

1. **अनुसंधान को प्रोत्साहन** – स्वचालनीकरण का सबसे महत्वपूर्ण लाभ यह है कि इससे वैज्ञानिक खोज और अनुसंधान को प्रोत्साहन प्राप्त होता है। स्वचालनीकरण स्वयं ही वैज्ञानिक अनुसंधान की देन है। आत प्रायः सभी उद्योगों में इसको अपनाने के प्रयास किए जा रहे है। इसके कारण अनुसंधान की सर्वोत्तम विधियों का ज्ञान प्राप्त होता है। इस प्रकार स्वचालनीकरण अनुसंधान को प्रोत्साहित करता है।
2. **श्रम उत्पादकता में वृद्धि** – स्वचालनीकरण का दूसरा लाभ यह होता है कि इससे श्रम उत्पादकता में वृद्धि होती है। इसका अर्थ है कि स्वचालित मशीनें स्वयं में 'श्रम' को उत्पन्न करती है। जिन उद्योगों में हजारों श्रमिकों की आवश्यकता होती है, वहाँ सिर्फ एक व्यक्ति ही मशीन को संचालित करके हजारों श्रमिकों का काम स्वयं कर सकता है। इसके साथ ही अकेला व्यक्ति एक ही समय में अनेक प्रकार की स्वचालित मशीनों का संचालन एक ही समय में कर सकता है।
3. **औद्योगिक खतरों से मुक्ति** – विशाल कारखानों में श्रमिकों को अनेक ऐसे कार्यो को संचालित करना पड़ता है जिनसे जीवन को कभी भी खतरा उत्पन्न हो सकता है। अत्यधिक भाप और दबाव का खतरा औद्योगिक क्षेत्रों में निरन्तर बना रहता है। इन खतरों के कारण अचानक ही मानव की जीवनलीला समाप्त हो जाती है। स्वचालनीकरण से यह लाभ होता है कि मानव जीवन को इस प्रकार के खतरों से बचाया जा सकता है।
4. **कार्यक्षमता में वृद्धि** – स्वचालनीकरण से यह भी लाभ है कि इससे श्रमिकों की कार्यक्षमता में वृद्धि तो होती ही है, साथ ही उनकी कार्यकुशलता भी बढ़ती है। सभी कार्य अत्यन्त सरल हो जाते हैं। इसका कारण यह है कि मशीनों के अभाव में श्रमिकों को अधिक शारीरिक परिश्रम करना पड़ता है। इससे व्यर्थ में ही उनकी शक्ति का नाश होता रहता है। स्वचालित मशीनों के प्रयोग के कारण कार्य सरल हो जाते हैं। इससे श्रमिकों की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।
5. **जीवन वूद्धि** – स्वचालनीकरण से यह भी लाभ है कि इससे श्रमिकों के जीवन की वृद्धि होती है। श्रमिक जब उद्योगों में एक ही प्रकृति के कार्य करते रहते हैं तो उनके जीवन में नीरसता तो आती ही है, साथ ही कार्य के प्रति उदासीनता की मात्रा में भी वृद्धि हो जाती है। अत्यधिक परिश्रम, ताप, धुंआ, चमक आदि के कारण मनुष्य के नेत्र, मांसपेशियां, कान, दिल और दिमाग बुरी तरह प्रभावित होते हैं। इससे जीवन नीरस हो जाता है। उसकी आयु तो कम होती ही है साथ ही जीवन भी विषादमय हो जाता है। स्वचालित मशीनें उपर्युक्त सभी प्रकार की

समस्याओं का समाधान कर देती है। उसको मशीनों के साथ हल्का काम करना पड़ता है। साथ ही नई मशीनों के आते रहने के कारण श्रमिक में उत्सुकता बनी रहती है। इससे श्रमिक के जीवन में वृद्धि होती है।

6. **उत्पादन में वृद्धि** – स्वचालित मशीनों के प्रयोग के कारण उत्पादन में वृद्धि होती है। इसके दो प्रमुख कारण है –

अ) पहला कारण यह है कि स्वचालित मशीनें निर्धारित समय में काम की निर्धारित मात्रा को पूरा कर लेती हैं। मशीनों के माध्यम से श्रमिकों के प्रबन्ध और उनकी उदासीनता तथा लापरवाही से भी बचा जा सकता है, और

आ) श्रमिकों द्वारा की जाने वाली हड़तालें और तालाबन्दी की समस्या भी नहीं आती है।

इसके साथ ही आज समाज में जो मौलिक अन्तर है, वह शारीरिक और मानसिक परिश्रम करने वालों के बीच है। स्वचालित मशीनों के आ जाने से इस अन्तर को भी कम किया जा सकता है।

7. **रहन सहन के स्तर में वृद्धि** – स्वचालित मशीनों के कारण श्रमिकों के रहन–सहन के स्तर में भी वृद्धि होती है। इसका कारण यह है कि स्वचालित मशीनों से उत्पादन अधिक होता है। इससे पूंजीपतियों को लाभ अधिक मात्रा में होता है। लाभ अधिक होने के कारण वे श्रमिकों की मजदूरी में वृद्धि कर देते हैं। साथ ही, अच्छी मशीनों के कारण श्रमिकों की शारीरिक और मानसिक क्षमता भी कम नहीं होती है। इस सबका परिणाम यह होता है कि श्रमिकों के जीवन स्तर में वृद्धि होती है।

इसके अतिरिक्त स्वचालनीकरण से अन्य किस्म का होता है –

8. इसमें जो माल तैयार होता है, वह अच्छी किस्म का होता है।
9. इससे अपव्यय को भी रोका जा सकता है। इसका कारण यह है कि कम समय और परिश्रम से अधिक माल का उत्पादन सम्भव होता है।
10. इससे मानव के औद्योगिक जीवन की प्रगति होती है। यह सभ्यता के स्तर पर निरन्तर आगे बढ़ता जाता है।
11. स्वचालनीकरण से औद्योगिक क्षेत्रों में स्थिरता उत्पन्न होती है। इसका कारण यह है कि स्वचालित मशीनें एक निश्चित समय में और निश्चित लागत में निश्चित मात्रा में उत्पादन करती है।
12. इससे निर्यात में भी वृद्धि होती है। इसका कारण यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में प्रतिस्पर्धा के कारण माल सस्ते दामों पर बिकता है।
13. स्वचालनीकरण महत्वपूर्ण आर्थिक साधन है जिसका प्रयोग विकास के लिए आवश्यक है।

5.3.2 स्वचालनीकरण से हानियां

अभी स्वचालनीकरण से हाने वाले लाभों की विवेचना की गई। इस विवेचना से स्पष्ट होता है कि स्वचालनीकरण उत्पादन में वृद्धि और सामाजिक कल्याण के लिए अनिवार्य है। किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि स्वचालनीकरण से लाभ ही लाभ है। इससे किसी भी प्रकार की हानि नहीं है। इतना तो स्वीकार करना पड़ेगा कि औद्योगिक विकास में स्वचालनीकरण की महत्वपूर्ण भूमिका है। किन्तु इसके बावजूद इसमें अनेक दोष हैं। संक्षेप में स्वाचालनीकरण के दोषों या हानियों को निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता हैं –

1. **बेरोजगारी** – स्वचालनीकरण से सबसे बड़ी हानि यह है कि इससे बेरोजगारी की समस्या में वृद्धि होती है। स्वचालनीकरण वह प्रक्रिया है जिससे उद्योगों का संचालन व्यक्तियों के माध्यम से न होकर मशीनों के माध्यम से होता है। जहाँ एक हजार श्रमिकों की आवश्यकता होती है, वहां एक मशीन से ही इतने व्यक्तियों के बराबर काम किया जा सकता है। इस प्रकार स्वचालनीकरण से बेरोजगारी को बढ़ावा मिलता है।
2. **असन्तुलित औद्योगिक विकास** – स्वचालनीकरण से निश्चित रूप से औद्योगिक रूप से विकास होता है। किन्तु इस विकास में सन्तुलन का अभाव पाया जाता है। इसका कारण यह है कि सभी उद्योगों में स्वचालनीकरण को अपनाना सम्भव नहीं होता। एक ही उद्योग की प्रत्येक शाखा में भी स्वचालनीकरण को नहीं अपनाया जा सकता है। इसका परिणाम यह होता है कि जहां स्वचालित मशीनों का प्रयोग किया जाता है, वहां तो प्रगति होती है किन्तु जहां इस प्रकार की मशीनों का प्रयोग नहीं किया जाता है, वहां की प्रगति रूकी रहती है। इस प्रकार औद्योगिक विकास असन्तुलित रूप में होता है।
3. **वंशानुगत कुशलता में कमी** – कारीगरों में जो औद्योगिक कुशलता पायी जाती है, वह वंशानुगत होती है और इसका हस्तान्तरण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को अपने आप ही होता रहता है। स्वचालनीकरण के कारण कारीगरों की वंशानुगत कुशलता में कमी आती है। यह कारीगर परम्परात्मक मशीनों का परित्याग कर देते हैं और इसके स्थान पर नवीन व्यवसाय को अपनाते हैं।
4. **एकाधिकार की वृद्धि** – स्वचालनीकरण के कारण एकाधिकार की प्रवृति को बढ़ावा मिलता है। स्वचालित मशीनों की स्थापना के लिए पर्याप्त मात्रा में पूंजी की आवश्यकता होती है क्योंकि स्वचालित मशीनें काफी महंगी मिलती है। जिन व्यक्तियों के पास पर्याप्त पैसा होता ळे, वे ही स्वचालित मशीनों की स्थापना कर सकते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि उन व्यक्तियों का उद्योगों पर एकाधिकार हो जाता है जिनके पास स्वचालित मशीनें होती हैं। इससे अनेक छोटे–मोटे व्यापार समाप्त हो जाते हैं। क्योंकि उनके पास स्वचालित मशीनों की स्थापना के लिये पर्याप्त पूंजी नहीं होती है।

5.4 विश्वव्यापीकरण

विश्वव्यापीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो आज दुनियाभर के देशें में देखने को मिलती है। इस प्रक्रिया के माध्यम से संस्कृति और उद्योग धन्धों का विस्तार, मिशनरी गतिविधियां, तकनीकी परिवर्तन आदि कई देशों में फैल जाते हैं। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप विभिन्न देशों के मूल निवासी एक–दूसरे के निकट आ जाते है। आत हमारे पास आनुभाविक तथ्य सामग्री है जो बताती है कि आस्ट्रेलिया के ट्रोब्रियन्ड टापू के आदिवासियों ने आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को अपना लिया है।

आदिवासी ही क्यों, दुनियाभर में आज ऐसी वस्तुएं हैं जो दूर दराज के क्षेत्रों में पहुंच गयी हैं। लोग कोकाकोला जैसे पेय पदार्थ पीने लगे हैं, जिन्स पहनने लगे हैं, लोकप्रिय फिल्मस् सभी देशों में देखी जाती हैं, और पर्यावरण का संकट विकसित और विकासशील दोनों देशों के सामने किसी भयानक दानव की तरह मुंह फाड़े खडा है। कुछ ऐसी ललित कलाएं या संगीत के प्रकार हैं जो स्थानीयता से बाहर निकलकर दुनियाभर में पहुंच गयी हैं। पॉप म्युजिक या पॉप डांस दूर–दराज क्षेत्रों में भी देखने को मिलते हैं।

कला और संस्कृति से परे राजनीति के क्षेत्र में भी कुछ नये आयाम विश्वव्यापीकरण के कारण देखने को मिलते हैं। हमारे देश में स्थानीयता यानी राज्यों की राजनीति केन्द्र को प्रभावित करने लगी है। इस सम्पूर्ण ऊहा–पोह में आज भी केन्द्रीय सरकार के पास चाहे जहाँ कहीं हो, दो अधिकार उसके पास है। पहला तो कर लगाने का अधिकार और दूसरा हिंसा करने का। यह राज्य ही है जो युद्ध करने का ऐलान कर सकता है, यह राज्य ही है जो किसी को फाँसी के तख्ते पर पहुंचा सकता है। एक और समानता दुनियाभर के राज्यों में देखने को मिलती है। सभी राज्य नागरिकों को संवैधानिक अधिकार देते हैं। राज्य में नागरिक की भूमिका एक सर्वमान्य सिद्धान्त के अनुसार संचालित होती है। इसी तरह दुनियाभर के देशों में एक और वस्तु समान रूप से पायी जाती है। यह वस्तु है काम के लिये वेतन और दूसरी पूंजीवाद। पहले जहां पूंजीवाद एक निश्चित क्षेत्र में पाया जाता था आज दुनियाभर के देशों की विशेषता बन गया है। उदारीकरण भी इसी विश्वव्यापीकरण की उपज है। अब पूंजीवाद जो एक देश में है दुनियाभर में पहुंच सकता है। उदाहरण के लिये, अमेरिका या जापान की कम्पनियां भारत, पाकिस्तान, आदि दक्षिण एशिया के देशों में चलने लग गयी है। किसी भी देश का पूंजीपति अपनी पूंजी का विनियोग अपने देश के बाहर सहजता से कर सकता है। इसका मतलब हुआ कि उदारीकरण ने उद्योग धन्धों को अन्तर्राष्ट्रीय बना दिया है।

5.4.1 विश्वव्यापीकरण का श्रम कल्याण पर प्रभाव

विश्वव्यापीकरण की प्रक्रिया बहुत जटिल है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत आधुनिकीकरण, उत्तर आधुनिकीकरण, औद्योगीकरण और पूंजीवाद सम्मिलित है। इसी के अन्तर्गत पर्यटन और स्थानान्तरण भी निहित है। इन सब चरों के कारण विश्वव्यापीकरण की विशेषताएं भी बहुत अधिक हो जाती हैं। इस विस्तार के होते हुए भी हम इस प्रक्रिया के कतिपय सर्वसमाज लक्षणों का उल्लेख करेगें।

1. विश्वव्यापी संस्कृति

यह कहा जाता है कि आज के आधुनिक युग में एक ऐसी संस्कृति विकसित हो रही है जो विश्वव्यापी है। इस संस्कृति में परिवार, विवाह, मनोरंजन, साहित्य, कला और जीवन के कई अन्य तत्व सम्मिलित है। वे विचारक जो विश्व–संस्कृति की पहल करते हैं उनका विरोध भी करते हैं। विरोध में यह तर्क दिया जाता है कि कोई भी संस्कृति राज्य की क्षेत्रीयता में बंधी होती है। भारत की एक सीमा है, क्षेत्रीयता है। यहां की संस्कृति इस क्षेत्रीयता में बंधी है। एक प्रकार से क्षेत्रीयता और संस्कृति सावयवी है। ऐसी अवस्था में जब तक सम्पूर्ण विश्व की कोई साझेदार सरकार नहीं बनती, विश्व संस्कृति कैसे बन सकती है ? यह विवाद जो विश्व–संस्कृति और राष्ट्रीय संस्कृति से जुड़ा है, आज बहस का मुद्दा बन गया है।

2. संस्कृति का सजातीयकरण

संचार, आवागमन, पर्यटन, स्थानान्तरण आदि की प्रक्रियाएं हाल की दुनिया में इतनी तीव्र हो गयी हैं कि तेजी के साथ दुनिया की विभिन्न संस्कृतियां एक–दूसरे के निकट आ रही है। यह संस्कृति और पण्य वस्तुओं की सजातीयता है।

3. विनिमय का साधन मुद्रा

विश्वव्यापीकरण का एक बहुत बड़ा लक्षण यह है कि दुनिया भर में जिनमें आदिवासी भी सम्मिलित हैं, विनिमय का माध्यम मुद्रा है। इस विनिमय में वस्तु–विनिमय को कोई स्थान नहीं है।

4. बाजार का प्रभुत्व

दुनिया सिकुड़कर इतनी छोटी हो गयी है कि आज व्यापार, धन्धे में बाजार का प्रभुत्व बढ़ गया है। वास्तव में विश्व–स्तर पर अर्थव्यवस्था का एक बहुत बड़ा जाल बन गया है। इसके परिणामस्वरूप उपयोग की पद्धतियां सारी दुनियां में बदल कर समान स्तर पर पहुंच रही है।

5. नये सामाजिक आन्दोलन

योगेन्द्र सिंह का कहना है तीसरी दुनिया में और विशेषकर भारत में विश्वव्यापीकरण के परिणामस्वरूप जो परिवर्तन आया है, उसने कई नये आन्दोलनों को जन्म दिया है। हमारे यहां हाल में दलित आन्दोलन और इसी तरह जेण्डर आन्दोलन सामान्य हो गये है। बराबर गोष्ठियों और सम्मेलनों में दृढ़ता के साथ मानव अधिकारों की चर्चा होती है। इस प्रकार का जो नया रूप देश में दिखायी देता है, वह विश्वव्यापी

प्रकृति का है। कुछ इसी तरह पारिस्थितिकी, पर्यावरण और प्रदूषण के सुधार की बात भी विश्वव्यापी चेतना के परिणामस्वरूप है।

6. आर्थिक उत्थान

जब अमेरिका और यूरोप के लोग उच्च स्तर की जीवन पद्धति को अपना सकते हैं तो तीसरी दुनिया के देश गरीबी के पाट में कब तक पिसते रहेंगे। लोगों में एक प्रकार की सापेक्षिक वंचिकता देखने को मिलती है। यह वंचितता लोगों को संघर्ष के रास्ते पर भी ले जा सकती है।

7. सेवा कार्य में बदलाव

अपतटीय श्रमिकों की कम लागत निगमों के लिए उत्पादन को विदेशों में स्थानान्तरित करना आसान बनाती है, अकुशल श्रमिकों को ऐसे सेवा क्षेत्र में लगाना जहां मजदूरी और लाभ कम है, लेकिन कारोबार उच्च है, इसने कुशल और अकुशल श्रमिकों के बीच आर्थिक अंतर को बढ़ाने में योगदान दिया है इन नौकरियों की हानि ने मध्य वर्ग की धीमी गिरावट में योगदान दिया है जो संयुक्त राज्य अमेरिका में आर्थिक असमानता को बढाने वाला मुख्य कारक है वे परिवार जो कभी मध्यम वर्ग का हिस्सा थे, उन्हें नौकरियों में हुई भारी कटौतियों तथा अन्य देश से आउटसोसिंग ने अपेक्षाकृत निम्न स्थिति में ला दिया है इसका यह भी तात्पर्य है कि निम्न वर्ग के लोगों को गरीबों में अधिक कठिन समय का सामना करना पड़ता है क्योंकि उनके पास मध्यम वर्ग की तरह आगे बढ़ने के लिए रास्तों का अभाव है।

8. कमजोर श्रम संघों

हमेशा बढ़ती हुई कम्पनियों की संख्या और सस्ते श्रम की अधिकता ने संयुक्त राज्य में श्रम संघों को कमजोर बनाया है, संघ अपनी प्रभावशीलता को खो देते हैं जब उनकी सदस्यता में कमी आने लगती है, इसके परिणाम स्वरूप संघों के पास निगमों की तुलना में कम शक्ति होती है, निगम कम मजदूरी के लिए श्रमिकों को बदल सकते हैं और उनके पास संघीय नौकरियों की पेशकश न करने का विकल्प होता है।

5.4.2 उदारीकरण का श्रम कल्याण पर प्रभाव

उदारीकरण का सामान्य तात्पर्य यह है कि दुनिया के विभिन्न देशों के बीच में जो आदान–प्रदान होता है या आर्थिक क्षेत्र में जो आयात–निर्यात होता है, उस पर राज्य का नियंत्रण न्यूनतम हो जाता है। एक प्रकार से वस्तुओं की खरीद–फरोख्त में बाजार की भूमिका प्रभावी हो जाती है और राज्य की न्यूनतम। आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक दबाव इतने अधिक होते हैं कि राज्य खुली छूट दे देता है और वस्तुओं के गुण पर या आवश्यकताओं के दबाव पर एक देश से दूसरे देश में वस्तुएं आने जाने लगती है। हाल में दक्षिण भारत के रबड़ उद्योग में काम करने वाले लोगों ने एक आन्दोलन चलाया। उनका कहना था कि विदेशों से जो रबड़ आयात होता है उसके मुकाबले में यहां का महंगा रबड़ उन्हें सस्ता बेचना पड़ता है। उन्हें रबड़ उत्पादन का

लागत मूल्य भी नहीं मिलता। रबड़ उद्यमियों का यह आन्दोलन अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के कारण है। यह भी सही है कि हमारे देश में उदारीकरण की नीति के कारण कई बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने अपनी पूंजी का निवेश किया है। इसके परिणामस्वरूप स्थानीय उद्योग धंधे ठप्प होने लगे हैं।

उदासीकरण का यह अर्थ हुआ कि राज्य का नियंत्रण आयात–निर्यात के क्षेत्र में बहुत कमजोर हो जाता है। यह पूरी ताकत के साथ कहना चाहिये कि आर्थिक उदारीकरण की नीति जिन देशों ने अपनायी है, वह विश्वव्यापीकरण का ही परिणाम है। विश्वव्यापीकरण का दूसरा परिणाम सांस्कृतिक उदारीकरण में भी देखने को मिलता है। जब टेलीविजन के विदेशी चेनल एक देश से दूसरे देश में पहुंचते है तो एक प्रकार का सांस्कृतिक हमला होता है और स्थानीय संस्कृतियां कमजोर होने या लुप्त होने लगती है। चीन, भारत, पाकिस्तान आदि देशों में उदारीकरण का विस्तार होने लगा है। नायर ने विश्वव्यापीकरण और आर्थिक राष्ट्रवाद दो बुनियादी मुद्दे ऐसे रहे हैं जिन्होनें अफ्रीका और एशिया के देशों को झकझोर दिया है। उदारीकरण की नीति ने इस अर्थ में बलदेवराज नायर कहते हैं, बाजार को निर्णायक बना दिया है। जब हम आर्थिक विश्वव्यापीकरण और आर्थिक राष्ट्रवाद की चर्चा करते हैं तो अभी तक लगता है कि आर्थिक राष्ट्रवाद कमजोर नहीं हुआ है लेकिन इस तरह का कोई कथन निर्विवाद नहीं है। राजनीतिक दल इसकी व्याख्या अपने–अपने दृष्टिकोण से करते हैं।

यह सामान्य मान्यता है कि अर्थव्यवस्था और राजनीति का बहुत गहरा सम्बन्ध है। यह इसलिये कि धन के माध्यम से ही राजनीतिक शक्ति को प्राप्त किया जाता है। ऐसी अवस्था में जब हम आर्थिक उदारीकरण को देखते हैं तब यह निश्चित हो जाता है कि विश्वव्यापीकरण एक सशक्त प्रक्रिया है जो आर्थिक क्रान्ति का सूत्रपात करती है। अभी तीसरी दुनिया के देशों ने उदारीकरण का पूरा अनुभव नहीं किया है। अब तक जो कुछ हुआ है इस सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि उदारीकरण ने उपभोक्तावाद को अत्यधिक बढ़ावा दिया है, स्थानीय उद्यमों को कमजोर कर दिया है, आयात को बढ़ाया है और गरीब गुरबों को और अधिक पीछे धकेल दिया है।

5.5 श्रम कल्याण में श्रम संघों की भूमिका

श्रम–कल्याण की समस्या अत्यन्त गूढ़ एवं महत्वपूर्ण है अतः किसी एक व्यक्ति या संस्था द्वारा सभी कार्य करना सम्भव नहीं है। कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिन्हें नियोक्ता कर सकते हैं, कुछ ऐसे होते है, जो श्रम संघों द्वारा किये जा सकते हैं। नियोक्ता द्वारा किये गये कार्यो में जलपान गृह, शिशु–गृह, मनोरंजन सुविधाएं, शिक्षा तथा चिकित्सा सुविधाएं प्रमुख है। कई बार शिक्षा तथा चिकित्सा सम्बन्धी कल्याण कार्य राज्य सरकार द्वारा किये जाये वाले कार्यो की श्रेणी में आते हैं। क्योंकि छोटे नियोक्ता इस प्रकार की सुविधाएं प्रस्तुत करने में असमर्थ रहते हैं। कई बार श्रम–कल्याण सुविधाएं श्रम संघों द्वारा उपलब्ध की जाती है। इस प्रकार की क्रियाओं को संघ की धनात्मक क्रियायें कहा जाता

है। संगठित श्रम संघ अपने सदस्यों की कठिनाई के समय अधिक सहायता तथा बेरोजगारी लाभ देकर, सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वाह करते समय सहायता देकर श्रम–कल्याण के कार्य करते हैं। कई संघ सस्ती वस्तुओं की दुकानें, साख व्यवस्था तथा सहकारी विपणन, आदि कार्य भी करते हैं।

वस्तुतः श्रम–कल्याण कार्य एक मिली जुली किया है, जिनमें सभी का सहयोग अपेक्षित है अखिल भारतीय श्रम संघ कांग्रेस ने अपने ज्ञापन में कहा है कि 'श्रम कल्याण सम्बन्धी कुछ आवश्यक मर्दे अधिनियम के अन्तर्गत मानी जानी चाहिए तथा उसके आधार अन्य विस्तृत नियम बनाये जाने चाहिए। छोटे उद्योगों द्वारा शिशु–गृह, कपड़े धोने एवं नहाने की सुविधा, आदि तथा कुछ स्थानीय संस्थाओं द्वारा नियन्त्रित किये जाने चाहिए। इस कार्य हेतु वित्तीय व्यवस्था नियोक्ता द्वारा की जानी चाहिए।

भारत में अधिकांश श्रम–संघ दुर्बल वित्तीय स्थिति के फलस्वरूप अधिक कल्याणकारी कार्य नही कर पाते हैं। परन्तु इस क्षेत्र में कुछ बड़े औद्योगिक क्षेत्रों में कार्य हुआ है। सूती वस्त्र उद्योग श्रम संगठन, अहमदाबाद ने अपने सदस्यों के हितों के लिए कई कार्य किये है। इस संघ द्वारा कई सांस्कृतिक तथा सामाजिक केन्द्र चलाये जाते हैं। इन केन्द्रों में श्रमिक वाद–विवाद, विचार–विमर्श, सामूहिक वार्ता, संगोष्ठियां, बैठकें, अध्ययन केन्द्र, समाज शिक्षा कक्षाएं तथा मनोरंजन कार्यक्रम, आदि आयोजित किये जाते हैं। संघ तीन शालाएं, दो अध्ययन केन्द्र एवं अनुसूचित जाति की लड़कियों के लिए छात्रावास चलाता है। इन लड़कियों को सिलाई, बुनाई, कशीदाकारी, खाना बनाना, आदि कार्य सिखाये जाते हैं। माध्यमिक विद्यालयों में पढ़ने वाले छात्रों को छात्रवृत्ति दी जाती है।

5.6 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में स्वचालन के अर्थ, परिभाषा एवं विशेषताओं के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है तथा श्रम कल्याण पर स्वचालन के प्रभाव के बारे में भी प्रकाश डाला गया है एवं स्वचालन से होने वाली हानियों के बारे में भी लिखा गया है। इसी इकाई में विश्वव्यापीकरण एवं उदारीकरण के अर्थ, परिभाषा एवं विशेषताओं के बारे में भी बृहद रूप से चर्चा की गयी है एवं उदारीकरण एवं विश्वव्यापीकरण का श्रम कल्याण पर क्या प्रभाव पड़ता है उसके बारे में भी प्रकाश डाला गया है।

5.7 स्व–मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. स्वचालन का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए एवं इसकी विशेषताओं के बारे में प्रकाश डालिये ?
2. श्रम कल्याण पर स्वचालन का क्या प्रभाव पड़ता है इसके बारे में एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए ?
3. स्वचालन से होने वाले हानियों के बारे में प्रकाश डालिये ?

4. विश्वव्यापीकरण का अर्थ, परिभाषा एवं श्रम कल्याण पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में एक विस्तृत चर्चा कीजिए ?
5. उदारीकरण का अर्थ, विशेषता एवं श्रम कल्याण पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में एक निबन्ध लिखिए ?

5.8 परिभाषिक शब्दावली

Automation	स्वचालनीकरण	Libralisation	डदारीकरण
Self Acting	अपने आप चलने वाला	Indigeneous People	मूल निवासी
Productivity	उत्पादकता	Wage Work	काम के लिए वेतन
Research	अनुसंधान	State Policies	राज्य की नीति
Combination	संयोजन	Global Culture	विश्वव्यापी संस्कृति
Increase	बृद्धि	Homogenisation	सजातीयकरण
Good Quality	अच्छी किस्म	Exchange	विनियम
Disadvantages	हानियां	Dominance	प्रभुत्व
Unemployement	ब्रोजगारी	Consumption	उपभोग
Imblance	टसंतुलित	Social Movement	सामाजिक आंदोलन
Life expectancy	जीवन बृद्धि	Economic Development	आर्थिक उत्थान
Globalisation	विश्वव्यापीकरण	Trade Union	श्रम संघ
Libralisation	डदारीकरण		

5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बघेल, डी. एस., औद्योगिक समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली, पेज 171–177, वर्ष 2002।
2. दोषी,एस.एल. एवं जैन, पी.सी., समाजशास्त्र : नई दिशाएं, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, पेज 449–454, वर्ष 2005।
3. सक्सेना आर.सी. श्रम समस्यायें एवं श्रम कल्याण, के. नाथ एण्ड कम्पनी, मेरठ, पेज 396–397, वर्ष 1997।

इकाई–6

औद्योगिक दुर्घटनायें : कारण एवं निवारण

Industrial Accidents : Causes & Prevention

इकाई का शीर्षक

6.1 परिचय
6.2 उद्देश्य
6.3 औद्योगिक दुर्घटना
6.4 औद्योगिक दुर्घटना का कारण
6.5 दुर्घटना के रोकथाम
6.6 औद्योगिक स्वास्थ्य
6.7 औद्योगिक स्वास्थ्य सिद्धान्त
6.8 व्यावसायिक बीमारियां
6.9 व्यावसायिक बीमारियों का उपचार
6.10 व्यासायिक बीमारियों की रोकथाम
6.11 प्रदूषण नियंत्रण
6.12 पर्यावरण सुरक्षा
6.13 सार संक्षेप
6.14 परिभाषिक शब्दावली
अभ्यास प्रश्न – लघु, विस्तृत
6.15 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में औद्योगिक दुर्घटना के बारे में विस्तृत चर्चा प्रस्तुत की गई है जिसमें औद्योगिक दुर्घटना के कौन–कौन से कारण होते हैं तथा उनसे कैसे बचा जा सकता है, के बारे में प्रकाश डाला गया है।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- औद्योगिक दुर्घटनाओं के बारे में जान सकेगें।
- औद्योगिक दुर्घटनाओं के कारणों के बारे में जान सकेगें।
- औद्योगिक दुर्घटनाओं से कैसे बचा जाता है, उसके बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें ।
- औद्योगिक स्वास्थ्य क्या होता है ? के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।

- औद्योगिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित सिद्धान्तों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- व्यावसायिक बीमारियों के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।
- व्यावसायिक बीमारियों के उपचार एवं उनसे बचाव के तरीकों के बारे में जान सकेगें।

6.3 औद्योगिक दुर्घटना

भारत में औद्योगीकरण के विकास के साथ विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक स्वास्थ्य एवं सुरक्षा समस्या उत्पन्न हुई है। प्रत्येक वर्ष, औद्योगिक दुर्घटना के मामले लाखों में दिखाई देते है, जिनमें वृहद, दुर्घटना, आंशिक निःशक्तता, पूर्ण निःशक्तता विभिन्न कारखानों, रेलवे, पत्रों, गोदी, तथा खानों में देखने को मिलती है। हमारे सांख्यिकीय कार्यालय के आंकड़ों के अनुसार 1000 श्रमिकों में 60 श्रमिक दुर्घटना ग्रस्त हो जो है जिनमें वृहद दुर्घटना अधिसंख्य होती है। यह दर औद्योगिक देशों से आठ गुना है। दुर्घटना की दर पिछले तीन दशकों में ज्यादा हुई है।

कारखानों में कुल दुर्घटनायें औद्योगिक दुर्घटनाओं का वृहद भाग होता है। दुर्घटनाओं को तीन भागों में बांटा जा सकता है। जिनमें, वृहद, गम्भीर व सुक्ष्म दुर्घटनायें आती है, दुर्घटनाओं के लिए सांख्यिकीय मापन दो तरह से होता है –

1. दुर्घटनाओं की आवृति दर
2. दुर्घटनाओं की गम्भीरता दर।

दुर्घटनाओं की आवृति दर को निम्न सूत्र द्वारा मापा जा सकता है।

$$= \frac{\text{प्रति लाख कर्मकार}}{\text{कुल दुर्घटनाग्रस्त कर्मकार}}$$

तथा दुर्घटना की गम्भीरता दर को निम्न सूत्र द्वारा मापा जा सकता है –

$$= \frac{\text{कुल गम्भीर दुर्घटना से अनुपस्थित कर्मकार}}{\text{कुल कर्मकारों की संख्या (दुर्घटना ग्रस्त)}}$$

6.4 दुर्घटना के कारण

दुर्घटना के निम्नलिखित कारण है –

1. **तकनीकी कारण** – मशीनों की खराबी, खराब रखरखाव, मशीनों का उचित घेराबन्दी, अतिभीड़ इत्यादि कारणों से कर्मकार दुर्घटनाग्रस्त हो जाते हैं।
2. **वैयक्तिक कारण** – अनुचित भर्ती, मर्ती तथा स्थानान्तरण में असावधानी, उपेक्षा, अनुचित माध्यम का चुनाव, अपर्याप्त निपुणता, अपर्याप्त पर्यवेक्षण, अन्य लोगों के असमायोजन इत्यादि के द्वारा दुर्घटना घटित होती है।

3. **मनोवैज्ञानिक कारण** – दुर्घटनायें मनोवैज्ञानिक कारणों से भी होती है जिनमें कर्मकारों का मनोबल उच्च न होना, उनको उचित दालाह का न मिलना आते है।
4. **सुरक्षा नियमों की उपेक्षा** – कर्मकार कभी–कभी सुरक्षा नियमों की उपेक्षा कर जाते हैं जिसका परिणाम दुर्घटना का होना पाया जाता है।
5. **अन्य कारण** – अन्य कारणों में दुर्घटनायें निम्न के अनुपालन में कमी के आधार पर पायी जाती है जैसे – **(क)** दुर्घटनाओं को रोकने हेतु विभिन्न प्रकार की प्रक्रियाओं के कर्मचारी अपनाने में असफल होने पर **(ख)** कर्मचारियों द्वारा सुरक्षा के नियमों का पालन न करने पर **(ग)** ई.एस.आई. डाक्टरों की सुविधाजनक अभिवृत्ति के कारण आदि।

6.5 दुर्घटनाओं की रोकथाम

दुर्घटनायें निम्नलिखित प्रविधियों को अपनाकर रोकी जा सकती हैं –

1. कारखानों में सुरक्षा निरीक्षण के द्वारा।
2. नौकरी सुरक्षा विश्लेषण के द्वारा।
3. प्रबंध तंत्र के द्वारा।
4. दुर्घटना जांच द्वारा।
5. पर्यावरणीय कारणों को नियंत्रित करके।
6. व्यावहारिक कारणों पर नियंत्रण करके।
7. पूरक क्रिया विधि द्वारा।

6.6 औद्योगिक स्वास्थ्य

औद्योगिक कर्मचारियों की चिकित्सकीय देखरेख व स्वास्थ्य सुविधायें, प्रत्येक देश में श्रम कल्याण का एक समग्र भाग है। यह केवल बीमारियों से सुरक्षा ही नही करता बल्कि कार्मिकों को शारीरिक रूप से दक्षता प्रदान कर आर्थिक विकास के लिए उत्तरदायी होता है।

'स्वास्थ्य' शब्द एक सकारात्मक एवं उतिक अवधारणा है जो बीमारी की अनुपस्थिति को इंगित करता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार ''स्वास्थ्य वह सम्पूर्ण अवस्था है जिसमें शारीरिक, मानसिक और सामाजिक रूप से व्यक्ति स्वस्थ्य रहता है, यह केवल रोगों की अनुपस्थिति मात्र नही है। स्वास्थ्य और चिकित्सकीय देखरेख एक वृहद शब्द है किसी व्यक्ति के आर्थिक, सामाजिक और भावनात्मक जीवन से जुड़े रहते हैं।

औद्योगिक या संगठनात्मक स्वास्थ्य, बीमारियों को रोकने का साधन है। ILO तथा WHO की संयुक्त समिति जो 1950 में हुई थी, ने संगठनात्मक स्वास्थ्य को अग्रलिखित बिन्दुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया– 1. व्यावहारिक कार्मिकों के शारीरिक,

मानसिक और सामाजिक स्वस्थता को बढ़ावा तथा रख रखाव करना। 2. कार्य स्थल की स्थिति के कारण होने वाली बीमारियों से बचाव करना। 3. स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारकों से बचाव 4. स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले पर्यावरण से बचाव करना।

➢ **वैधानिक स्वास्थ्य उपबंध** : कारखाना अधिनियम 1948 के अंतर्गत स्वास्थ्य से संबंधित अग्रलिखित उपबंध है –

1. **स्वच्छता (धारा–11)** हर कारखाने को स्वच्छ रखना आवश्यक है। उसे किसी शौचालय या अन्य प्रकार के प्रदूषण से उत्पन्न दुर्घटना से मुक्त रखा जाएगा।
2. **कचरे और बहिश्राव का व्ययन (धारा–12)** प्रत्येक कारखाने में विनिर्माण प्रक्रिया के चलाए जाने से निकलने वाले कचरे और बहिस्राव को हानिकारक नही होने देने और उनके व्ययन के लिए कारगर प्रबंध किए जायेगें।
3. **संवातन और तापमान (धारा–13)** कारखाने के प्रत्येक कमरे में स्वच्छ वायु के संचारण के लिए पर्याप्त सेवातन की प्रभावपूर्ण व्यवस्था की जायेगी। काम के प्रत्येक कमरे में कर्मकारों के युक्तिमुक्त सुखद दशा सुनिश्चित करने तथा उनके स्वास्थ्य की रक्षा के लिए उपयुक्त तापमान बनाए रखना आवश्यक है।
4. **धूल और धूम (धारा–14)** प्रत्येक कारखाने में जिसमें विनिर्माण–प्रक्रिया के कारण धूम, धूल या अन्य अपद्रव्य इस प्रकार का और इतनी मात्रा में निकलता हो, जो वहां कार्यरत कर्मकारों के लिए क्षतिकारक या संतापकारी हो, तो उसको साँस में जाने और उसके संचयन को रोकने के लिए प्रभावपूर्ण उपाय करना आवश्यक है।
5. **कृत्रिम नमीकरण (धारा–15)** राज्य सरकार को इन सभी कारखानों के संबंध में नियम बनाने की शक्ति प्राप्त है, जिनमें वायु की नमी कृत्रिम रूप से बढ़ाई जाती है।
6. **अतिभीड़ (धारा–16)** कारखाने के किसी भी कमरे में इतनी भीड़ नही की जायेगी कि वह वहां कार्यरत कर्मकारों के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो।
7. **प्रकाश (धारा–17)** कारखाने के प्रत्येक भाग में जहां कर्मकार काम करते है या जहाँ से गुजरते हैं, प्राकृतिक या कृत्रिम या दोनों प्रकार के पर्याप्त और यथोचित प्रकाश की व्यवस्था करना आवश्यक है।
8. **पीने का जल (धारा–18)** प्रत्येक कारखाने में कर्मकारों के लिए सुविधाजनक एवं उपयुक्त स्थलों पर पर्याप्त मात्रा में पीने के स्वच्छ जल की प्रभावपूर्ण व्यवस्था करना आवश्यक है।
9. **शौचालय और मूत्रालय (धारा–19)** हर कारखाने में विहित प्रकार के पर्याप्त शौचालयों और मूत्रालयों की व्यवस्था करना अनिवार्य है।

10. **थूकदान (धारा–20)** हर कारखाने में सुविधाजनक स्थानों पर पर्याप्त संख्या में भूकदान की व्यवस्था करना अनिवार्य है। थूकदान को साफ और स्वास्थकर दशा में रखा जाएगा।

➢ **बागान श्रम अधिनियम– 1951** में भी श्रमिकों के स्वास्थ्य संबंधी प्राविधान दिये गये है जिनमें –

1. पेयजल (धारा–8) प्रत्येक बागानों में पर्याप्त मात्रा में पेयजल हेतु नल लगे होने चाहिए तथा स्पष्ट अक्षरों में उस पर पीने का जल लिखा होना चाहिए।
2. शौचालय एवं मूत्रालय (धारा–9) प्रत्येक बागानों में पुरूषों एवं महिलाओं हेतु अलग–अलग शौचालय एवं मुत्रालयों की व्यवस्था होनी चाहिए।
3. चिकित्सकीय सुविधायें (धारा–10) प्रत्येक बागानों में श्रमिकों एवं उनके परिवारों हेतु चिकित्सकीय सुविधा की स्थापना होनी चाहिए जिसे वे जब चाहे उपयोग कर सकें।

6.7 औद्योगिक स्वास्थ्य सम्बन्धी सिद्धान्त

कर्मचारियों के अच्छे स्वास्थ्य के लिये कर्मचारियों को स्वास्थ्य सम्बन्धी सिद्धान्तों के बारे में जानकारी होना आवश्यक है। अतः कर्मचारियों को केवल पर्यावरण की स्वच्छता पर ध्यान न देकर उन्हें व्यक्तिगत स्वच्छता पर भी ध्यान देना चाहिए जिससे उनका स्वास्थ्य ठीक रह सके। वास्तव में स्वास्थ्य सम्बन्धी सिद्धान्त किसी भी कर्मचारी के लिये महत्वपूर्ण होता है। यदि किसी भी कर्मचारी की नियुक्ति से पूर्व यदि कल्याण अधिकारी उसके साथ साक्षात्कार करता है तो कर्मचारी को पूर्णरूप से स्वास्थ्य सम्बन्धी सिद्धान्तों के बारे में अवगत कराना चाहिये। प्रत्येक फैक्ट्री में स्वास्थ्य वातावरण को बनाने के लिये स्वास्थ्य सम्बन्धी का पालन करना आवश्यक है। कुछ स्वास्थ्य सम्बन्धी सिद्धान्त अग्रलिखित है जिनके आधार पर कर्मचारी अपने आपको स्वस्थ्य बनाये रख सकते हैं।

1. व्यक्तिगत स्वच्छता – स्वच्छ तथा स्वस्थ्य होना व्यक्ति की व्यक्तिगत आदतों तथा भौतिक वातावरण के बीच कार्य स्थल पर होने वाले मेल जोल पर निर्भर करता है। सर्वाधिक सावधान व्यक्तिगत स्वच्छता, दूषित पर्यावरण में धूल तथा धुयें से अपने आपको बचाना है बिना किसी स्वास्थ्य देख रेख तथा स्वच्छता के व्यक्तिगत स्वच्छता अभ्यास बहुत कठिन है।

2. खानपान – किसी भी व्यक्ति को स्वस्थ्य रहने में खान पान की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। यदि व्यक्ति अपने आपको स्वस्थ्य भोजन अपनाये तो वह स्वस्थ्य रह सकता है। सामान्यतः पीने का पानी हमेशा लोगों के स्वास्थ्य के अनुरूप होना चाहिए। दूषित पानी या रंग रहित द्रव्य पदार्थ पीने से गम्भीर समस्यायें हो सकती है। जहां गम्भीर खतरनाक पदार्थ प्रयुक्त होते है या उत्पादन करने में इनका उपयोग होता है। इनका

खानपान प्रतिबन्धित होना चाहिए। गर्म या शीतल पेय पदार्थ कर्मचारियों को उनके कार्य स्थल से बाहर लेने के निर्देश होने चाहिए।

3. धूम्रपान – धूम्रपान पर नियंत्रण व्यक्तिगत प्रबन्धन तथा देखरेख एक कठिन प्रश्न उठाता है या आदत को पहचान लेने तथा कभी कभार कार्यस्थल के बाहर धूम्रपान करने का अवसर प्रदान करती है। ऐसे अवसरों का अभाव अवैध धूम्रपान को बढ़ावा देता है। कर्मचारियों को धूम्रपान सम्बन्धी खतरों के बारे में अवश्य सूचित करना चाहिए।

4. त्वचा सम्बन्धी स्वच्छता – त्वचा जो कि सबसे ज्यादा खुला भाग है तथा शरीर का सबसे संवेदनशील अंग भी है। जैसे कि घायल त्वचा भिन्न–भिन्न सूक्ष्म कीटाणुओं का केन्द्र है जो उन्हें आकर्षित करता है साथ ही साथ यह घायल त्वचा शरीर में जहर फैलने का कारण भी बन सकती है। सबसे ज्यादा त्वचा रोगी केमिकल के तत्व से होते है तथा जैविक कारक भी जीवाणु विषाणु तथा परजीवी से होने वाले त्वचा रोगों का कारण है। त्वचा की देखभाल पर विशेष बल देने की आवश्यकता है। त्वचा की स्वच्छता प्रथम है। यह नित्य स्नान तथा लगातार शरीर के खुले भागों की धुलाई से सुनिश्चित होनी चाहिए।

5. कार्य के द्वारा पहनावा – उचित वस्त्र एक औद्योगिक कर्मचारी के स्वास्थ्य रक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। वस्त्रों के चुनाव में इस बात का महत्व रखना चाहिये कि कर्मचारियों को किन परिस्थितियों में कार्य करना तथा इसका उन पर तथा कार्य क्षमता पर क्या प्रभाव पड़ेगा। कर्मचारियों के कपड़ो को धुलने का प्रबन्ध होना चाहिए। जहां बड़ी संख्या में कपड़े मुख्यतः दूषित कपड़े जिनको साफ करना आवश्यक हो फैक्ट्री में ही एक लॉण्ड्री होनी चाहिए जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि विषयुक्त कपड़े विषरहित हो जाये। एक कपड़े बदलने का कक्ष अलग से होना चाहिए जिससे कि कर्मचारी कार्य स्थल पर जाने से पहले अपने कपड़े बदल सकें।

6. स्वच्छता शिक्षा – जहां एक ओर कार्यस्थल पर रहने का स्थान कर्मचारियों को प्रदान किया जाता है वही दूसरी ओर उनको व्यक्तिगत स्वच्छता के अवसर प्रदान करने का अवसर प्रदान करना भी उनकी जिम्मेदारी है। यहां तक कि विकसित देशों में कार्य स्थल पर अच्छी आदतों को विकसित करना इसलिए भी आपत्ति में डालने में डालने वाला समझते है क्योंकि उनके घरों में ऐसी सुविधा का आभाव रहता हैं। कर्मचारियों को स्वच्छता शिक्षा के बारे में ही जानकारी देना ही आवश्यक है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि उपर्युक्त स्वास्थ्य सम्बन्धी सिद्धान्तों को अपनाकर कर्मचारी स्वस्थ्य बने रह सकते है।

6.8 व्यावसायिक बीमारियां

मानव मानवीय सभ्यता के प्रारम्भ से ही व्यापारिक स्वास्थ्य अड़चनों या अन्य प्रकार की समस्याओं का शिकार रहा है। यहां तक कि वास्तव में कोई भी नौकरी या व्यापार मुसीबतों से मुक्त नही है। हर वर्ष पूरी दुनिया में 1,80,000 कर्मचारी कार्य के

दौरान दुर्घटना या बीमारी के शिकार होकर मृत्यु को प्राप्त होते हैं। 110 लाख लोग गम्भीर घातक चोटों के शिकार होते हैं। कुछ पिछले सालों में स्वास्थ्य जोखिम कारखानों में बहुत ही तीव्रगति से बढ़ा है यह प्रतिदिन नये–नये उद्योगों के उभरने का परिणाम है। व्यावसायिक स्वास्थ्य बचाव में मुख्य भूमिका निभाता है जैसे स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का उपचार और कर्मचारी के कार्य को समझना।

6.9 व्यावसायिक बीमारियों के उपचार

व्यावसायिक बीमारियों के उपचार हेतु अग्रलिखित बिन्दु अपनाये जा सकते है–

1. कर्मचारी के स्वास्थ्य की देखरेख – यह स्वास्थ्य को बनाये रखने के प्रति कदम उठाना और उनको अच्छा कार्य का वातावरण प्रदान करना जो जोखिम भरा न हो। औद्योगिक स्वास्थ्य सेवाओं में काम करने की स्थितियों और कार्मिकों की भूमिका के प्रति कुछ समय से परिवर्तन आया है। यह परिवर्तन कार्मिकों की बहुमुखी पहुच तथा जोखिम से बचाव सम्बन्धी उपायों के निर्धारण के कारण है। विषेज्ञयों जैसे सुरक्षा अधिकारी, औद्योगिक स्वास्थ्य एवं स्वच्छता अधिकारी तथा कार्य विशेषज्ञयों को औद्योगिक स्वास्थ्य चिकित्सक के साथ कार्य करने के लिये आमन्त्रित किया जाने लगा है।

2. ज्यादा से ज्यादा विकासशील देश व्यावसायिक स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दे रहे है। वे रक्षा सम्बन्धी सेवाओं को विकसित करने तथा स्वस्थ मानव संसाधन का उचित उपयोग करने के प्रति कटिबद्ध है। व्यावसायिक स्वास्थ्य सेवा के लिए I.L.O. ने सभी सरकारों को कानून बनाने तथा व्यावसायिक स्वास्थ्य को बढ़ाने के लिए सुझाव दिया है। I.L.O. औद्योगिक सुरक्षा एवं स्वास्थ्य के समायोजन तथा सुझाव एवं कार्य वातावरण जो राष्ट्रीय नियमों को परिभाषित करता है तथा उपक्रमों में इसे कार्यान्वित करने के लिये प्रयासरत है। भारत सरकार, रायल कमीशनन 1931 सुझावों के बाद व्यावसायिक स्वास्थ्य के प्रति अधिक सचेत हुई।

किसी उद्योग में व्यावसायिक स्वास्थ्य सेवा को निम्न बिन्दुओं की ओर लक्षित होना चाहिए –

अ) स्वास्थ्य जोखिम के प्रति कर्मचारियों का बचाव, जो उनके कार्य के बाहर या अन्दर की परिस्थितियों जिनमें कार्य किया जाता है।

ब) कर्मचारियों के शारीरिक एवं मानसिक स्थिति की तरह ध्यान देना।

व्यावसायिक स्वास्थ्य सेवा की भूमिका आवश्यक रूप से प्रतिबन्धक होनी चाहिए। इसके निम्नलिखित कार्य होने चाहिए –

1. व्यावसायिक जोखिमों को पहचानना और उनके नियंत्रण के लिए मापनों का सुझाव देना।
2. व्यावसायिक या अन्य प्रकार की बीमारियों की खोज करना और प्रारम्भिक उपचार देना।
3. उचित कार्य में जनता की नियुक्ति के बारे में सलाह प्रस्तुत करना।

4. उन कार्यो के समय की उन परिस्थितियों की देखरेख से सम्बन्धित अनिवार्य सलाह प्रदान करना, जो स्वास्थ्य को नष्ट कर सकते हैं।
5. स्वास्थ्य शिक्षा को सम्मिलित करना।

6.10 व्यावसायिक बीमारियों से बचाव

कार्य के समय व्यावसायिक स्वास्थ्य सेवा कार्य समूह के आकार सम्मिलित जोखिम संयंत्र की स्थिति और अन्य कई कारकों के अनुसार बदलती रहनी चाहिए। कर्ता को फैक्ट्री की आवश्यकताओं और उसके निर्धारित जोखिमों की काट छाट करके प्रतिबंधोत्मक व्यावसायिक सेवा स्थापित करनी चाहिये। व्यावसायिक स्वास्थ्य एक बहुत बड़ा क्षेत्र तथा विभिन्न शाखाओं के विशेष ज्ञान जैसे चिकित्सा, अभियंत्रण, रसायन, विष विज्ञान मानव विज्ञान, मनोविज्ञान, सांख्यिकी तथा इन सबसे परे आपसी अनुशासनात्मक संगठित कार्य समाहित है।

देश में एक बड़ी संख्या में नियोक्ता अपने कर्मचारियों को स्वास्थ्य सेवा प्रदान नही करता। बहुत ही कम प्रतिशत नियोक्ताओं के पास उनके अपने व्यापार विशेषज्ञ होते है जो कि स्वस्थ्य कार्य वातावरण को कार्य स्थल सुनिश्चित करता है। लघु तथा मध्यम क्रम के उद्योगों की दशा सोचनीय है। यहां पर सड़क बनाने वाले, पत्थर काटने वाले निर्माण कार्य में संलग्न निजी यातायात, कृषि जैसे असंगठित श्रम में कर्मचारियों के स्वास्थ्य की देखरेख करने वाला कोई नही है। यहां पर यह ज्ञान होना चाहिये कि व्यावसायिक स्वास्थ्य प्रबंधन का उत्तरदायित्व है न कि राज्य श्रमिक बीमा संस्थान का यूनियन का उनके सदस्यों के स्वास्थ्य के प्रति भी मतभेदात्मक उपासीन रवैया है। प्रबन्धन तथा उनकी यूनियनों को न केवल अपने कर्मचारियों को स्वस्थ रखना चाहिये बल्कि उन्हें व्यावसायिक अड़चनों तथा बीमारियों तथा छूआछूत के रोग इन्फेक्शन, मनोरोग से भी मुक्त रखना चाहिये क्योंकि इससे उनकी कार्यक्षमता प्रभावित होती है।

6.11 प्रदूषण नियंत्रण

हमारा जीवमण्डल एक विशाल एवं जटिल परिस्थितिकी तंत्र है जिसमें अनेक छोटे–छोटे परिस्थितिकी तंत्र पाये जाते हैं। परिस्थितिकी तंत्र में जीवों तथा पर्यावरण के बीच संतुलन रहता है। कुछ सीमा तक पर्यावरण में होने वाले परिवर्तनों को तुरंत स्थिर करने की क्षमता परिस्थितिकी तंत्र में होती है परन्तु जब कोई विशेष अपनी सुख सुविधाओं के लिए पर्यावरण के किसी विशेष घटक का अधिक उपभोग कर उसे असंतुलित रूप में रूपान्तरित कर देता है। जिससे पूरा पर्यावरण प्रभावित होता है। इसको प्रदूषण कहा जाता है। एक मत के अनुसार, ''प्रदूषण जीवों के चारों तरफ की वायु, जल तथा पृथ्वी के भौतिक, रसायनिक तथा जैविक लक्षणों में होने वाला ऐसा अवांछनीय परिवर्तन है, जो मानव जीवन पर, औद्योगिक प्रगति पर, आवास के हालात पर तथा सांस्कृतिक मूल्यों पर दूषित प्रभाव डाल रहा है।

इस प्रकार प्रदूषण पर्यावरण को वर्वाद करना है जिससे सभी जीव जन्तु प्रभावित होते है प्रदूषण को नियंत्रित करने हेतु अग्रलिखित बिन्दु उल्लेखनीय है –

1. उद्योगों में कम प्रदूषणकारी प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाना चाहिए।
2. चिमनियों में स्थिर विद्युत अवेक्षपण के प्रयोग द्वारा गैसों से प्रदूषण पदार्थो को पृथक किया जाना चाहिए।
3. कल कारखानों की चिमनियों की ऊँचाई समुचित होनी चाहिए जिससे कि प्रदूषण गैसों से आसपास के स्थानों में कम से कम प्रदूषण हे।
4. नगर के आस–पास समुचित संख्या में पेड़–पौधे लगाने चाहिए जिससे वातावरण शुद्ध हो सके।
5. कल कारखाने नगरों से सुरक्षित दूरी पर होने चाहिए, जिससे शुद्ध वायु पर इसका असर न हो।
6. उद्योगों से निकलने वाले प्रदूषकों के निस्तारण की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।
7. मल–मूत्र, कूड़ा–करकट के निस्तारण की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।
8. मृत जीवों को जल में नही बहाना चाहिए।
9. जल को कीटाणुरहित बनाने के लिए रसायनों का उचित मात्रा में प्रयोग करना चाहिए।
10. कृषि के लिए न्यूनतम मात्रा में रसायनों का प्रयोग होना चाहिए।
11. सीजर की व्यवस्था शहरों, गांवों में भली भांति होनी चाहिए।
12. नियमित रूप से नगरपालिका द्वारा कूड़ें कचरे आदि का भली प्रकार से निस्तारण होना चाहिए।
13. उद्योगों से निकलने वाले पदार्थो का निस्तारण ठीक प्रकार से होना चाहिए।
14. प्रदूषित जल मिट्टी में एकत्रित नहीं करना चाहिए।
15. उद्योगों द्वारा उत्पन्न शोर कम करने के लिए विभिन्न तकनीकी व्यवस्थाओं का उपयोग किया जाना चाहिए।
16. मोटर वाहनों में बहुध्वनि वाले हार्न बजाने पर प्रतिबंध लगाना चाहिए।
17. उन उद्योगों में जहां शोर को सीमित करना असम्भव हो वहां श्रमिकों द्वारा कर्ण प्लग तथा कर्ण बन्दकों का प्रयोग अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए।
18. सयंत्र से निकलने वाले उच्च ताप के जल को फब्बारे के रूप में अधिक क्षेत्र में फैलने दिया जाय।
19. ताप सहन स्तर तक आ जाये तब ही उसे पुनः स्रोत में मिलने देना चाहिए।
20. राख को अधिक क्षेत्र में विखरने से रोकने के लिए कुछ कृत्रिम साधन अपनाने चाहिए।

इस प्रकार उपरोक्त बिन्दुओं को अपनाकर प्रदूषण का नियंत्रण किया जा सकता है।

6.12 पर्यावरण सुरक्षा

पर्यावरण प्राणियों एवं जीवों का एक साथी है जिसकी शक्ति व सुविधा का ज्ञान जैव जगत को तब होता है ज बवह किसी कारणवश कुछ हो जाये। खनिजों का शोषण करते समय मानव शायद ही कभी सोचता है कि वह क्या कर रहा है अथवा वायु मण्डल में जहरीली गैसों को छोड़ने से पूर्व वय यह कभी नहीं सोचता कि इनसे वायुमण्डल दूषित होगा। भारत में पर्यावरण के प्रति जागरूकता आदि काल से रही है। भारतीय मनीषियों ने हजारों वर्ष पूर्व प्राकृतिक व्यवस्था को बनाये रखने का मार्ग सुझाया था। वे मानते थे कि प्रकृति के साथ छेड़छाड़ करना जीवों के लिए खतरा पैदा करना है। हमारे उपनिषदों में पर्यावरण के तत्वों में धरती या मिट्टी को माँ (धरती माँ), पेड़ को देवता (तरूदेव), जीव को ईश्वर का अंश जल (वरूण देव), हवा (मास्त देव) और जलवायु (इन्द्र देव) को भी देवता माना गया है।

अतः आज के वर्तमान औद्योगिक युग में पर्यावरण की सुरक्षा एक महत्वपूर्ण स्वरूप है। हम अपने पर्यावरण की सुरक्षा अग्रलिखित बिन्दुओं के माध्यम से कर सकते हैं –

1. जैव विविधता को संरक्षण प्रदान करके जनता को जागरूक करना।
2. जलीय संसाधनों की सुरक्षा के उपाय करके जनता को जागरूक करना।
3. खनीज संसाधनों की सुरक्षा के उपाय करके जनता को जागरूक करना।
4. वन विनाश की समस्या से निपटना, भूक्षरण, मरूस्थलीकरण तथा सूखे के बचावों के प्रस्तावों को जनता के समक्ष रखना।
5. गरीबी की निवारण तथा पर्यावरणीय क्षति की रोकथाम करके जनता को जागरूक करना।
6. विषाक्त धुआँ विसर्जित करने वाले वाहनों पर रोक लगाकर जनता को जागरूक करना।
7. पर्यावरण ही सुरक्षा के विषय में जनता को मीटिंग करके बतलाया।
8. समुद्र तथा सागरीय क्षेत्रों की रक्षा करना एवं जैवीकीय संसाधनों का उचित उपयोग एवं विकास के उपाय बताकर जनता को जागरूकता प्रदान करना।
9. जैव तकनीकी तथा जहरीले अपशिष्टों के लिए पर्यावरण संतुलित प्रावधान की व्यवस्था करना।
10. पर्यावरण जागरूकता को वैश्विक रूप से प्रदान करना।
11. पर्यावरण से संबंधी आंदोलनों को मान्यता प्रदान करना।
12. शिक्षा द्वारा जनचेतना पर बल देना।
13. शिक्षा द्वारा पर्यावरण के अध्ययन की आवश्यकता पर बल देना।
14. पर्यावरण जागरूकता सामाजिक और भौतिक विज्ञानों के अध्ययन पर विशेष बल देना।

15. पर्यावरण सुरक्षा हेतु राज्य एवं केन्द्री स्तर पर विशेष प्रावधानों का निर्माण होना चाहिए।
16. पर्यावरण सुरक्षा के संबंधित नियम कानूनों को सख्ती से लागू करना।
17. समय–समय पर पर्यावरा सुरक्षा हेतु सेमिनार, कार्यशालाओं का आयोजन करना।
18. पर्यावरण सुरक्षा से संबंधित सूचना को सार्वजनिक जागरूकता के माध्यम से सामान्य जनता तक पहुंचाना।

इस प्रकार उपरोक्त बिन्दुओं के माध्यम से पर्यावरण की सुरक्षा की जा सकती है।

6.13 सार संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में औद्योगिक दुर्घटनाओं के बारे में प्रकाश डाला गया है तथा औद्योगिक दृर्घटनाओं के कारणों एवं उनसे बचाव के तरीको के बारे में विस्तृत चर्चा की गई है। इसी इकाई में औद्योगिक स्वास्थ्य क्या होता है तथा औद्योगिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित कारखानों में क्या–क्या उपबन्ध है के बारे में लिखा गया है। इसी इकाई में औद्योगिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित सिद्धान्तों को भी दिया गया है। व्यावसायिक बीमारियां क्या होती है तथा उसका उपचार एवं उनसे बचाव कैसे किया जाता है का वर्णन किया गया है अंत में पर्यावरण नियंत्रण कैसे किया जा सकता है तथा पर्यावरण सुरक्षा कैसे की जा सकती है के बारे में प्रकाश डाला गया है।

6.14 परिभाषिक शब्दावली

Industrial accident	औद्योगिक दुर्घटना	High Noise	उच्च शोर
Causes	कारण	Ear Pluge	कर्ण प्लग
Prevention	ब्चाव	Health Hygiene	स्वास्थ्य सम्बन्धी सिद्धान्त
Industrial Health	औद्योगिक स्वास्थ्य	Occupational	व्यावसायिक
Urinals	मूत्रालय	Disease	बीमारी
Toilet	शौचालय	Treatment	उपचार
Rag	कूड़ा	Pollution	प्रदूषण
Pestiside	कीटनाशक	Control	नियंत्रण
Polluted Water	प्रदूषित जल	Environmental Production	पर्यावरण सुरक्षा
Pollutents	प्रदूषक	Cleanlines	स्वच्छता
Higher Temperature	उच्च ताप	Dust & Fumes	धूल और धूम

6.15 अभ्यास प्रश्न – लघु, विस्तृत

1. औद्योगिक दुर्घटना क्या होती है ?
2. औद्योगिक दुर्घटना के कारणों के बारे में लिखिए ।
3. औद्योगिक दुर्घटना के आवृत्ति दर को मापने के लिए कौन से सूत्र का प्रयोग करते हैं ?
4. औद्योगिक दुर्घटना के रोकथाम पर एक निबन्ध लिखिए ।
5. औद्योगिक स्वास्थ्य क्या है ?
6. औद्योगिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित कारखानों में कौन–कौन से उपबन्ध किये गये है ?
7. औद्योगिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित सिद्धान्तों के बारे में चर्चा कीजिए ?
8. व्यावसायिक बीमारियां क्या होती हैं ?
9. व्यावसायिक बीमारियों के उपचार तथा बचाव के तरीको पर एक निबन्ध लिखिए।
10. प्रदूषण नियंत्रण क्या है ?
11. पर्यावरणीय सुरक्षा पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ।

6.15 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वर्मा जी. एस. एवं कुमारी सविता, पर्यावरण शिक्षा, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, वर्ष 2009, पेज 33–37.
2. शर्मा ए. एम., आस्पेक्टस ऑफ सोसल सेक्यूरिटी इन इण्डिया, हिमलाय पब्लिशिंग हाउस, बाम्बे, वर्ष 2002, पेज 37–39.

इकाई –7

मजदूरी एवं वेतन प्रशासन

Salary & Daily Wages Administration

इकाई की रूपरेखा

7.1 परिचय
7.2 उद्देश्य
7.3 मजदूरी एवं वेतन अर्थ तथा परिभाषा
7.4 मजदूरी एवं वेतन प्रशासन के उद्देश्य
7.5 मजदूरी एवं वेतन प्रशासन के सिद्धान्त
7.6 भारत में मजदूरी नीति
7.7 बोनस
7.8 सापेक्षिक मजदूरी तथा मजदूरी में अन्तरों के कारण
7.9 फ्रिन्ज बेनीफिट
7.10 कर्मचारी लाभों से सम्बन्धित कानून और नियम
स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न – रिक्तस्थान, विकल्पीय, एकभाषा, अतिलघु
7.11 सार संक्षेप
7.12 परिभाषिक शब्दावली
अभ्यास प्रश्न – लघु, विस्तृत
7.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

7.1 परिचय

मानवीय संसाधनों की अधिप्राप्ति के पश्चात् यह अत्यन्त आवश्यक होता है कि उन्हें संगठन के प्रति उनके योगदानों के लिए न्यायोचित रूप से पारिश्रमिक प्रदान किया जाये। पारिश्रमिक वह प्रतिपूरण है, जिसे एक कर्मचारी संगठन के लिए अपने योगदान के बदले में प्राप्त करता है। मजदूरी एवं वेतन पारिश्रमिक प्रक्रिया के प्रमुख अंग होते हैं, जिनका लक्ष्य कर्मचारियों को उनके द्वारा सम्पन्न कार्यो के लिए प्रतिपूरण प्रदान करना तथा उन्हें उनकी क्षमताओं के सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन हेतु अभिप्रेरित करना होता है। मजदूरी एवं वेतन प्रशासन को मानव संसाधन प्रबन्धन के सर्वाधिक जटिल कार्यो में से एक माना जाता है। यह न केवल मानव संसाधन प्रबन्धन का एक कार्य होता है, बल्कि यह संगठन तथा कर्मचारियों दोनों के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण भी होता है। मजदूरी अथवा

वेतन का कर्मचारियों के जीवन में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है, क्योंकि यह उनकी आर्थिक उत्तरजीविता का प्रमुख साधन होता है तथा समाज में उनकी स्थिति के निर्धारण का अत्यन्त प्रभावी कारक होता है। यह संगठन के लिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि मजदूरी एवं वेतन प्रायः उत्पादन लागत के सबसे बड़े घटकों में से एक होते हैं। इसके साथ ही, यह संगठन के लिए कुशल, सक्षम एवं योग्य कर्मचारियों को आकर्षित करने, उन्हें बेहतर कार्य–निष्पादन के लिए अभिप्रेरित करने तथा उनकी सेवाओं को दीर्घ अवधि तक के लिए बनाये रखने के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण होते हैं। इसके अतिरिक्त, प्रायः कर्मचारी–प्रबन्ध की अधिकांश समस्यायें एवं विवाद मजदूरी एवं वेतन के भुगतान को लेकर ही होती हैं, अतः यह संगठन के प्रबन्धन का दायित्व है कि वह कार्यरत कर्मचारियों को पर्याप्त मजदूरी अथवा वेतन प्रदान करते हुए उन्हें सन्तुष्ट रखे। इस प्रकार, यह किसी संगठन की उत्तरजीविता तथा विकास को काफी बड़ी मात्रा में प्रभावित करते हैं।

मजदूरी एवं वेतन का प्रभाव आय के वितरण, उपयोग, बचत, सेवायोजन तथा मूल्यों पर भी महत्वपूर्ण होता है। यह पहलू एक विकासशील अर्थव्यवस्था, जैसे – भारत में अत्यधिक महत्व रखता है, जहां कि आय के केन्द्रीकरण को क्रमिक रूप से कम करने तथा/अथवा मुद्रा–स्फीति सम्बन्धी प्रवृत्तियों से मुकाबला करने के लिए उपाय करना अनिवार्य होता है। अतः, एक सुदृढ़ मजदूरी एवं वेतन नीति का निरूपण एवं प्रशासन किसी भी संगठन का प्रमुख उत्तरदायित्व होता है, जो कि अर्थव्यवस्था के अनुरूप होना चाहिये।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- मजदूरी की परिभाषा तथा विशेषताओं को जान सकेगें।
- वेतन की परिभाषा तथा विशेषताओं को जान पायेगें।
- मजदूरी तथा वेतन के आर्थिक इतिहास के बारे में लिख सकेगें।
- सापेक्षिक मजदूरी के बारे में जान सकेगें।
- मजदूरी अन्तर के बारे में समझ सकेगें।
- भारत में मजदूरी नीति के बारे में लिख सकेगें।
- बोनस मुद्दे के बारे में लिख सकेगें।
- कार्मिक लाभों से संबंधित विभिन्न नियम कानूनों के बारे में जान सकेगें।
- फ्रिंज बेनेफिट के बारे में जान सकेगें।
- विभिन्न प्रेरणात्मक योजनाओं के बारे में लिख सकेगें।

7.3 मजदूरी एवं वेतनः अर्थ तथा परिभाषा

किसी कर्मचारी को उसके कार्य के बदले में जो पारितोषण प्राप्त होता है उसे मजदूरी अथवा वेतन कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, मजदूरी अथवा वेतन एक प्रकार की क्षतिपूर्ति राशि है, जिसे एक कर्मचारी अपनी सेवाओं के बदले में अपने सेवायोजक से प्राप्त करता है। सामान्य प्रचलन में 'मजदूरी' तथा 'वेतन' शब्दों को कभी–कभी समानार्थी समझ लिया जाता है, परन्तु दोनों में कुछ अन्तर होता है, जो कि निम्नलिखित प्रकार से है :

मजदूरी : मजदूरी से आशय उस भुगतान से है, जो सेवायोजक द्वारा कर्मचारियों को उनकी सेवाओं के बदले में पारिश्रमिक के रूप में प्रति घंटा अथवा प्रतिदिन अथवा प्रति सप्ताह अथवा प्रति द्वि–सप्ताह के आधार पर दिया जाता है। सामान्यतः, मजदूरी उत्पादन एवं अनुरक्षण में लगे हुए तथा गैर–पर्यवेक्षकीय अथवा ब्लू कॉलर कर्मचारियों को दी जाती है। मजदूरी अर्जित करने वाले कर्मचारियों को केवल उनके द्वारा सम्पन्न किये गये वास्तविक कार्य घंटों के लिए पारिश्रमिक का भुगतान किया जाता है। मजदूरी की राशि में अन्तर कार्य के घंटों में परिवर्तन के अनुरूप होता है।

वेतन : वेतन से आशय उस भुगतान से है, जो कर्मचारियों को मासिक अथवा वार्षिक आधार पर एक निश्चित राशि के रूप में दिया जाता है। लिपिकीय, व्यावसायिक, पर्यवेक्षकीय तथा प्रबन्धकीय अथवा व्हाइट कॉलर कर्मचारी सामान्यतः वेतन भोगी होते हैं। वेतन भोगी कर्मचारियों को भुगतान कार्यानुसार नहीं, बल्कि समय (मासिक अथवा वार्षिक) के आधार पर किया जाता है, जो कि सामान्यतः स्थायी रहता है।

मजदूरी एवं वेतन के बीच यह अन्तर इन दिनों मानव संसाधन अभिगम के विषय में तर्कसंगत प्रतीत नही होता, जिसमें कि सभी कर्मचारियों को मानवीय संसाधनों के रूप में माना जाता है तथा सभी को बराबरी से देखा जाता है। अतः, इन दोनों शब्दों को एक दूसरे के लिए प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार, शब्द मजदूरी तथा/अथवा वेतन को किसी कर्मचारी को एक संगठन के प्रति उसकी सेवाओं के प्रतिपूरण के लिए प्रत्यक्ष पारिश्रमिक के भुगतान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

7.3.1 न्यूनतम मजदूरी, उचित मजदूरी एवं जीवन–निर्वाह मजदूरी

1. न्यूनतम मजदूरी

न्यूनतम मजदूरी से आशय उस मजदूरी से है जो श्रमिक एवं उसके परिवार को जीवित रहने का आश्वासन प्रदान करने के साथ–साथ श्रमिक की कार्य कुशलता को भी अनुरक्षित करती है। इस प्रकार, न्यूनतम मजदूरी के अन्तर्गत यह आशा की जाती है कि यह जीवन की अनिवार्यताओं को पूरा करने के अतिरिक्त श्रमिकों की कार्यक्षमताओं को भी बनाये रखेगी, अर्थात् समुचित शिक्षा, शारीरिक आवश्यकतायें तथा सामान्य जीवन–निर्वाह के लिए भी पर्याप्त मात्रा में सुविधायें प्रदान की जायेगीं।

2. उचित मजदूी

उचित मजदूरी उस मजदूरी के समकक्ष होती है जो श्रमिकों द्वारा समान निपुणता, कठिनाई अथवा अरूचि के कार्य सम्पन्न करने के लिए प्राप्त की जाती है। मार्शल के अनुसार, ''किसी भी विशिष्ट उद्योग में मजदूरी की प्रचलित दर को उस समय ही उचित मजदूरी कहा जा सकता है, जबकि वह मजदूरी के उस स्तर के समकक्ष हो जो अन्य व्यवसायों में उन कार्यो को सम्पन्न करने के लिए औसत रूप से दी जाती है, जो समान कठिनाई एवं समान अरूचि के हों तथा जिनमें समान स्वाभाविक क्षमताओं एवं समान व्यय के प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।''

3. जीवन निर्वाह मजदूरी

जीवन निर्वाह मजदूरी से आशय कम से कम इतनी मजदूरी से है जो किसी श्रमिक की अनिवार्यताओं एवं आरामदायक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त हो। इसके अन्तर्गत प्रायः मजदूरी के उस स्तर का समावेश किया जाता है, जिससे श्रमिक केवल अपनी तथा अपने परिवार के अन्य सदस्यों की मूलभूत आवश्यकताओं को ही सन्तुष्ट करने में समर्थ नहीं होता है, बल्कि उन आरामदायक आवश्यकताओं को भी पूर्ण करने में समर्थ होता है, जिनसे वह समाज में एक सभ्य नागरिक की भांति जीवन व्यतीत कर सके।

7.4 मजदूरी एवं वेतन प्रशासन के उद्देश्य

मजदूरी एवं वेतन प्रशासन के प्रमुख उद्देश्यों को निम्नलिखित प्रकार से समझा जा सकता है :

1. समान कार्यो के लिए समान पारिश्रमिक के भुगतान को प्रदान करते हुए एक निष्पक्ष एवं न्यायसंगत पारिश्रमिक की व्यवस्था को विहित करना।
2. योग्य एवं सक्षम लोगों को संगठन के प्रति आकर्षित करना तथा उन्हें सेवायोजित करना।
3. कर्मचारियों के प्रतिस्पर्धी समूहों के साथ मजदूरी एवं वेतन स्तरों में सामंजस्य बनाये रखने के द्वारा वर्तमान कर्मचारियों को संगठन में बनाये रखना।
4. संगठन की भुगतान करने की क्षमता की सीमा के अनुसार श्रम एवं प्रबन्धकीय लागतों को नियन्त्रित करना।
5. कर्मचारियों के अभिप्रेरण एवं मनोबल में सुधार करना तथा श्रम प्रबन्ध सम्बन्धों में सुधार करना।
6. संगठन की समाज में एक अच्छी छवि को बनाने का प्रयास करना तथा मजदूरियों एवं वेतनों से सम्बन्धित वैधानिक आवश्यकताओं का अनुपालन करना।

7.5 मजदूरी एवं वेतन प्रशासन के सिद्धान्त

मजदूरी एवं वेतन प्रशासन की योजनाओं, नीतियों तथा अभ्यास के अनेक सिद्धान्त हैं। उनमें से कुछ महत्वपूर्ण निम्नलिखित प्रकार से हैं :

1. मजदूरी एवं वेतन की योजनायें तथा नीतियां पर्याप्त रूप से लचीली होनी चाहिये।
2. कार्य मूल्यांकन वैज्ञानिक तरीके से किया जाना चाहिये।
3. मजदूरी एवं वेतन प्रशासन की योजनायें सदैव सम्पूर्ण संगठनात्मक योजनाओं एवं कार्यक्रमों के अनुकूल होनी चाहिये।
4. मजदूरी एवं वेतन प्रशासन की योजनायें एवं कार्यक्रम देश के सामाजिक एवं आर्थिक उद्देश्यों, जैसे – आय के वितरण की समानता की प्राप्ति तथा मुद्रा स्फीति सम्बन्धी प्रवृत्तियों पर नियन्त्रण के अनुसार होनी चाहिये।
5. मजदूरी एवं वेतन प्रशासन की योजनायें एवं कार्यक्रम स्थानीय तथा राष्ट्रीय दशाओं के परिवर्तन के प्रति उत्तरदायी होनी चाहिये।
6. ये योजनायें अन्य प्रशासनिक प्रक्रियाओं को सरल बनाने तथा शीघ्र निपटाने वाली होनी चाहिये।

7.5.1 प्रेरणात्मक मजदूरी योजनायें

श्रमिकों को कार्य करने के लिए पर्याप्त प्रलोभन एवं प्रेरणा प्रदान करने के लिए मजदूरी भुगतान की कुछ वैज्ञानिक पद्धतियों का प्रतिपादन किया गया है। इसमें श्रमिक को कार्य सम्पन्न करने के लिए एक निश्चित समय दिया जाता है जिसके लिए निश्चित मजदूरी निर्धारित कर दी जाती है। यदि श्रमिक उस कार्य को निश्चित समय से पूर्व सम्पन्न कर लेता है अथवा इस निश्चित समय के दौरान अधिक उत्पादन कर लेता है तो उसे अधिक उत्पादन करने के प्रतिफल के रूप में अतिरिक्त धनराशि का भुगतान किया जाता है। प्रेरणात्मक मजदूरी योजनाओं का वर्णन निम्नलिखित प्रकार से हैं :

1. **समान कार्यानुसार दर योजना :** यह योजना सामान्य रूप से प्रयोग में लायी जाती है। इसके अन्तर्गत समय अध्ययन एवं कार्य मूल्यांकन के मिश्रण पर आधारित उत्पादन की प्रत्येक इकाई के लिए निर्धारित मूल्य पाया जाता है। उदाहरणार्थ, यदि यह मानक निर्धारित किया गया हो कि एक घंटे में 100 इकाइयों का उत्पादन किया जायेगा एवं प्रत्येक घंटे के लिए पांच रूपये की आधार दर पर भुगतान किया जायेगा तथा यदि श्रमिक 8 घंटे के कार्य दिवस के दौरान 1000 इकाइयों का उत्पादन करता हो तो पांच रूपये प्रति इकाई की दर पर उसकी सम्पूर्ण आय 5000 रूपये होगी। सामान्य रूप से इस व्यवस्था के अन्तर्गत अनुसूचित कार्य अवधि के लिए प्रति घंटे के अनुसार होने वाली आय का आश्वासन होता है, परन्तु अधिक उत्पादन करने पर अधिक आय का भी प्रावधान होता है।
2. **टेलर की विभेदात्मक कार्यानुसार दर योजना :** वैज्ञानिक प्रबन्ध की अवधारणा के प्रवर्तक एफ.डब्ल्यू. टेलर इस योजना के प्रतिपादक हैं। इस योजना को जारी

रखते हुए यह आशा व्यक्त की गयी थी कि यह क्षमतावान श्रमिकों को अधिक कार्य करने के लिए प्रेरणा प्रदान करेगी।

इस योजना की प्रमुख विशेषता यह है कि इस योजना में उचित कार्य का मानक निश्चित कर लिया जाता है तथा इसी के अनुसार मजदूरी का भुगतान किया जाता है। इसके साथ ही, इसमें मजदूरी की दो दरें पायी जाती हैं। इन दोनों दरों के बीच पर्याप्त अन्तर पाया जाता है। इसके अतिरिक्त, यह योजना प्रेरणादायक होने के साथ ही दण्डात्मक भी है, क्योंकि मानक की पूर्ति न कर पाने वाले श्रमिकों को निम्न दर पर मजदूरी का भुगतान किया जाता है।

3. **समूहिक कार्यानुसार दर योजना** : कभी–कभी किसी श्रमिक विशेष द्वारा किये गये कार्य तथा उसके समूह द्वारा किये गये कार्य के मध्य अन्तर कर पाना कठिन होता है। ऐसी स्थिति में सम्पूर्ण कार्य–समूह के लिए एक मानक निश्चित कर दिया जाता है। इस विशिष्ट रूप से उल्लिखित मानक से कम उत्पादन के लिए प्रति घंटा मजदूरी की दर निश्चित कर दी जाती है। इस मानक से अधिक उत्पादन के लिए एक सामूहिक बोनस निर्धारित कर दिया जाता है। यह सामूहिक बोनस इन सभी कार्य करने वाले श्रमिकों में समान दर पर अथवा यदि प्रत्येक घंटे के लिए विभिन्न श्रमिकों की आधार दर भिन्न हो तो इस आधार दर पर विभाजित कर दिया जाता है।
4. **हैल्से योजना** : इस योजना के अन्तर्गत पूर्व अनुभव के आधार पर उत्पादन के मानक तथा इसकी प्राप्ति हेतु अपेक्षित एक मानक समय निश्चित कर लिया जाता है। यदि श्रमिक इस मानक समय के व्यतीत हो जाने पर ही इच्छित मानक कार्य सम्पन्न कर पाता है तो उसे निश्चित न्यूनतम मजदूरी प्रदान की जाती है। परन्तु यदि वह इस समय के पूर्व ही अपने कार्य को सम्पन्न कर लेता है तो उसे बचाये गये समय के लिए एक निश्चित दर पर भुगतान किया जाता है। इस योजना के अन्तर्गत बचाये गये समय की गणना मानक समय से कार्य के वास्तविक घंटों को घटाने के बाद बचे हुए समय को सेवायोजक एवं श्रमिकों दोनों में समान रूप से वितरित करने हेतु दो से विभाजित करते हुए की जाती है।
5. **शत–प्रतिशत अधिलाभांश योजना** : यह योजना श्रमिकों को प्रेरणा प्रदान करने के लिए सबसे उपयुक्त है। इसमें मानक समय एवं इस समय में उत्पादित की जाने वाली मानक इकाइयों की संख्या पहले से तय कर ली जाती है। यदि कोई श्रमिक मानक समय में निर्धारित इकाइयों से अधिक इकाइयों का उत्पादन करता है तो उसे इन अतिरिक्त उत्पन्न की गयी इकाइयों पर उसी दर से अधिलाभांश दिया जाता है, जिस दर से अन्य इकाइयों का भुगतान किया जाता है।

6. **बेडो योजना :** इस योजना का प्रतिपादन चार्ल्स बेडो ने किया था। इस योजना का प्रयोग उस समय किया जाता है, जबकि सम्पादित किये जाने वाले कार्य से सम्बन्धित मानकों को सावधानीपूर्वक विकसित किया गया हो। इसमें प्रत्येक क्रिया को बिन्दुओं द्वारा व्यक्त किया जाता है। कार्य से सम्बन्धित निश्चित समय के प्रत्येक मिनट को 'एक बिन्दु' द्वारा प्रदर्शित किया जाता है तथा मजदूरी की गणना इन बिन्दुओं के आधार पर की जाती है। यदि कोई श्रमिक एक घंटे में 60 बिन्दुओं से अधिक कार्य करता है तो उसे अतिरिक्त भुगतान किया जाता है तथा यदि कोई श्रमिक 60 बिन्दुओं से कम कार्य करता है तो उसे किसी अन्य कार्य में लगा दिया जाता है। श्रमिक को बचाये गये समय के एक अंश का ही भुगतान किया जाता है। उदाहरणार्थ, बचाये गये समय का 80 प्रतिशत लाभ श्रमिकों को तथा 20 प्रतिशत लाभ कार्य से सम्बन्धित अन्य कर्मचारियों जैसे–पर्यवेक्षकों आदि को दिया जाता है।
7. **रोवन योजना :** इस योजना का प्रयोग उस समय किया जाता है, जबकि सम्पन्न किये जाने वाले कार्य से सम्बन्धित मानक असन्तोषजनक होते हैं तथा प्रबन्धकगण श्रमिकों की सम्पूर्ण आय को सीमित करना चाहते हैं। इस योजना के अन्तर्गत प्रदान की जाने वाली मजदूरी वास्तव में लगाये गये समय के लिए देय मजदूरी तथा बोनस के बराबर होती है। इस योजना के अन्तर्गत बोनस बचाये गये समय पर आधारित न होकर सम्पादित किये गये कार्य के समय पर आधारित होता है। इस योजना के अन्तर्गत बोनस की गणना निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग करते हुए की जाती हैं :

$$\text{बोनस} = \frac{\text{बचाया गया समय}}{\text{मानक समय}} \times \text{लगाया गया समय} \times \text{दर प्रति घंटा}$$

7.6 भारत में मजदूरी नीति

राष्ट्रीय नीतियों में से मजदूरी नीति आर्थिक एवं सामाजिक दोनों ही दृष्टियों से अत्यधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि श्रमिकों की सामान्य स्थिति, कार्य कुशलता, कार्य करने की इच्छा, कार्य के प्रति वचनबद्धता, मनोबल, श्रम–प्रबन्ध सम्बन्ध तथा श्रमिकों का सम्पूर्ण जीवन इससे प्रभावित होते हैं।

भारत में सर्वप्रथम श्रम आयोग द्वारा मजदूरी नियमन की दिशा में सरकारी हस्तक्षेप की संस्तुति की गयी। इस आयोग ने यह विचार व्यक्त किया कि मजदूरी भुगतान की वैधानिक व्यवस्था तथा न्यूनतम मजदूरी निर्धारण के लिए मजदूरी बोर्डो की नियुक्ति की व्यवस्था की जानी चाहिये। इसकी संस्तुतियों के आधार पर 1936 में मजदूरी भुगतान अधिनियम के पारित किये जाने का बावजूद भी सम्बन्धित मजदूरी नीति

में कोई विशेष प्रगति न हो सकी। मजदूरी सम्बन्धी नीति के नियमन के क्षेत्र में द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् ही राज्य का सक्रिय हस्तक्षेप प्रारम्भ हुआ। श्रम जांच समिति ने मजदूरी निर्धारण के सन्दर्भ में वैज्ञानिक मनोवृत्ति के अपनाये जाने पर बल दिया। इसके द्वारा मजदूरी नीति के तीन विशिष्ट तत्व स्पष्ट किये गये :

1. कठिन परिश्रम वाले उद्योगों, व्यवसायों एवं कृषि में न्यूनतम मजदूरी का वैयक्तिक रूप से निर्धारण।
2. उचित मजदूरी सम्बन्धी अनुबन्धों को प्रोत्साहन।
3. बागानों में कार्य करने वाले श्रमिकों के लिए जीवन–निर्वाह मजदूरी प्रदान करने की दिशा में किये गये प्रयास।

1947 के औद्योगिक शान्ति प्रस्ताव में कठोर परिश्रम की अपेक्षा करने वाले उद्योगों में वैधानिक रूप से न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने एवं आर्थिक संगठित उद्योगों में उचित मजदूरी सम्बन्धी अनुबन्धों को प्रोत्साहित करने पर बल दिया गया। इस प्रस्ताव के अनुपालन में न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 पारित किया गया तथा उचित मजदूरी समिति एवं लाभ–सहभाजन समिति का गठन किया गया।

1950 में लागू भारतीय संविधान में वर्णित राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों के अन्तर्गत मजदूरी सम्बन्धी नीति व्यक्त की गयी है, जो कि इस प्रकार है : ''स्त्रियों एवं पुरुषों दोनों के लिए समान कार्य के लिए समान भुगतान हो'' (चतुर्थ भाग, अनुच्छेद 39–द) तथा ''राज्य उपयुक्त विधान अथवा आर्थिक संगठन अथवा अन्य किसी प्रकार से कृषि से सम्बन्धित, औद्योगिक अथवा अन्य सभी श्रमिकों के कार्य, जीवन–निर्वाह मजदूरी, सभ्य जीवन स्तर एवं रिक्त समय तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक अवसरों के पूर्ण आनन्द को प्रदान करने वाली कार्य की शर्तो को प्रदान करने के लिए प्रयत्न करेगा'' (अनुच्छेद 43)।

'समान कार्य के लिए समान पारिश्रमिक' सम्बन्धी नीति निर्देशक सिद्धान्त को, समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 नामक एक विशिष्ट विधान पारित करते हुए कार्यात्मक रूप प्रदान किया गया।

इसके अतिरिक्त, प्रथम पंचवर्षी योजना से लेकर वर्तमान समय तक जितनी भी योजनायें लागू की गयी है उनमें मजदूरी के विषय में विशेष रूप से प्रावधान किये गये हैं।

7.7 बोनस

उत्पादकता में अधिकतम वृद्धि के इच्छित राष्ट्रीय उद्देश्य की प्राप्ति के लिए बोनस सहित अनेक प्रकार की योजनायें चलायी जाती रही हैं। बोनस एक प्रकार का प्रलोभन है। प्रलोभन शब्द का प्रयोग उत्साहित करने वाली एक ऐसी शक्ति को सम्बोधित करने के लिए किया जाता है, जिसका समावेश एक लक्ष्य की प्राप्ति के सक साधन के रूप में किया जाता है।

'बोनस' शब्द को मजदूरी के अतिरिक्त श्रमिकों के पुरस्कार के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। भारत में बोनस भुगतान का प्रारम्भ प्रथम विश्व युद्ध के समाप्त होने के बाद हुआ। अनेकों गोष्ठियों, समितियों, आयोगों एवं न्यायिक संस्थाओं ने समय–समय पर बोनस के भुगतान की संस्तुति की थी। परिणामस्वरूप 1961 में एम. आर. मेहर की अध्यक्षता में बोनस आयोग का गठन किया गया। इस आयोग ने 1964 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इसी वर्ष सरकार ने आयोग द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रतिवेदन की सिफारिशों को कुछ संशोधनों के साथ स्वीकार कर लिया। आयोग द्वारा प्रस्तुत की गयी सिफारिशों की कार्यान्वित करने के लिए सरकार ने 1965 में एक अध्यादेश जारी किया जिसका स्थान बाद में बोनस भुगतान अधिनियम, 1965 ने लिया। इस प्रकार, बोनस के भुगतान को उत्पादकता के साथ सम्बन्धित करने तथा बोनस को प्रलोभन के रूप में प्रयोग में लाने को वैधानिक स्वीकृति प्रदान कर दी गयी।

7.8 मजदूरी–अन्तर, मजदूरी भुगतान पद्धतियां एवं प्रेरणाएं

सामान्य मजदूरियों के सम्बन्ध में उन सामान्य सिद्धान्तों की व्याख्या की गयी है जो श्रमिकों को मिलने वाले राष्ट्रीय लाभांश या आय के भाग को निर्धारित करते हैं।

➢ सापेक्षिक मजदूरी तथा मजदूरी में अन्तरों के कारण

सापेक्षिक मजदूरी की समस्या कुछ अलग है। इस सम्बन्ध में हमें विभिन्न रोजगारों एवं धन्धों या जगहों या रोजगार वर्गो तथा एक ही रोजगार या वर्ग के विभिन्न व्यक्तियों के बीच मजदूरियों में अन्तर के कारणों की व्याख्या करनी होती है। हर जगह मजदूरी की प्रवृत्ति श्रमिकों की सीमान्त उत्पादकता के करीब होने की होती है जो विभिन्न रोजगारों या वर्गो में अलग–अलग होती है। यह हर तरह के श्रमिकों की मांग उनकी कमी की मात्रा के साथ अलग–अलग होती है। यदि रोजगार के पूरे क्षेत्र में श्रमिकों की स्वतन्त्र गतिशीलता होती तो वास्तविक मजदूरी की प्रवृत्ति हर तरह के काम में लगे हुए श्रमिकों की सापेक्षिक कुशलता के अनुपात में रहने की होती तथा एक ही स्तर की कुशलता वाले श्रमिकों की वास्तविक मजदूरी (नकद मजदूरी नहीं) बराबर होनी की प्रवृत्ति रखती। वास्तविक जीवन में श्रमिक एक रोजगार से दूसरे में खास तौर से विभिन्न वर्गो के बीच आजादी से नहीं आ जा सकते। विभिन्न वर्गो की प्रवृत्ति 'अप्रतियोगी समूहों' के हो जाने की ओर होती है।

व्यावहारिक जीवन में मजदूरी में अन्तर पाया जाता है जो विभिन्न रोजगार, धन्धों या जगहों में श्रमिकों के बीच या एक ही धन्धे में काम करने वाले श्रमिकों के बीच होता है। मजदूरी अन्तर पैदा करने वाले कारण इस प्रकार हैं : (1) श्रम बाजार में अप्रतियोगी समूहों के होने के कारण मजदूरी अन्तर – श्रमिक एकरूप नहीं होते, उनमें मानसिक तथा शारीरिक गुणों तथा शिक्षा एवं प्रशिक्षण को देखते हुए अन्तर होता है। अतः श्रमिकों को विभिन्न वर्गो या समूहों में बांटा जा सकता है। किसी वर्ग या समूह के अन्दर

श्रमिकों में प्रतियोगिता होती है, किन्तु विभिन्न समूहों के बीच प्रतियोगिता नही होती जिससे इन्ळें 'अप्रतियोगी समूह' कहते हैं। हर अप्रतियोगी समूह में श्रमिकों की मजदूरी उनकी मांग एवं पूर्ति की दशाओं के मुताबि निर्धारित होगी और इन समूहों की मजदूरियों में अन्तर होगा। अप्रतियोगी समूहों के अन्दर भी अप्रतियोगी समूह होते हैं (जैसे डॉक्टरों के अप्रतियोगी समूह के अन्दर दिमाग के सर्जनों का अप्रतियोगी, समूह होता है)। विभिन्न अप्रतियोगी समूह अक्सर नीची मजदूरी वाले रोजगार से ऊंची मजदूरी वाले रोजगारों में श्रमिकों की गतिशीलता में कठिनाइयों के कारण पैदा होते हैं। यह कठिनाइयां विभिन्न सामाजिक अथवा आर्थिक कारणों से हो सकती हैं। यह यातायात सुविधाओं की कमी, पारिवारिक बन्धनों के होने या जाति सम्बन्धी रुकावटों एवं अच्छे प्रशिक्षण के साधनों की कमी, आदि के कारण भी हो सकती है। इस तरह अप्रतियोगी समूहों एवं उनके अन्तर्गत भी अप्रतियोगी समूहों (एक–दूसरे के लिए आंशिक रूप से स्थानापत्र होते हैं) की मजदूरियों में अन्तर पाये जाते हैं। (2) समकारी अन्तर मजदूरी के वे अन्तर जो कार्यो के अमौद्रिक लाभों के अन्तर के हरजाने का काम करते हैं उन्हें समकारी अन्तर कहा जाता है। अमौद्रिक तत्व जो विभिन्न कार्यो या धन्धों में मजदूरी में अन्तर पैदा करते हैं वे ये हैं : **(1) रोजगार की प्रकृति सम्बन्धी अन्तर** – जिन धन्धों में श्रमिकों का काम अस्थायी तथा अनियमित होता है उनमें मजदूरी स्थायी तथा नियमित काम करने वाले धन्धों की अपेक्षा ज्यादा होती है क्योंकि अस्थायी कार्य वाले धन्धे के श्रमिक बीच–बीच में बेरोजगार हो जाते हैं और खाली समय अपने भरण–पोषण का खर्च निकालने के लिए वे अपेक्षाकृत ऊंची मजदूरी पर काम करना चाहेंगे। **(2) कार्य की पसन्दगी अथवा सामाजिक प्रतिष्ठा सम्बन्धी अन्तर** – प्रायः उन रोजगारों जहां काम आमतौर से पसन्द नहीं किया जाता या जिनमें सामाजिक प्रतिष्ठा होती है, दूसरे रोजगारों की तुलना में ज्यादा मजदूरी दी जाती है, किन्तु कुछ ऐसे कार्यो में जो अकुशल श्रमिकों के द्वारा किये जाते हैं जो सामाजिक या दूसरी कमजोरियों के कारण दूसरा काम नहीं कर सकते (जैसे भारत में सफाई कर्मचारी) मजदूरियां नीची हो सकती हैं। **(3) धन्धों की प्रकृति सम्बन्धी अन्तर** – मुश्किल एवं खतरनाक धन्धों में आमतौर से आसानी से एवं सुरक्षित रूप से किये जा सकने वाले धन्धों की अपेक्षा ज्यादा मजदूरी होती है। **(4) व्यवसाय या काम को सीखने में कठिनाई या लागत सम्बन्धी अन्तर** – आमतौर से जो व्यक्ति कठिन धन्धों या कार्यो को अच्छी तरह से सीख सकते हैं उनकी संख्या कम होती है और फलस्वरूप उनकी पूर्ति उनकी मांग से कम होती है। अतः उनकी मजदूरियां प्रायः दूसरों की तुलना में ऊंची होती है। **(5) कार्य की जिम्मेदारी एवं विश्वसनीयता सम्बन्धी अन्तर** – कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिनमें जिम्मेदारी तथा विश्वास की जरूरत होती है, जैसे बैंक के मैनेजर का कार्य, मिल मैनेजर का कार्य, आदि। ऐसे कार्यो के लिए आमतौर से दूसरों की तुलना में ऊंची मजदूरी होती है। **(6) भविष्य में उन्नति की आशा** – जिन धन्धों में श्रमिकों के लिए भविष्य में उन्नति के अच्छे मौके

होते हैं उनमें शुरूआत में मजदूरी अपेक्षाकृत कम हो सकती है। **(7) सुविधाओं का होना** – जिन धन्धों में श्रमिकों को नकद मजदूरी के अलावा दूसरी बहुत–सी सुविधाएं (जैसे छोटे–बड़े बच्चों की निःशुल्क शिक्षा, निःशुल्क चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएं, आवास सम्बन्धी सुविधाएं), आदि मिलती हैं उनमें श्रमिकों की मजदूरी अपेक्षाकृत कम होती है। **(3) असमकारी अन्तर** – चूँकि वास्तविक जगत में सभी श्रमिक एकरूप नहीं होते, उनकी मजदूरियों में सभी अन्तरों की व्यवस्था 'समकारी अन्तरों' द्वारा नहीं की जा सकती। एक ही व्यवसाय या समान कार्यो में लगे हुए श्रमिकों की मजदूरी में अन्तर की व्याख्या 'असमकारी अन्तरों' द्वारा की जाती है जिन्हें दो उपवर्गो में रखा जा सकता है – **(अ) बाजार की अपूर्णताएं** – कई तरह की अगतिशीलताएं (भौगोलिक, संस्थागत या सामाजिक), एकाधिकारी प्रवृत्तियां तथा सरकारी हस्तक्षेप बाजार की अपूर्णताओं को जन्म देते हैं। किसी व्यवसाय में मजबूत श्रमिक संघ के होने या श्रमिकों में एकाधिकार की स्थिति या सरकार द्वारा न्यूनतम मजदूरी के निर्धारण, आदि के कारण मजदूरी अपेक्षाकृत अच्छी या ऊंची हो सकती है। इसके अलावा एक ही व्यवसाय में दो जगहों या क्षेत्रों में मजदूरी अन्तर श्रमिकों की भौगोलिक अगतिशीलताओं के कारण हो सकते हैं **(ब) श्रमिकों के गुणों या उनकी कुशलता में अन्तर होना** – विभिन्न श्रमिकों की योग्यताओं में अन्दरूनी गुणों, शिक्षा, प्रशिक्षण या उन दशाओं के कारण जिनमें कि काम किया जाता है अन्तर होता है। जब कुशलता ही अलग–अलग होती है, मजदूरी में अन्तर जरूर होगा।

ऊपर बताये गये कारण विभिन्न रोजगारों और वर्गो की दिशा में श्रमिकों की पूर्ति के उनकी मांग के साथ समायोजन को प्रभावित करके मजदूरी अन्तर पैदा करते हैं। हर दशा में मजदूरी का निर्धारण श्रमिकों की मांग के सम्बन्ध में सीमितता की मात्रा या हर तरह के कार्य के सम्बन्ध में श्रमिकों की सीमान्त उत्पादकता द्वारा होता है।

7.9 फ्रिन्ज बेनीफिट

फ्रिन्ज बेनीफिट से आशय उस बेनीफिट से है जो नियोजकों द्वारा कर्मचारियों को नियमों द्वारा उल्लेखित न होते हुये भी दिये जाते हैं। कुछ फ्रिन्ज बेनीफिट कर्मचारियों के लिये अतिलाभदायक तथा प्रेरणात्मक होते है। फ्रिन्ज बेनीफिट में वेतन के साथ अवकाश एक महत्वपूर्ण बेनीफिट है। जिसमें कर्मचारियेां को एक वर्ष के कुछ दिन सवेतन अवकाश प्रदान किया जाता है। कुछ कम्पनियों द्वारा फ्रिन्ज बेनीफिट के रूप में कर्मचारियों को कार्य के बाद शिक्षा प्रदान की जाती है जिससे कर्मचारियेां के ज्ञान में वृद्धि हो सके तथा उनका मनोवल ऊंचा उठ सके। अन्य फ्रिन्ज बेनीफिट सेवाओं में कर्मचारियों को कम्पनी द्वारा क्रेडिट कार्ड तथा स्वास्थ्य क्लब सदस्यता भी प्रदान की जाती है जिससे वे आकस्मिक अवसर पर लाभ उठा सके।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जिस प्रकार कम्पनी द्वारा अन्य लाभ की सेवायें कर्मचारियों को प्रदान की जाती है उससे हटकर कर्मचारियों के मनोबल को ऊंचा उठाने

के लिये जो लाभ प्रदान किये जाते है जिनका नियमों में उल्लेख नही होता है वे फ्रिन्ज बेनीफिट के अन्तर्गत आते है।

7.10 कर्मचारी लाभ से संबंधित कानून और नियम

1. श्रमिक क्षतिपूर्ति संशोधित अधिनियम, 1984

यह अधिनियम मार्च 1923 में पारित किया गया और 1 जुलाई 1924 से लागू हुआ। इसमें अब तक कई बार संशोधन किये जा चुके हैं और अन्तिम संशोधन 1984 में किया गया है। इन संशोधनों का उद्देश्य अधिनियम के सीमा–क्षेत्र को बढ़ाना व व्यवस्था को अधिक उपयोगी तथा प्रभावशाली बनाना रहा है। इसके अधीन श्रमिक हर्जाना की व्यवस्था किसी रोजगार सम्बन्धी चोट या व्यावसायिक रोग के कारण श्रमिक की मृत्यु या असमर्थता के दुख को दूर करने के लिए की गयी है तथा इसका व्यय केवल सेवायोजक को उठाना पड़ता है। यह व्यवस्था औद्योगिक दुर्घटनाओं से श्रमिक के संरक्षण के लिए, सेवायोजक के दायित्व के सिद्धान्त का प्रतिपादन करती है।

इसके अन्तर्गत क्षतिपूर्ति का अधिकार किसी श्रमिक को उसी समय होता है जब **(अ)** कोई दुर्घटना या रोग हुआ हो; तथा **(ब)** वह दुर्घटना या रोग काम के अन्तर्गत और काम के दौरान हुआ हो। यह अधिनियम संस्था के सभी श्रमिकों पर लागू होता है चाहे उनका वेतन कितना हो क्यों न हो। जो श्रमिक कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 के अन्तर्गत शामिल है वे भी इसके अन्तर्गत क्षतिपूर्ति पाने के अधिकारी नहीं हैं। अधिनियम के अन्तर्गत धारा 3(1) के अनुसार सेवायोजक इन दशाओं में क्षतिपूर्ति के लिए जिम्मेदार नही होगा, **(क)** किसी भी ऐसी चोट के सम्बन्ध में जिसके कारण श्रमिक पूरी तरह या आंशिक रूप से 3 दिन से अधिक दिनों के लिए अयोग्य न हों; **(ख)** किसी भी ऐसी चोट के सम्बन्ध में जिसके फलस्वरूप श्रमिक की मृत्यु न हो और दुर्घटना प्रत्यक्ष रूप से इन कारणों से हुई हो : **(1)** दुर्घटना श्रमिक के शराब या दूसरी चीज से प्रभावित होने के फलस्वरूप हो जाय; **(2)** श्रमिक ने अपनी सुरक्षा के लिए दिये गये किसी स्पष्ट आदेश या सुरक्षा के लिए बनाये गये किसी स्पष्ट नियम का जानबूझकर उल्लंघन किया हो, **(3)** श्रमिकों की सुरक्षा के लिए रक्षक या दूसरे साधनों की व्यवस्था की गयी है, यह जानते हुए भी उसे जान–बूझकर कोई श्रमिक हटाता हो या उसका उपयोग नहीं करता हो। शारीरिक चोट के अतिरिक्त कुछ व्यावसायिक रोगों की दशा में भी जिन्हें अधिनियम की तीसरी अनुसूची में शामिल किया गया हो, क्षतिपूर्ति देनी होती है। राज्य सरकारों को अधिकार है कि वे इस सूची में नये रोगों को भी जोड़ सकती है।

2. प्रसूति लाभ अधिनियम, 1961

प्रसूति लाभ महिला कर्मचारी को बच्चे के जन्म के पहले तथा बाद में काम पर अनुपस्थित रहने पर दिया जाता है। यह अनुपस्थिति अनिवार्य होती है जिससे स्वयं माता तथा उसके बच्चे के स्वास्थ्य पर बुरा असर न पड़े। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के 19191 के कन्वेंशन ने 12 सप्ताह की छुट्टी के लिए व्यवस्था की थी। भारत सरकार

उस कन्वेंशन को कुछ कठिनाइयों के कारण (जैसे महिला श्रमिकों का प्रवासी स्वभाव, बच्चा होने के पहले पांव चले जाने की प्रथा और डॉक्टरी सर्टीफिकेट दे सकने वाली महिला डॉक्टरों की कमी होने से) अपने देश में लागू नहीं कर सकी। फिर भी बहुत–सी राज्य सरकारों ने समय–समय पर इस विषय में कानून बनाये जैसे बम्बई राज्य द्वारा 1929, मध्य प्रदेश में 1930 में, मद्रास में 1934 में, दिल्ली में 1937 में, उत्तर प्रदेश में 1938 में, बंगाल में 1939 में, पंजाब में 1943 में, असम में 1943 में, बिहार में 1945 में, महाराष्ट्रं 1948 में तथा राजस्थान व उड़ीसा में 1953 में। विभिन्न अधिनियमों में सीमा क्षेत्र पात्रता शर्तो लाभ दरों एवं लाभ अवधियों को देखते हुए, बहुत अन्तर रहता था अतः भारत सरकार ने एकरूपता लाने के उद्देश्य से 1961 में एक नया प्रसूति लाभ अधिनियम पारित किया। इस अधिनियम में यह व्यवस्था है कि महिला श्रमिक के एक वर्ष से 160 दिन के सेवाकाल के पूरा कर लेने पर 6 सप्ताह की छुट्टी औसत वेतन पर दी जायेगी। इसके अतिरिक्त नियोक्ता द्वारा 25 रुपये चिकित्सा भत्ते के रूप में और दिये जायेगें।

अधिनियम की व्यवस्थाओं के अनुसार कोई भी सेवायोजक किसी भी महिला श्रमिक को उसकी प्रसूति या अकाल–प्रसव की तारीख के बाद 6 सप्ताह की अवधि में जानबूझकर किसी भी इकाई में काम पर नहीं लगायेगा। हर महिला श्रमिक को उसकी प्रसूति की तारीख के पहले अनुपस्थिति की वास्तविक अवधि तथा प्रसूति की तारीख के बाद 6 हफ्तों के लिए प्रसूति लाभ पाने का अधिकार होगा। सेवायोजक उसे औसत दैनिक मजदूरी की दर से इस लाभ का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होगा। औसत दैनिक मजदूरी से आशय सम्बन्धित महिला श्रमिक की ऐसे तीन कलैण्डर माह की मजदूरी के दैनिक औसत से है जो उसके मातृत्व के कारण अनुपस्थित रहने की तारीख के पहले आते हों। अधिनियम में पात्रता अवधि उसकी प्रसूति की आशा की गयी तारीख के ठीक पहले के 12 महीनों में कम से कम 160 दि (जबरी छुट्टी के दिनों को शामिल करते हुए) की सेवा है। मातृत्व लाभ पाने की पात्रता रखने वाली हर महिला श्रमिक अपने सेवायोजक को निर्धारित प्रारूप में लिखित सूचना दे सकती जिसमें यह उल्लेख होगा कि इस अधिनियम के अन्तर्गत उसे मिलने वाले मातृत्व लाभ तथा दूसरी रकम का भुगतान उसे स्वयं या उसके द्वारा ऐसी सूचना में नामांकित व्यक्ति को किया जाय तथा वह लाभ पाने के दौरान किसी भी संस्था में काम नहीं करेंगी।

3. कर्मचारी राज्य बीमा संशोधित अधिनियम, 1984

यह अधिनियम पूरे भारत के मौसमी कारखानों को छोड़कर सभी कारखाने में, जो शक्ति द्वारा चलाये जाते हैं और 10 या ज्यादा श्रमिकों को नियुक्त करते हैं, या बिना शक्ति के 20 या इससे अधिक श्रमिक कार्य करते हैं, लागू होता है। इसमें यह व्यवस्था की गयी है कि इसे किसी भी संस्था या संस्थाओं पर, जो औद्योगिक हों या व्यापारी या कृषि सम्बन्धी या अन्य, पूरी तरह या आंशिक रूप से लागू किया जा सकता है। इसमें

दी हुई 'कर्मचारी' शब्द की परिभाषा में शारीरिक श्रमिक वर्ग तथा लिपिक, सुपरवाइजरी एवं टेकनिकल कर्मचारी शामिल है किन्तु यह उन पर लागू नही होता जिनका वेतन या मजदूरी 1600 रुपये मासिक से ज्यादा है। यह जहाजी, फौजी या हवाई सेनाओं के कर्मचारियों पर भी लागू नहीं होता।

बीमा योजना का प्रशासन कर्मचारी राज्य बीमा निगम को सौंपा गया है। इसमें केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों, सेवायोजकों एवं कर्मचारियों के संगठनों, डॉक्टरों पेशे तथा संसद सदस्यों के प्रतिनिधि शामिल है। एक छोटी समिति, जो स्थायी समिति कहलाती है, निगम के सदस्यों में से चुनी जाती है तथा निगम की कार्यकारिणी का कार्य करती है। एक चिकित्सा लाभ कौंसिल निगम को चिकित्सा लाभों के प्रशासन आदि से सम्बन्धित मामलों पर सलाह देती है। निगम का मुख्य प्रशासन महानिदेशक होता है, जो क्षेत्रीय एवं स्थानीय कार्यालयों के द्वारा प्रशासन करता है। राज्यक्रम से क्षेत्रीय बोर्ड भी स्थापित किये गये है।

योजना की वित्त व्यवस्था कर्मचारी राज्य बीमा कोष द्वारा की जाती है जिसमें सेवायोजकों और कर्मचारियों के चन्दे एवं केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों, स्थानीय संस्थाओं या किसी भी व्यक्ति या संस्था के अनुदान, दान एवं उपहार शामिल होते है। केन्द्रीय सरकार ने नियम को पहले पांच वर्षो में एक वार्षिक अनुदान देना मंजूर किया था जो निगम के प्रशासन के खर्चो (लाभों की लागत शामिल न करते हुए) के दो–तिहाई के बराबर था। राज्य सरकारें भी योजना में चिकित्सा एवं सेवा की लागत के एक भाग के रूप में हिस्सा लेती है। खर्च का कितना अनुपात राज्य सरकारें पूरा करेंगी यह नियम के साथ उनके समझौतों पर छोड़ दिया गया है। अधिनियम में उन उद्देश्यों की सूची दी गयी है जिन पर कि कोष खर्च किया जा सकता है। मुख्य नियोक्ता पर ही अपना तथा अपने कर्मचारियों के चन्दों की रकम के भुगतान की जिम्मेदारी है। इस तरह कर्मचारियों का चन्दा नियोक्ता द्वारा उनकी मजदूरियों में से काट लिया जाता है। किसी कर्मचारी के सम्बन्ध में देय मासिक चन्दे की रकम उस माह में उसकी औसत कमायी पर निर्भर होती है तथा चन्दे हर माह के सम्बन्ध में, जिसके पूरे या आंशिक भाग में किसी कर्मचारी की नियुक्ति हुई हो और उसने मजदूरी प्राप्त की हो, देय होते हैं। अधिकृत छुट्टी, वैध हड़ताल या तालाबन्दी की दशा को छोड़कर ऐसे किसी माह के लिए चन्दा देय नहीं होता जिसमें सेवाएं न दी गयी हों और जिसके सम्बन्ध में कोई मजदूरी देय न हुई हो। संशोधित अधिनियम के अन्तर्गत अब 27 जनवरी, 1985 से मालिक का चन्दा कर्मचारियों के मासिक वेतन का 5 प्रतिशत व कर्मचारियों का चन्दा 2 प्रतिशत होगा। लेकिन उन कर्मचारियों को कोई चन्दा नहीं देना होगा जिनका वेतन 6 रुपये प्रतिदिन से अधिक नहीं है। परन्तु मालिक को वेतन का 5 प्रतिशत अवश्य देना होगा।

अधिनियम के अन्तर्गत बीमाशुदा व्यक्तियों, उनके आश्रितों तथा अन्य व्यक्तियों को निम्न लाभ पाने का अधिकार है :

1. **बीमारी लाभ** – व्यक्ति की बीमारी की दशाओं में उसे सामयिक भुगतान किया जायेगा जिसे बीमारी लाभ कहेगें। बीमारी की जांच निगम के डॉक्टर या दूसरे डॉक्टर द्वारा होना आवश्यक है। बीमारी लाभ की दैनिक दर कर्मचारी की औसत दैनिक मजदूरी के आधे के बराबर होती है, किन्तु चूँकि लाभ बीमारी के सभी दिनों के लिए जिनमें इतवार और अन्य छुट्टियां शामिल है, दिया जाता है, इसलिए लाभ की दर मजदूरी के लगभग 7/12 भाग के बराबर होती है। यह लाभ पहले दो दिनों की बीमारी के लिए नहीं दिया जायेगा यदि बीमारी का दौर 15 दिन के भीतर दुबारा नहीं आता है।
2. **प्रसूति लाभ** – एक सामयिक नकद भुगतान के रूप में प्रसूति लाभ महिला श्रमिक को 12 हफ्ते के लिए, जिनमें से बच्चा होने की आशा की गयी तारीख से पहले 6 हफ्ते से ज्यादा के लिए नहीं होगा, देने की व्यवस्था की गयी है। इसकी पात्रता का प्रमापीकरण निर्धारित अधिकारी द्वारा होना आवश्यक है।
3. **असमर्थता लाभ** – यदि कोई बीमाशुदा व्यक्ति इस अधिनियम के अन्तर्गत कर्मचारी के रूप में काम करते हुए किसी व्यावसायिक चोट जिसमें अधिनियम की तीसरी अनुसूची में दिये गये कुछ व्यावसायिक रोग शामिल है कि फलस्वरूप होने वाली असमर्थता से पीड़ित हो जाता है उसे एक आवधिक भुगतान का लाभ पाने का अधिकार है। असमर्थता लाभ की पात्रता का प्रमापीकरण निर्धारित अधिकारी द्वारा होना आवश्यक है।
4. **आश्रित लाभ** – यदि कोई बीमाशुद्धा व्यक्ति किसी व्यावसायिक चोट के फलस्वरूप मर जाता है तो अधिनियम के अन्तर्गत जिन आश्रितों को क्षतिपूर्ति पाने का अधिकार है उन्हें आवधिक भुगतान दिया जायेगा जिसे आश्रित लाभ कहा जायेगा।
5. **डॉक्टरी या चिकित्सालय लाभ** – इस लाभ की व्यवस्था सबसे अधिक महत्व है क्योंकि यह लाभ वह धुरी है जिस पर सारी प्रणाली घूमती है। यदि किसी बीमाशुद्धा व्यक्ति या उसके परिवार के किसी सदस्य (यदि डॉक्टरी लाभ बीमाशुद्धा व्यक्ति के परिवार को भी दिया जाता हो) की दशा ऐसी है कि उसे डॉक्टरी इलाज या सेवा की आवश्यकता है तो उसे यह लाभ पाने का अधिकार होता है। यह लाभ बीमारी, व्यावसायिक चोट या प्रसूति की दिशा में बिना किसी शुल्क के डॉक्टरी इलाज के रूप में होता है।
6. **अन्त्येष्टि क्रिया सम्बन्धी लाभ** – 1966 के संशोधित अधिनियम के अन्तर्गत 17 जून, 1969 से यदि किसी बीमाशुद्धा व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो उसके

परिवार के सबसे बुजुर्ग जीवित सदस्य को बीमाशुद्धा व्यक्ति की अन्त्येष्टि क्रिया सम्बन्धी खर्च का भुगतान करने का लाभ दिया जाता है।

4. कोयला खान भविष्य निधि एवं विविध व्यवस्थाएं अधिनियम 1948

एक भविष्य निधि योजना पं. बंगाल और बिहार में सभी कोयला खानों में लागू की गयी जो बाद में धीरे–धीरे मध्य प्रदेश, असम, उड़ीसा, महाराष्ट्र सहित सारे भारत की कोयला खानों में भी लागू कर दी गयी। इस समय इस योजना के अन्तर्गत 1001 कोयला खाने तथा सहायक संगठनों के 6 लाख 78 हजार श्रमिक सदस्य है। इस समय देश के विभिन्न कोयला क्षेत्रों के कोष के प्रशासन के लिए 8 क्षेत्रीय कार्यालय है। प्रारम्भ में सदस्यों द्वारा कोष में अनिवार्य अंशदान की दर श्रमिकों की कुल आमदनी का 8 प्रतिशत कर दिया गया तथा सेवायोजकों का अंशदान इसके बराबर रहता है। जून 1963 से सदस्यों के लिए यह ऐच्छिक कर दिया गया है कि यदि वे चाहें तो अपने अनिवार्य अंशदान के अलावा 8 प्रतिशत की दर से अधिक अंशदान दे सकते हैं, किन्तु सेवायोजकों को इसके बराबर कोई अंशदान नही देना होता। कोष की उस रकम के विनियोग का स्वरूप जो बाहर जाने वाले सदस्यों की वापसी के लिए तुरन्त आवश्यक नही होती, ट्रस्टी बोर्ड द्वारा निर्धारित किया गया है। किसी सदस्य की सेवा से निवृत्ति की आयु छंटनी, कार्य के लिए पूर्ण असमर्थता अथवा उसकी मृत्यु की दशा में वह कोष में से ब्याज सहित अपने 'जमा' में पड़ी हुई सारी इकट्ठा हुई रकम वापस ले सकता है। दूसरी दशाओं में श्रमिक के प्रति देय सेवायोजक के अंशदान का एक भाग सदस्यता की अवधि के आधार पर इस प्रकार काटा जाता है : यदि सदस्यता की अवधि तीन वर्ष से कम है तो 75 प्रतिशत, 3 वर्ष या अधिक किन्तु 5 वर्ष से कम है तो 50 प्रतिशत, 5 वर्ष या अधिक किन्तु 10 वर्ष से कम है तो 25 प्रतिशत, 10 वर्ष या अधिक, किन्तु 15 वर्ष से कम है तो 15 प्रतिशत अंशदान (ब्याज सहित) काट लिया जायेगा। जहाँ सदस्यता की अवधि 15 वर्ष या इससे अधिक है वहाँ कुछ नहीं काटा जायेगा। काटी गयी रकम का उपयोग सदस्यों के कल्याण के लिए किया जाता है।

योजनाओं के अन्तर्गत सदस्यों को कोष में अपनी इकट्ठी हुई रकम में से सहकारी समितियों के अंश खरीदने, मकान बनवाने, जीवन बीमा पॉलिसी का प्रीमियम देने तथा पुत्रियों की शादी या बच्चों की ऊंची शिक्षा के लिए न लौटने वाले अग्रिमों के दिये जाने की व्यवस्था है। हाल के संशोधनों द्वारा फण्ड में सदस्य की इकट्ठा हुई रकम के 50 प्रतिशत तक न लौटने वाले अग्रिम की सुविधा कोयला खानों के आंशिक रूप से बन्द होने के कारण बेरोजगारी या आंशिक रोजगार की दशा में लागू कर दी गयी है।

योजना की व्यवस्थाओं के अन्तर्गत सदस्यों के हिसाब से काटी गयी ब्याज सहित सेवायोजक के अंशदानों की रकम में से मृत्यु सहायता कोष स्थापित किया गया है, जिसमें से सदस्य की खान में सेवा छोड़ने की तारीख के दो वर्ष के भीतर या पहले

मृत्यु की दशा में, यदि उसकी इकट्ठा हुई रकम 1000 रुपये से कम है, तो कम पड़ने वाली रकम के दिये जाने का प्रावधान है। योजना का प्रशासन एक न्यास मण्डल द्वारा किया जाता है जिसमें बराबर संख्या में सरकार, सेवायोजकों एवं श्रमिकों के प्रतिनिधि होते हैं। निधि का केन्द्रीय कार्यालय धनवाद में है और कोयला खान भविष्य निधि आयुक्त इसका मुख्य अधिशासी अधिकारी है। प्रशासन की लागत कोष में श्रमिकों एवं सेवायोजकों के कुल अनिवार्य अंशदान के 3.3 प्रतिशत की दर से सेवायोजकों से एक खास कर द्वारा पूरी की जाती है। केन्द्रीय सरकार ने कोयला खान भविष्य निधि जमा जुड़ी बीमा योजना 1 अगस्त, 1976 से श्रमिकों के लिए लागू की है जिसके अन्तर्गत कोयला खान भविष्य निधि का सदस्य मृत्यु के समय कोष में जमा रकम के अतिरिक्त मृतक के हिसाब में पिछले तीन वर्षो के दौरान औसत बाकी के बराबर (अधिक से अधिक 10000 रुपये तक) पाने का अधिकारी होता है। श्रमिकों द्वारा कोई चन्दा इसके लिए नहीं दिया जाता। इस योजना पर हुए खर्च को सेवायोजकों और केन्द्रीय सरकार द्वारा 2 : 1 के अनुपात में उठाया जाता है।

5. कर्मचारी भविष्य निधि एवं विविध व्यवस्थाएं अधिनियम 1952

आरम्भ में इस योजना के सदस्य केवल कर्मचारी हो सकते थे जिनका मासिक वेतन 300 रुपये से अधिक नहीं था। 31 मई, 1957 से इस सीमा को बढ़ाकर 500 रुपये प्रति मास तथा 31 दिसम्बर, 1962 से 1000 रुपये प्रति मास कर दिया गया है। वर्तमान में यह सीमा 1600 रुपये प्रति माह है। इस योजना में कर्मचारी के वेतन का 8 प्रतिशत चन्दे के रूप में काटा जाता है तथा इतना ही सेवायोजकों द्वारा दिया जाता है।

6. अनुग्रह भुगतान संशोधित अधिनियम 1984

अधिनियम के अन्तर्गत किसी कर्मचारी को किसी कारखाने या संस्था में उसके रोजगार के खत्म होने पर सेवा–निवृत्ति आयु होने पर या निवृत्त होने या स्तीफा देने पर, मृत्यु या दुर्घटना या रोग के कारण असमर्थता होने पर कम से कम पांच वर्ष की लगातार सेवा के बाद अनुग्रह रकम देय होगी। यदि कर्मचारी की मृत्यु रोजगार या दुर्घटना या रोग के असमर्थता के कारण होती है तो पांच वर्ष की 'लगातार सेवा' की शर्ते पूरा होना जरूरी नहीं होगा। किसी कर्मचारी की मृत्यु की दशा में उसकी मिलने वाली अनुग्रह रकम का भुगतान उसके द्वारा मनोनीत व्यक्ति या, यदि कोई व्यक्ति मनोनीत नहीं किया गया है, उसके उत्तराधिकारियों को किया जायेगा।

7. जमा सम्बद्ध बीमा योजना, 1976

यह योजना 1 अगस्त, 1976 से उन कर्मचारियों व श्रमिकों पर लागू की गयी है जो ''कर्मचारी भविष्य निधि योजना'' व ''कोयला खान भविष्य निधि योजना'' के अन्तर्गत आते हैं। इस योजना के अन्तर्गत आने वाले किसी कर्मचारी की आय पर मृतक के परिवार को भविष्य निधि में पिछले तीन वर्ष बकाया औसत राशि के बराबर राशि दी जाती है, लेकिन यह राशि 10000 रुपये से अधिक नहीं हो सकती है। इस योजना की

विशेषता यह है कि इसमें कर्मचारी व श्रमिकों को कुछ भी नहीं देना पड़ता है। इसमें सरकार व मालिक ही को देना पड़ता है।

8. सामाजिक सुरक्षा सर्टीफिकेट

यह योजना 1 जून, 1982 से लागू की गयी है। इसमें कोई भी व्यक्ति जिसकी उम्र 18 वर्ष व 45 के बीच है, इन सर्टीफिकेटों को क्रय कर सकता है, लेकिन एक व्यक्ति अधिक से अधिक 5000 रुपये के ही सर्टीफिकेट क्रय कर सकता है। यह सर्टीफिकेट 500 व 1000 रुपये के है जिनका भुगतान 10 वर्ष बाद क्रमशः 1500 व 3000 रुपये होगा। लेकिन यदि सर्टीफिकेट क्रेता क्रय करने के 2 वर्ष पश्चात् मर जाता है तो उसके कानूनी उत्तराधिकारी को सर्टीफिकेट की पूरी रकम तुरन्त देय हो जाती है और उसको देय तिथि तक भुगतान के लिए इन्तजार नहीं करना पड़ता है।

7.11 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में स्वचालन के अर्थ, परिभाषा एवं विशेषताओं के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है तथा श्रम कल्याण पर स्वचालन के प्रभाव के बारे में भी प्रकाश डाला गया है एवं स्वचालन से होने वाली हानियों के बारे में भी लिखा गया है। इसी इकाई में विश्वव्यापीकरण एवं उदारीकरण के अर्थ, परिभाषा एवं विशेषताओं के बारे में भी बृहद रूप से चर्चा की गयी है एवं उदारीकरण एवं विश्वव्यापीकरण का श्रम कल्याण पर क्या प्रभाव पड़ता है उसके बारे में भी प्रकाश डाला गया है।

7.12 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. मजदूरी से आप क्या समझते है ?
2. मजदूरी की विशेषताओं के बारे में लिखिए ?
3. वेतन की परिभाषा तथा विशेषताओं को लिखिए ?
4. मजदूरी तथा वेतन के आर्थिक इतिहास के बारे में एक निबन्ध लिखिए ?
5. सापेक्षिक मजदूरी से आप क्या समझते है ?
6. मजदूरी अन्तर के बारे में एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ?
7. बोनस क्या है ?
8. कार्मिक लाभों से सम्बन्धित विभिन्न कानूनों के बारे में एक विवरण प्रस्तुत कीजिए?
9. फ्रिन्ज बेनीफिट क्या है ?
10. प्रेरणात्मक योजनायें क्या है ?
11. हैल्से योजना क्या है ?

7.13 परिभाषिक शब्दावली

Wage	मजदूरी	Incentive	प्रेरणा

Administration	प्रशासन	Straight Piecerate	समान कार्यानुसार दर
Remuneration	पारिश्रमिक	Differential	विभेदात्मक
Compensation	क्षतिपूर्ति	Collective	सामूहिक
Reward	पारितोषण	Bonus	अधिलाभांश
Blue-Collar Employees	गैर पर्यवेक्षकीय कर्मचारी	Policy	नीति
White Collar Employees	प्रबन्धकीय कर्मचारी	Profit Sharing	लाभ सहभाजन
Approach	उपागम	Wage Differential	मजदूरी अन्तर
Minimum Wage	न्यूनतम मजदूरी	Relative Wages	सापेक्षिक मजदूरी
Fair Wage	उचित मजदूरी	Non Competing	अप्रतियोगी
Laving Wage	जीवन निर्वाह मजदूरी	Non Equalizing	असमकारी

7.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वर्मा, आर. वी. एस., एवं सिंह अतुल प्रताप, मानव संसाधन विकास एवं प्रबंधन की रूपरेखा, न्यू रायल बुक कम्पनी, लखनऊ, पेज 241–246, 264–268, वर्ष 2005।
2. भगोलीवाल, टी. एन. एवं प्रेमलता, श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक सम्बन्ध, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पेज 297–298, वर्ष 2001।
3. ममोरिया एण्ड ममोरिया, सेविवर्गीय प्रबन्ध एवं औद्योगिक सम्बन्ध, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पेज 582–592, वर्ष 2002।

इकाई –8

सामाजिक सुरक्षा
Social Security

इकाई की रूपरेखा

8.1 परिचय
8.2 उद्देश्य
8.3 सामाजिक सुरक्षा का अर्थ
8.4 सामाजिक सुरक्षा के आवश्यक तत्व
8.5 सामाजिक योजनाओं का क्षेत्र
8.6 सामाजिक सुरक्षा का महत्व
8.7 सामाजिक सुरक्षा के उद्देश्य
8.8 सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र
8.9 सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता
8.10 सामाजिक बीमा तथा सामाजिक सहायता
8.11 सार संक्षेप
8.12 परिभाषिक शब्दावली
8.13 अभ्यास प्रश्न – लघु, विस्तृत
8.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

8.1 परिचय

'सामाजिक सुरक्षा' शब्द का उद्गम औपचारिक रूप से सन् 1935 से माना जाता है, जबकि प्रथम बार अमरीका में सामाजिक सुरक्षा अधिनियम पारित किया गया। इसी वर्ष बेरोजगारी, बीमारी तथा वृद्धावस्था बीमा की समस्या का समाधान करने के लिए सामाजिक सुरक्षा बोर्ड का गठन किया गया। तीन वर्ष बाद सन् 1938 में 'सामाजिक सुरक्षा' शब्द का प्रयोग न्यूजीलैण्ड में किया गया जब पहली बार बड़े पैमाने पर यह योजना लागू की गयी। सन् 1941 में अटलांण्टिक चार्टर के अन्तर्गत सभी देशों को उद्योग के सभी क्षेत्रों में सामाजिक सुरक्षा को प्रोत्साहित करने को कहा गया; जिससे श्रमिकों के रहन–सहन के स्तर तथा उनकी आर्थिक दशा में सुधार हो सके।

सन् 1943 में सर विलियम बैवरिज द्वारा एक नयी याजना बनायी गयी। उन्होनें अपनी रिपोर्ट सामाजिक बीमा एवं सम्बन्धित सेवाएं के अन्तर्गत ब्रिटिश जनता को अभाव से मुक्ति दिखाने के लिए सामाजिक सुरक्षा योजनाएं बनाने का सुझाव दिया। इस शब्द का प्रयोग एल.सी.मार्श द्वारा प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट 'कनाडा में सामाजिक सुरक्षा' तथा नेशनल रिसोर्सेज बोर्ड, संयुक्त राज्य अमरीका की रिपोर्ट में भी किया गया, जिसके

अन्तर्गत सामाजिक सुरक्षा एवं सामाजिक सहायता का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व केन्द्रीय शासन पर डाला गया।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

1. सामाजिक सुरक्षा के अर्थ एवं परिभाषा के बारे में जान सकेगें।
2. सामाजिक सुरक्षा के उद्देश्यों के बारे में लिख सकेगें।
3. सामाजिक सुरक्षा के विभिन्न क्षेत्रों के बारे में जान सकेगें।
4. सामाजिक सीमा तथा सामाजिक सहायता के बारे में लिख सकेगें

8.3 सामाजिक सुरक्षा का अर्थ

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार ''वह सुरक्षा जो समाज, उचित संगठनों के माध्यम से अपने सदस्यों के साथ घटित होने वाली कुछ घटनाओं और जोखिमों से बचाव के लिए प्रस्तुत करता है, 'सामाजिक सुरक्षा' है। ये जोखिमें बीमारी, मातृत्व, आरोग्यता, वृद्धावस्था तथा मृत्यु है। इन संदिग्धताओं की यह विशेषता होती है कि व्यक्ति को अपना तथा अपने परिवार का भरण–पोषण करने के लिए नियोक्ताओं द्वारा सुरक्षा प्रदान की जाये।''

इस परिभाषा के अनुसार सरकारी नीति में कई सुरक्षात्मक कार्य सम्मिलित होने चाहिए। ऐसी सभी योजनाओं को सामाजिक सुरक्षा में लिया जाना चाहिए जो कर्मचारी को बीमारी के समय आश्वस्त कर सके अथवा जब श्रमिक कमाने योग्य न हो तो उसे लाभान्वित कर सकें तथा उसे पुनः कार्य पर लगाने में सहायक हों।

सर विलियम बैवरिज के अनुसार, ''सामाजिक सुरक्षा योजना एक सामाजिक बीमा योजना है जो व्यक्ति को संकट के समय अथवा उस समय, जब उसकी कमाई कम हो जाय, तथा जन्म, मृत्यु या विवाह में होने वाले अतिरिक्त व्यय की पूर्ति के लिए लाभान्वित करती है।''

सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम एक सुनियोजित योजना के अन्तर्गत पांच दानवों के विरुद्ध अभियान है। सामाजिक उन्नति के लिए अभाव, अज्ञानता, मलिनता, सुस्ती और बीमारी–इन पांच दानवों से लड़ना सामाजिक सुरक्षा है। इसके लिए सामाजिक बीमा तथा सामाजिक सहायता कार्यक्रम एवं ऐच्छिक बीमा योजनाएं बनायी एवं क्रियान्वित की जाती है। सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों के अन्तर्गत तीन मूलभूत मान्यताएं है ''नियोजन का उचित स्तर, सर्वांगीण स्वास्थ्य सेवा तथा बच्चों के भत्ते की योजना।''

इस प्रकार सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम से हमारा आशय यह है कि उससे व्यक्ति को जीवन में कुछ जोखिमों तथा आकस्मिक घटनाओं के भार से सुरक्षा मिलती है। वे भार जो स्वयं वहन करने में असमर्थ होता है, सामाजिक सुरक्षा योजना के माध्यम से वहन कर सकता है। हानि की मात्रा एक प्रकार से समाज के कई लोगों में बंट जाती

है। सामान्य तौर से सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों में निजी स्तर पर किये गये सुरक्षा कार्य सम्मिलित नही किये जाते।

भारत में सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी सुविधाएं देने के लिए यह अधिनियम बनाये गये है : (1) कर्मचारी प्रीविडेण्ट फण्ड अधिनियम, 1952; (2) कोयला खान भविष्य निधि एवं विविध उपबन्ध अधिनियम, 1948; (3) श्रमिक क्षतिपूर्ति संशोधित, 1984; (4) प्रसूति लाभ अधिनियम, 1961; (5) राज्य बीमा संशोधित अधिनियम, 1984; (6) कर्मचारी भविष्य निधि एवं विविध व्यवस्थाएं अधिनियम, 1952; (7) वृद्धावस्था पेन्शन योजना; (8) अनुग्रह भुगतान संशोधित अधिनियम, 1984; (9) सामाजिक सुरक्षा सर्टीफिकेट, 1982 आदि।

8.3.1 समाजिक सुरक्षा के आवश्यक तत्व

सामाजिक सुरक्षा योजना के लिए निम्नलिखित तत्व आवश्यक है :

1. योजना का उद्देश्य बीमारी की रोकथाम या इलाज करना होना चाहिए अथवा अनिच्छापूर्वक घटित हानि से सुरक्षा के लिए आय की गारण्टी देना जिससे श्रमिक पर निर्भर व्यक्ति लाभान्वित हो सके।
2. यह प्रणाली एक निश्चित अधिनियम के अन्तर्गत लागू की जानी चाहिए जो व्यक्तिगत अधिकारों तथा उत्तरदायित्व के प्रति सरकार, अर्द्ध–सरकारी संस्थाओं, गैर–सरकारी संस्थाओं को सामाजिक सुरक्षा सुविधाएं प्रदान करने के लिए बाध्य करे।
3. यह प्रणाली सरकारी, अर्द्ध–सरकारी तथा गैर–सरकारी संस्थाओं द्वारा प्रशासित की जानी चाहिए।
4. सुरक्षा को भली–भांति नियमित करने की दृष्टि से उपलब्ध सुविधाओं के प्रति कर्मचारियों का विश्वास होना आवश्यक है कि आवश्यकतानुसार उन्हें सामाजिक सुरक्षा सेवाओं के अन्तर्गत किये गये प्रावधान उपलब्ध होंगे तथा उनकी किस्म और मात्रा पर्याप्त होगी।

8.4 सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का क्षेत्र

सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के अन्तर्गत अग्रलिखित बातें सम्मिलित की जाती है :

1. अनिवार्य सामाजिक बीमा।
2. ऐच्छिक सामाजिक बीमा के कुछ प्रारूप।
3. सरकारी कर्मचारियों के लिए कुछ विशिष्ट योजनाएं जैसे बोनस, प्रोविडेण्ट फण्ड का भुगतान।
4. पारिवारिक भत्ता।
5. सामाजिक सहायता।
6. जन–स्वास्थ्य सेवाएं।

आधुनिक सामाजिक सुरक्षा योजना : (1) सामाजिक सहायता, तथा (2) सामाजिक बीमा का मिश्रण जिसमें विभिन्न जोखिमों के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान की जाती है। सर्वव्यापी

योजना का होना तथा पर्याप्त सुरक्षा का प्रावधान होना– ये दो बातें इस कार्यक्रम की विशेषता है जिससे सामाजिक सुरक्षा योजना के प्रति श्रमिक आत्मीयता अनुभव करे तथा कठिनाई के क्षणों में इस पर आश्रित रह सके।

8.5 सामाजिक सुरक्षा का महत्व

विकसित देशों में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों को देश की गरीबी, बेरोजगारी तथा बीमारी का उन्मूलन करने की दृष्टि से राष्ट्रीय योजना का अभिन्न तथा महत्वपूर्ण अंग माना गया है। निम्नलिखित विचारों से सुरक्षा का महत्व अधिक स्पष्ट हो जाता है :

अ) ''सामाजिक सुरक्षा का दर्शन तथा मूल विचार सामुदायिक आयोजन, सामुदायिक उत्तरदायित्व तथा नागरिकों के कर्त्तव्यों और अधिकारों का सामुदायिक स्तर पर विचार करना है। गरीबी हटाना, अभाव पर विजय तथा व्यक्तियों के रहन–सहन का वांछित स्तर उपलब्ध करना इसके उद्देश्य है। इसका मूल उद्देश्य अधिकांश व्यक्तियों के लिए, यथा सम्भव सभी के लिए तथा प्रत्येक की प्रसन्नता के लिए ऐसा प्रबन्ध करना है, जिससे व्यक्तित्व का विकास हो।''

–जे. एस. क्लार्क

ब) ''वर्तमान रोजगार, रोजगार तथा कार्य की उचित दशाएं प्राप्त करने और सेवानिवृत्ति के लिए सुरक्षा, आत्म–विकास, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सहायता, बेरोजगारी तथा अयोग्यता की स्थिति में आय की निरन्तरता, दुर्घटना के समय व्यक्ति के परिवार की सुरक्षा, अयोग्यता, बीमारी या मृत्यु के समय परिवार की सुरक्षा'' आदि सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत सम्मिलित किये जाते हैं।

–सामाजिक सुरक्षा समिति, सं. रा. अमरीका

स) ''तुम जितने गरीब हो, उतनी ही सामाजिक सुरक्षा की अधिक आवश्यकता तुम्हें होगी। अच्छे स्वास्थ्य से कार्य की क्षमता बढ़ती है। वास्तव में राष्ट्रीय समृद्धि को बढ़ाने के लिए यह एक साधन है। सामाजिक बीमा एक ऐसी छात्र है जो प्रजातन्त्र के उद्देश्य को सही अर्थ में प्रस्तुत करती है तथा प्रगति के मार्ग को प्रशस्त करती है।''

–बैवरिज

8.6 सामाजिक सुरक्षा के उद्देश्य

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक प्राणी होने के कारण उसको अनेक आवश्यकताओं का सामना करना पड़ता है। वह कभी दूसरों को आश्रय प्रदान करता है तो कभी स्वयं ही उसे दूसरों पर आश्रित रहना पड़ता है। आधुनिक यांत्रिक युग में वह अनेक प्रकार की दुर्घटनाओं का शिकार हो सकता है। इन दुर्घटनाओं से मुक्ति दिलाने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाय। संक्षेप में, सामाजिक सुरक्षा के उद्देश्य के अन्तर्गत निम्न तीन तत्वों को सम्मिलित किया जाता है –

1. क्षतिग्रस्त व्यक्ति को क्षतिपूर्ति करना,
2. क्षतिग्रस्त व्यक्ति के पुनरुत्थान का प्रयास करना, और
3. खतरों की रोकथाम के लिए आवश्यक व्यवस्था, करना आदि।

8.7 सामाजिक सुरक्षा का क्षेत्र

सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र का निर्धारण निम्न तीन तत्वों से होता है–

1. सामाजिक बीमा
2. सामाजिक सहायता
3. सामाजिक सेवा

भारत में यद्यपि सामाजिक सुरक्षा सेवाएं विभिन्न रूपों में प्रदान की जाती है तथापि उनका स्तर अन्य विकसित देशों जैसे यू. के., यू. एस. एस. आर., जर्मनी और जापान की अपेक्षा कहीं नीचा है।

सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र में निम्न खतरों से सुरक्षा की योजना सम्मिलित रहती है –

1. बीमारी के समय आवश्यक चिकित्सा व्यवस्था,
2. बीमारी के समय नगद सहायता,
3. प्रसूतिका लाभ एवं चिकित्सा सेवाएं
4. रोजगार सम्बन्धी दुर्घटनाओं से लाभ,
5. असमर्थता की अवस्था में सहायता,
6. निश्चित आयु के पश्चात् वृद्धावस्था में सहायता,
7. मृत्यु सम्बन्धी व्यय का भुगतान,
8. मृत्यु के बाद परिवार के आश्रितों को सहायता,
9. बेरोजगारी भत्ता

8.8 सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता

मनुष्य की दो अवस्थायें ऐसी होती है, उसे दूसरों पर आश्रित रहना पड़ता है और सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता पड़ती है –

1. बचपन, और
2. वृद्धावस्था,

इन दो अवस्थाओं के अतिरिक्त भी प्रौढ़ जीवन में वह अनेक प्रकार की कठिनाइयों से घिरा रहता है। इन कठिनाइयों से मुक्ति पाने के लिए सुरक्षा अनिवार्य है। संक्षेप में निम्न कारणों से सामाजिक सुरक्षा अनिवार्य है –

1. इससे राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि होती है।
2. मानव शक्ति की रक्षा में सहायक है।
3. इसके परिणामस्परूप सामाजिक जीवन सुरक्षित एवं सुखद बनता है।
4. इससे अनाथ बच्चों को अपनी शिक्षा जारी रखने में सहायता मिलती है।

5. बेरोजगारी या काम छूटने की हालत में जीवन निश्चित रहता है।
6. स्वास्थ्य लाभ से कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।
7. राष्ट्रीय समृद्धि में वृद्धि होती है।
8. सामाजिक और राष्ट्रीय कर्त्तव्य की दृष्टि से भी यह अनिवार्य है।
9. इसके माध्यम से मानव मूल्यों और अधिकारों की रक्षा की जा सकती है।

8.9 सामाजिक बीमा तथा सामाजिक सहायता

सामाजिक बीमा तथा सामाजिक सहायता में भी कुछ अन्तर है। सामाजिक सहायता योजना वह साधन है जिसके द्वारा राज्य अपनी ही निधि में से श्रमिकों के द्वारा कुछ विशेष शर्ते पूरी हो जाने पर कानूनी तौर पर लाभ प्रदान करता है। इस प्रकार सामाजिक सहायता सामाजिक बीमे का स्थान लेने की अपेक्षा उसका पूरक है। दोनों ही साथ–साथ चलते हैं। परन्तु अन्तर यह है कि सामाजिक सहायता तो पूर्णतया सरकार का ही कार्य है जबकि सामाजिक बीमे में राज्य द्वारा केवल आंशिक रूप से वित्त प्रदान किया जाता है। सामाजिक बीमे के लाभ वही व्यक्ति उठा सकता है जो इसमें अंशदान देता है। परन्तु सामाजिक सहायता निःशुल्क प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त सामाजिक बीमे में किसी प्रकार की जीविका साधन–जांच पर जोर नहीं दिया जाता और इसके बिना ही लाभ प्रदान किये जाते हैं। परन्तु सामाजिक सहायता केवल कुछ दी हुई शर्ते पूर्ण होने पर दी जाती है। साथ ही सामाजिक बीमें में ''बीमा'' शब्द के अन्तर्गत अंशदान का सिद्धान्त निहित है, जोकि सामाजिक सहायता में नही है। इस प्रकार ''सामाजिक'' और ''व्यावसायिक'' शब्द भी इनके अन्तर को स्पष्ट करते हैं।

यह भी स्पष्ट है कि सामाजिक सहायता तथा व्यावसायिक बीमे के मध्य में ''सामाजिक बीमा'' आता है। सामाजिक सहायता में राज्य या समुदाय द्वारा अभीष्ट व्यक्तियों को निःशुल्क सहायता दी जाती है, जबकि व्यावसायिक बीमा पूर्णतः एक निजी संविदा है। सामाजिक बीमे में राज्य तथा बीमा किये हुये व्यक्ति, दोनों का अंशदान आवश्यक होता है। इसलिये यह दोनों के मध्य का मार्ग कहा जा सकता है।

समाजिक बीमा, सामाजिक सहायता तथा सरकारी सहायता के बीच भी भेद किया जाता है। सामाजिक बीमा जहां अंशदान पर आधारित होता है और सामाजिक सहायता आकस्मिक परिस्थितियों पर आधारित होती है, वहां सरकारी सहायता आवश्यकता पर आधारित होती हैं सरकारी सहायता से आशय राज्य द्वारा इस उत्तरदायित्व की स्वीकृति से है कि वह अपने सभी नागरिकों को एक न्यूनतम जीवन स्तर की सुविधाएं उपलब्ध करायेगा। आधुनिक राज्य कदापि इस बात की अनुमति नहीं दे सकता कि उसका कोई नागरिक भूख या भुखमरी से मरे। राज्य के लिये आज यह अनिवार्य माना जाता है कि वह अपने नागरिकों को जीवन की मूलभूत आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध कराये।

8.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. सामाजिक सुरक्षा से आप क्या समझते हैं ?
2. सामाजिक सुरक्षा के उद्देश्यों के बारे में चर्चा कीजिए ?
3. सामाजिक सुरक्षा की विभिन्न योजनाओं के क्षेत्र क्या हैं ?
4. सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र के बारे में विस्तृत चर्चा कीजिए ?
5. भारत में सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता क्यों है ?
6. सामाजिक सुरक्षा के आवश्यक तत्वों के बारे में लिखिए ?
7. सामाजिक बीमा तथा सामाजिक सहायता में अन्तर स्पष्ट कीजिए ?

8.11 सार संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक सुरक्षा के उद्गम अर्थ एवं परिभाषाओं के बारे में विस्तृत रूप से चर्चा की गई है। इसी अध्याय में सामाजिक सुरक्षा के उद्देश्यों के बारे में भी बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में ही सामाजिक सुरक्षा की विवेचना की गई है तथा अंत में सामाजिक सहायता और सामाजिक बीमा के बारे में बताया गया है।

8.12 पारिभाषिक शब्दावली

Social Security	सामाजिक सुरक्षा	Voluntary	ऐच्छिक
Origin	उद्गम	Public Health Services	जन स्वास्थ्य सेवायें
Social Insurance	सामाजिक बीमा	Family Allowance	परिवारिक भत्ता
Allied Services	सम्बन्धित सेवायें	Social Assistance	समाजिक सहायता
Freedom from want	अभाव से मुक्ति	Importance	महत्व
Giants	छानव	Objectives	उद्देश्य
Scope	क्षेत्र	Social Services	सामाजिक सेवा
Allowance	भत्ता	Maternity Benefit	मातृत्व हित

8.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ममोरिया एण्ड ममोरिया, सेविवर्गिय प्रबंध एवं औद्योगिक सम्बन्ध, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पेज, 575–579, वर्ष 2002।
2. मदन, जी.आर., समाज कार्य, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली, पेज 227–228, वर्ष 2006।
3. सक्सेना, आर. सी., श्रम समस्यायें एवं समाज कल्याण, के. नाथ एण्ड कम्पनी, पुस्तक प्रकाशन, मेरठ, पेज 273, वर्ष 1947।

4. बघेल, डी. एस., औद्योगिक समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली, पृष्ठ 198–199, वर्ष 2002।

इकाई – 9

श्रम–विधान

Labour Legislation

इकाई का रूपरेखा

9.1 परिचय
9.2 उद्देश्य
9.3 विधान का अर्थ
9.4 श्रम विधान का अर्थ
9.5 श्रम विधान के उद्देश्य

9.6 श्रम विधान के महत्वपूर्ण सिद्धान्त
9.7 सार संक्षेप
9.8 परिभाषिक शब्दावली
9.9 अभ्यास प्रश्न – लघु, विस्तृत
9.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

9.1 परिचय

आधुनिक प्रचलन में 'विधान' शब्द से उच्च प्राधिकार से युक्त तथा जनता का प्रचुरता से प्रतिनिधित्व करने वाले विशिष्ट राजकीय अभिकरणों द्वारा बनाए गए विधि के नियमों का बोध होता है। इस दृष्टिकोण के अनुसार, विधान के अन्तर्गत मुख्यतः जनता के समर्थन प्राप्त विधानमंडलों तथा अन्य मान्यता प्राप्त सक्षम प्राधिकारियों द्वारा बनाए गए कानून सम्मिलित होते हैं। व्यवहार में, विधान को मुख्यतः इसी अर्थ में देखा जाता है। कार्यकारिणी द्वारा अस्थायी अवधि के लिए बनाए गए अध्यादेश भी विधान के अंतर्गत आते हैं, क्योंकि इनका बाद में स्थायी रूप से विधान मंडलों द्वारा ही स्वीकृत किया जाना आवश्यक होता है। कभी–कभी न्यायपालिका के निर्णय भी पूरक विधान का रूप ले लेते हैं।

आधुनिक प्रजातांत्रिक व्यवस्था में विधान बनाने की शक्ति किसी केन्द्रीय अभिकरण (संघ या राज्य के स्तर पर)– सामान्यतः विधानमंडलों में निहित होती है तथा उनके द्वारा बनाए गए विधान प्रचिलन सभी नियमों, लिखतों या निदेशें से सर्वोच्च होते हैं। कुछ प्रकार की राजनीतिक व्यवस्थाओं, जैसे– तानाशाही में विधान बनाने का कार्य, अलग से कोई विशेष अभिकरण नहीं संपन्न करता। ऐसी व्यवस्थाओं में कार्यकारिणी, विधायिका एवं न्यायपालिका तीनों के कार्य किसी एक ही व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह में निहित हो सकते हैं।

व्यवहार में, आधुनिक विधान सक्षम विधानमंडलों द्वारा अनुमोदित नियमों को सम्मिलित किया जाता है। इस अध्याय में आधुनिक श्रम–विधान के संदर्भ में 'विधान' शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में किया गया है।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप : –

- विधान क्या होते हैं, के बारे में जान सकेगें।
- श्रम विधान क्या होते हैं, के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- श्रम विधान के उद्देश्यों के बारे में लिख सकेगें।
- श्रम विधान के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों के बारे में अपनी राय प्रस्तुत कर सकेगें।

9.3 विधान का अर्थ

'विधान' शब्द का प्रयोग और भी व्यापक अर्थ में किया जाता है। कई विचारकों के अनुसार विधान के अंतर्गत विधानमंडलों द्वारा स्वीकृत विधियों और नियमों तथा अध्यादेशों के अतिरिक्त, कार्यकारिणी प्रशासन और क्षेत्रीय एवं स्थानीय निकायों द्वारा बनाए गए नियमों तथा विनियमों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए। लेकिन, इस अध्याय के प्रयोजन के लिए विधान के इस अर्थ को आधुनिक श्रम विधान के संदर्भ में नहीं अपनाया गया है।

स्वतांत्रिक राजनीतिक संस्थाओं एवं कल्याणकारी राज्य के उदय के पूर्व विधान को अत्यंत ही व्यापक अर्थ में देखा जाता था। आधुनिक विधानमंडलें या विधि बनाने वाले विशिष्ट अभिकरणों के आगमन के पहले सदियों तक व्यक्तियों एवं उनके समूहों के आचरण, कार्यकलाप तथा उनकी दशाओं पर नियमन विविध प्रकार के लिखतों एवं अनौपचारिक निदेशों द्वारा होता था। इन लिखतों या निदेशों में धार्मिक निदेशों प्रथागत नियमों, व्यक्तिगत विधायकों की संहिताओं, राजकीय आदेशों, स्थानीय प्रशासकों एवं अभिकरणों द्वारा बनाए गए नियमों और लोकरीतियों का उल्लेख किया जा सकता है। सामान्यतः ये आधुनिक विधान की तरह लागू होते थे। उनका उल्लंघन दंडनीय उपराध समझा जाता था। प्राचीन एवं मध्यकालीन युग के श्रम–विधानों की विवेचना में इन लिखतों और अनौपचारिक निदेशों को विधान के अंतर्गत सम्मिलित किया गया है। आधुनिक विधान के उदय से ये महत्वहीन होते गए और अंनतः विधान की सर्वोच्चता स्थापित हुई।

9.4 श्रम विधान का अर्थ

वास्तव में श्रम विधान सामाजिक विधान का ही एक अंग है। श्रमिक समाज के विशिष्ट समूह होते हैं। इस कारण श्रमिकों के लिये बनाये गये विधान सामाजिक विधान की एक अलग श्रेणी में आते हैं। औद्योगिक के प्रसार, मजदूरी अर्जकों के स्थायी वर्ग में वृद्धि, विभिन्न देशों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन में श्रमिकों के बढ़ते हुये महत्व तथा उनकी प्रस्थिति में सुधार, श्रम संघों के विकास, श्रमिकों में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता, संघों श्रमिकों के बीच शिक्षा के प्रसार, प्रबन्धकों और नियोजकों के परमाअधिकारों में हास तथा कई अन्य कारणों से श्रम विधान की व्यापकता बढ़ती गई है। श्रम विधानों की व्यापकता और उनके बढ़ते हुये महत्व को ध्यान में रखते हुये उन्हें एक अलग श्रेणी में रखना उपयुक्त समझा जाता है। सिद्धान्तः श्रम विधान में व्यक्तियों या उनके समूहों को श्रमिक या उनके समूह के रूप में देखा जाता है।

आधुनिक श्रम विधान के कुछ महत्वपूर्ण विषय है – मजदूरी की मात्रा, मजदूरी का भुगतान, मजदूरी से कटौतियां, कार्य के घंटे, विश्राम अंतराल, साप्ताहिक अवकाश, सवेतन छुट्टी, कार्य की भौतिक दशायें, श्रम संघ, सामूहिक सौदेबाजी, हड़ताल, स्थायी

आदेश, नियोजन की शर्ते, बोनस, कर्मकार क्षतिपूर्ति, प्रसूति हितलाभ एवं कल्याण निधि आदि है।

9.5 श्रम विधान के उद्देश्य

श्रम विधान के अग्रलिखित उद्देश्य है –

1. औद्योगिक के प्रसार को बढ़ावा देना।
2. मजदूरी अर्जकों के स्थायी वर्ग में उपयुक्त वृद्धि करना।
3. विभिन्न देशों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन में श्रमिकों के बढ़ते हुये महत्व तथा उनकी प्रस्थिति में सुधार को देखते हुये भारतीय परिदृश्य में लागू कराना।
4. श्रम संघों का विकास करना।
5. श्रमिकों में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता फैलाना।
6. संघों श्रमिकों के बीच शिक्षा के प्रसार को बढ़ावा देना।
7. प्रबन्धकों और नियोजकों के परमाअधिकारों में हास तथा कई अन्य कारणों से श्रम विधान की व्यापकता को बढ़ाना।

9.6 आधुनिक श्रम–विधान के कुछ महत्त्वपूर्ण सिद्धांत

आधुनिक श्रम–विधान के कई सिद्धांत है, जिनमें कुछ महत्त्वपूर्ण सिद्धांतों की विवेचना नीचे की जाती है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इन सिद्धांतों में अधिकांश एक–दूसरे से जुड़े है और उनमें किसी एक को पूर्णतः पृथक समझना भांतिपूर्ण होगा। फिर भी, सुविधा की दृष्टि से इन सिद्धांतों की निम्नलिखित वर्गो में रखा जा सकता है –

1. **संरक्षा का सिद्धांत** – संरक्षा के सिद्धांत के अनुसार, श्रम एवं सामाजिक विधान का उद्देश्य ऐसे श्रमिकों और समाज के समूहों को संरक्षा प्रदान करना है, जिन्हें संरक्षा की आवश्यकता तो है, पर वे स्वयं अपनी संरक्षा नहीं कर सकते। जैसा कि सर्वावदित है, औद्योगिकीकरण के प्रारंभिक काल में बालकों, स्त्रियों, यहां तक कि वयस्क पुरुष–श्रमिकों के कार्य एवं जीवन की दशाएं अत्यंत ही दुष्कर थी। बहुत ही कम उम्र के छोटे–छोटे बच्चों का कारखानों में नियोजन, कार्य के अत्यधिक घंटे, स्त्रियों और बालकों का रात्रि में तथा खतरनाक कामों पर नियोजन, विश्राम–अंतराल का अभाव, अपर्याप्त प्रकाश एवं संवातन, धूल–धुएं से दूषित पर्यावरण तथा अन्य प्रकार की अस्वास्थ्यकर एवं दुष्कर भौतिक कार्य की दशाएं प्रारंभिक औद्योगिकीकरण की कुछ उल्लेखनीय ज्यादतियां थीं। साथ ही, श्रमिकों को मजदूरी भी बहुत ही कम दी जाती थी। मजदूरी भुगतान की न तो कोई निश्चित अवधि होती थी और न ही श्रमिक सदा ही नकद भुगतान की आशा कर सकते थे।

अनुशासनहीनता, खराब काम, आदेशों के उल्लंघन, अनुपस्थिति, सामान और मशीनों की क्षति आदि के बहाने श्रमिकों पर मनमाने ढंग से जुर्माने लगाए जाते और उन्हें मजदूरों से काटकर वसूल कर लिया जाता। वयस्क श्रमिक अपने संगठन बनाकर कार्य की दशाओं में सुधार लाने के लिए नियोजकों पर सामूहिक रूप से दबाव डालने का प्रयास करते, लेकिन बालक, स्त्री तथा छोटे–छोटे प्रतिष्ठानों के असंगठित वयस्क श्रमिक इन ज्यादतियों से अपनी रक्षा करने में असमर्थ थे।

अनियंत्रित पूंजीवाद और मुक्त प्रतिस्पर्द्धा वाली उम्र संयम की अर्थव्यवस्था में नियोजकों का एकमात्र लक्ष्य अधिक–से–अधिक मुनाफा अर्जित करना था। वे उद्योग के मानवीय तत्वों की अवहेलना करते, जिससे स्थिति और भी बिगड़ती गई। ऐसी स्थिति में राज्य ही संरक्षात्मक श्रम–विधान बनाकर श्रमिकों को इन ज्यादतियों से रक्षा प्रदान कर सकता था। धीरे–धीरे खानों एवं अन्य औद्योगिक प्रतिष्ठानों में भी इस प्रकार के संरक्षात्मक श्रम–विधान की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी। अंततः राज्य की ओर से कारखानों में श्रम की दशाओं को विनियमित करने के उद्देश्य हस्तक्षेप शुरू हुआ। कालांतर में, श्रमिकों की विभिन्न क्षेत्रों में संरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से श्रम–विधान बनाने का सिलसिला स्थायी होता गया।

विश्व का पहला कारखाना–विधान इंगलैंड में शिक्षु स्वास्थ्य एवं नैतिकता अधिनियम, 1802 के रूप में बनाया गया। इसका मुख्य उद्देश्य सूती वस्त्र–कारखानों में काम करने वाले शिशु–बालकों के स्वास्थ्य एवं नैतिकता की रक्षा करना था। धीरे–धीरे इंगलैंड में क्रम में कई कारखाना अधिनियम बनाए गए। बाद में भारत तथा विश्व के अन्य देशों में भी कारखाना अधिनियम बनाए गए। समय के गुजरने के साथ–साथ इन अधिनियमों के विस्तार–क्षेत्र, विषय, मानक एवं प्रशासन में सुधार किए गए। कारखाना–विधान की तरह कुछ अन्य संरक्षात्मक श्रम–विधान भी बनाए गए, जैसे– खान–विधान, बागान–श्रम–विधान, दुकान एवं प्रतिष्ठान–श्रम–विधान, बाल–श्रमिक–विधान, न्यूनतम मजदूरी–विधान तथा मजदूरी–भुगतान–विधान। इस सिद्धांत को ध्यान में रखकर बनाए गए कुछ भारतीय अधिनियम है– कारखाना अधिनियम, 1948, खान अधिनियम, 1952, बागान श्रमिक अधिनियम, 1951, दुकान एवं प्रतिष्ठान अधिनियम, मोटर–परिवहन कर्मकार अधिनियम, बालश्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986, मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936, तथा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948। संरक्षात्मक श्रम–विधानों के कुछ महत्वपूण विषय है– कार्य के अधिकतम घंटे, साप्ताहिक अवकाश, विश्राम–अंतराल, रात्रि–कार्य, कार्य की भौतिक दशाएं, जैसे– सफाई, प्रकाश और संवातन, सुरक्षा, स्वास्थ्य, बालकों के नियोजन की

निम्नतम उम्र, खान के भीतर काम, न्यूनतम मजदूरी और मजदूरी के भुगतान से संबद्ध कदाचारों का नियंत्रण।

इसी तरह, कुछ सामाजिक विधान समाज के अन्य कमजोर वर्गो या समूहों की संरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से बनाए गए है। इनमें बालकों की अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा–संबंधी विधान, स्त्रियों के हितों की रक्षा के लिए बनाए गए विवाह और संपत्ति के अधिकार से संबंद्ध विधान तथा अनुसूचित जातियों और जनजातियों के हितों की रक्षा के लिए बनाए गए विधानों का उल्लेख किया जा सकता है। भारतीय संविधान में भी बालकों, स्त्रियों, अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों तथा समाज के अल्पसंख्यक समूहों की रक्षा में संबंद्ध महत्वपूर्ण उपबंध हैं।

2. सामाजिक न्याय का सिद्धांत – सामाजिक न्याय का सिद्धांत सामाजिक संबंधों में समानता की स्थापना पर जोर देता है। यह सिद्धांत समानता के स्वीकृत मानकों के आधार पर मनुष्यों एवं उनके समूहों के बीच भेदभाव का अंत चाहता है। सभ्यता के आरम्भ से ही समाज में किसी–न–किसी प्रकार की असमानताएं रही है। विश्व के प्रायः सभी देशों में समाज के प्रभावशाली वर्ग कुछ दुर्बल समूहों का शोषण करते आए है। समाज के एक ही वर्ग या समूहों के बीच भी भेदभाव के अनेक उदाहरण मिलते है। जैसा कि इस अध्याय में पहले उल्लेख किया जा चुका है–प्राचीन एवं मध्यकालीन युग में दासों एवं कृषि–दासों को अन्य श्रेणियों के श्रमिकों को उपलब्ध अधिकारों से वंचित रखा गया। इसी तरह बंधुआ और करारबद्ध श्रमिकों तथा बलात श्रम पर लगाए जाने वाले श्रमिकों का कई प्रकार से शोषण होता आ रहा है, औद्योगिक और कृषि श्रमिकों के बीच भी भेदभाव होते आ रहे हैं। पुरुषों की तुलना में स्त्रियों को भी कई प्रकार के आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक भेदभावों का सामना करना पड़ा है। इसी तरह जाति, धर्म, प्रजाति, सप्रदाय आदि के आधारों पर मनुष्यों के बीच असमानताएं रही है। सामाजिक न्याय का सिद्धांत मनुष्यों और उनके समूहों के बीच समानता पर जोर देता है।

अंतराष्ट्रीय श्रम–संगठन ने भी सामाजिक न्याय की स्थापना पर प्रारंभ से ही जोर दिया है। इस महत्त्वपूर्ण अंतराष्ट्रीय संगठन द्वारा पारित 'श्रमिकों की स्वतंत्रता के अधिकारपत्र' में स्पष्ट उल्लेख किया गया है– ''(1) श्रम कोई वस्तु नही है। (2) धारित प्रगति के लिए अभिव्यक्ति एवं संघ बनाने की स्वतंत्रता के अधिकार अनिवार्य है। (3) निर्धनता कहीं भी सभी जगह समृद्धि के लिए खतरनाक होती है।'' फिलाडेल्फिया में 1944 में हुए अंतराष्ट्रीय श्रम–सम्मेलन द्वारा अपनाए गए संगठन के लक्ष्यों, उद्देश्यों और सिद्धांतों से संबद्ध घोषणापत्र में स्पष्ट रूप से कहा गया कि स्थायी शांति तभी स्थापित हो सकती है, जब यह सामाजिक न्याय पर आधृत हो। घोषणापत्र में यह भी पुष्टि की गई – ''सभी मनुष्यों को, प्रजाति, संप्रदाय या लिंग के भेदभाव के बिना

स्वतंत्रता और गरिमा, आर्थिक सुरक्षा और समान अवसर की दशाओं में अपने भौतिक कल्याण तथा आध्यात्मिक विकास दोनों के परिशीलन का अधिकार है।''

भारतीय संविधान में भी सामाजिक न्याय की स्थापना से संबद्ध महत्वपूर्ण उपबंध है। समता के मूल अधिकार के अंतर्गत कानून के समक्ष समता, धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग के जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव के प्रतिषेध और रोजगार के विषय में अवसर की समानता का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। स्वतंत्रता, शोषण में रक्षा जिसमें बलात श्रम, बालश्रम और व्यक्तियों के क्रय–विक्रय के प्रतिषेध सम्मिलित है। तथा अल्पसंख्यकों के अपनी संस्कृति, भाषा और लिपि के संरक्षण के अधिकार भी सामाजिक न्याय की स्थापना से संबद्ध महत्वपूर्ण सांविधानिक उपबंध है। राज्यनीति के निर्देशक सिद्धांतों के अंतर्गत स्पष्ट कहा गया है, ''सरकार ऐसी सामाजिक व्यवस्था की भरसक कारगर रूप में स्थापना करके और उसका संरक्षण करके लोक–कल्याण को प्रोत्साहन देने का प्रयास करेगी, जिसमें राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय का पालन हो।'' इन सिद्धांतों में समान कार्य के लिए समान वेतन, सभी स्त्री–पुरुषों को जीवनज्ञापन के लिए यथेष्ट तथा समान अवसर, बाल्यावस्था एवं युवावस्था की शोषण एवं नैतिक परित्याग से रक्षा और समाज के दुर्बल समूहों की सामाजिक अन्याय और शोषण से रक्षा का स्पष्ट उल्लेख किया गया है।

सामाजिक न्याय के सिद्धांत पर बनाए गए श्रम एवं सामाजिक विधान के उदाहरण है –दास, कृषि–दास करारबद्ध, बंधुआ तथा बलात श्रम–प्रथाओं के अनुबद्ध संबंधी विधान, समान पारिश्रमिक–विधान, जाति निर्योग्यता–निवारण–विधान, अस्पृश्यता–निवारण–विधान स्त्री तथा लड़की अनैतिक व्यापार–दमन–विधान तथा रक्षावृत्ति–निवारण–विधान। इस सिद्धांत को ध्यान में रखकर बनाए गए कुछ भारतीय अधिनियम है– भारतीय दासता अधिनियम, 1843, जाति निर्योग्यता निवारण अधिनियम, 1850, समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976, बंधुआ श्रम–पद्धति (उत्पादन) अधिनियम, 1976, सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 तथा अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम, 1956।

3. नियमन का सिद्धांत – औद्योगिक विकास के प्रारंभिक चरणों में श्रमिकों और नियोजकों के संबंधों में व्यापक असमानताएं थीं। नियोजक अपने आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक प्रभुत्व का लाभ उठाकर औद्योगिक श्रमिकों का अनेक प्रकार से शोषण किया करते थे। नियोजकों के शोषण से मुक्ति पाने तथा अपने हितों की रक्षा के लिए श्रमिकों ने संगठित होना शुरू किया। लेकिन, राज्य की ओर से उनका दमन होने लगा। आपराधिक षड्यंत्र, व्यापार–अपरोध तथा संविदा भंग आदि आधारों पर संगठन या संघ बनाने वाले श्रमिकों पर मुकद्मा चलाया जाता और उन्हें जुर्माने और कारावास का दंड दिया जाता। जब लोक विधि के इन आरोपों से संबद्ध उपबंध श्रमिकों के संगठनों पर अंकुश डालने में अप्रभावी प्रतीत होने लगे, तब उन्हें स्पष्ट रूप से अवैध घोषित करने के

लिए विशेष अधिनियम बनाए गए। इंगलैंड के केबिनेशन अधिनियम, 1799, 1800 इस तरह के दमनकारी श्रमसंघ अधिनियम के उदाहरण है। बाद में, श्रमिकों के अथक प्रयासों, समाजवादी और सामूहिक सिद्धांतों के प्रसार, प्रजातांत्रिक संस्थाओं के उदय, श्रमिकों के प्रति राज्य की प्रवृत्ति में परिवर्तन तथा कई अन्य कारणों से श्रमिकों के संगठनों पर लगाए गए विधिक प्रतिबंध हटाए जाने लगे और अंत में उन्हें विधिक मान्यता मिली।

विधिक मान्यता मिलते ही, श्रमसंघों की संख्या में अप्रत्याशित रूप से वृद्धि हुई और आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक जीवन में उनका प्रभाव बड़ी तेजी से बढ़ने लगा। वे नियोजकों के साथ सौदेबाजी करते, तथा अपनी मांगों और विवादों को लेकर हड़ताल तथा अन्य प्रकार की औद्योगिक कार्रवाइयां करते। वे बराबरी के स्तर पर और अधिकारस्वरूप नियोजन की दशाओं में सुधार लाने और श्रमिकों के हितों की रक्षा के लिए नियोजकों और सरकार पर दबाव डालते। कहीं–कहीं श्रमसंघ इतने शक्तिशाली हो गए कि नियोजक ही उनसे परेशान होने लगे। हड़ताल, प्रदर्शन, धरना, घेराव आदि औद्योगिक कार्रवाइयों से जनजीवन भी व्यापक रूप से प्रभावित होने लगा। श्रमसंघों के बीच प्रतिद्धद्धिता के कारण भी औद्योगिक संबंध बिगड़ने लगे।

श्रम–विधान के नियमन का सिद्धांत मुख्यतः श्रमसंघों और नियोजकों के बीच के संबंधों में संतुलन लाने के प्रभुत्त पर जोर देता है। अगर नियोजक अधिक शक्तिशाली होते हैं, नियोजन–विधान द्वारा श्रमसंघों को विशेष अविष्कार दिये जाते हैं। जब श्रमसंघ अपनी बढ़ती हुई शक्ति का दुरुपयोग कर नियोजकों, अपने सदस्यों या सरकार पर अनावश्यक रूप से दबाव डालते है, तब उनके क्रियाकलाप पर अंकुश डालने के लिए भी विधान बनाए जाते है। दोनों के बीच विवादों को सुलझाने के लिए श्रम–विधान द्वारा संबंधों की स्थापना भी की जाती है। श्रमसंघों और नियोजकों के बीच के संघर्षो से उत्पन्न औद्योगिक कार्रवाइयों से समुदाय के हितों की रक्षा के लिए हड़ताल, तालाबन्दी, धरना आदि पर प्रतिबंध लगाने के लिए भी कानून बनाए जाते हैं। श्रम–विधान द्वारा सामूहिक सौदेबाजी के विभिन्न पहलुओं को भी नियंत्रित किया जाता है। इस तरह, नियामक श्रम–विधान के कुछ महत्वपूर्ण विषय है– श्रमिकों को संघ बनाने का अधिकार, श्रमसंघों के अधिकार और दायित्व, श्रमसंघों का पंजीकरण, औद्योगिक विवाद सुलझाने के तरीके और संयंत्र, सामूहिक सौदेबाजी, प्रबंध में श्रमिकों की भागीदारी, परिवेदना–निवारण, हड़ताल, तालाबन्दी तथा अन्य औद्योगिक कार्रवाइयां, श्रमसंघों की मान्यता, प्रतिनिधि श्रमसंघ का चयन, अनुचित श्रम–व्यवहार आदि। सामान्यतः औद्योगिक संबंध पर बनाए गए विधान नियामक श्रम–विधान के अंतर्गत आते हैं। इस सिद्धांत पर आधृत कुछ महत्त्वपूर्ण श्रम–अधिनियम हैं– ग्रेट ब्रिटेन के श्रमसंघ अधिनियम, श्रमसंघ एवं श्रम–संबंध अधिनियम, 1974, औद्योगिक न्यायालय अधिनियम, 1919, औद्योगिक संबंध अधिनियम, 1971, श्रमसंघ एवं श्रम–संबंध (समेकन) अधिनियम, 1992, संयुक्त राज्य

अमेरिका के राष्ट्रीय श्रम–संबंध अधिनियम, 1935 और श्रम–प्रबंध संबंध अधिनियम, 1947, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947, औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946 तथा राज्यों के औद्योगिक संबंध और औद्योगिक विवादों से संबद्ध अधिनियम।

समाज के विभिन्न समूहों के बीच के संबंधों को विनियमित करने के लिए भी विधान बनाए जाते हैं। इनमें प्रजाति–संबंधों, संप्रदाय–संबंधों, अल्पसंख्यकों और बहुतसंख्यकों के बीच के संबंधों, सामाजिक समानता, धर्मो और जातियों के बीच के संबंधों पर बनाए गए विधानों को सम्मिलित किया जा सकता है।

4. कल्याण का सिद्धांत – वास्तव में, श्रम और सामाजिक विधान के कल्याण का सिद्धांत संरक्षा और सामाजिक न्याय के सिद्धांतों से जुड़ा है। 'कल्याण' शब्द का अर्थ व्यापक होता है और इसके अंतर्गत समाज के आम नागरिकों के भौतिक एवं अभौतिक उन्नयन के अतिरिक्त, विभिन्न समूहों या वर्गो के लिए विशेष सेवाएं या सुविधाएं भी सम्मिलित होती है। साथ ही, 'कल्याण' के अंतर्गत समाज के दुर्बल समूहों के हितों को रक्षा तथा विभिन्न समूहों के बीच भेदभाव के उन्मूलन को भी सम्मिलित किया जाता है। श्रम एवं सामाजिक विधान के सिद्धांतों के विशेष परिवेश में कल्याण का सिद्धांत समाज के विशेष समूहों एवं आम नागरिकों के हितों के विकास के लिए अतिरिक्त सुविधाएं प्रदान करने पर जोर देता है। कई श्रम एवं सामाजिक विधानों में सामाजिक न्याय और संरक्षा के प्रावधान के अतिरिक्त कल्याणकारी सुविधाएं प्रदान करने से संवाद अलग से विशेष उपबंध रखे गए है। विश्व के कई देशों में श्रमिकों और उनके परिवार के सदस्यों को आवासीय, चिकित्सीय, मनोरंजनात्मक, शैक्षिक तथा सांस्कृतिक सुविधाएं प्रदान करने के उद्देश्य से 'कल्याण–निधि' विधान बनाए गए है। इसी प्रकार, समाज के कुछ अल्पसुविधा प्राप्त समूहों, जैसे बालकों, महिलाओं प्रवासी श्रमिकों आदि को अतिरिक्त सुविधाएं प्रदान करने के उद्देश्य से भी विधान बनाए गए है। कही–कहीं आवासीय, चिकित्सकीय एवं शैक्षिक सुविधाओं से संबद्ध सामान्य विधान भी बनाए गए हैं।

'कल्याण' के सिद्धांत को ध्यान में रखकर बनाए गए कुछ श्रम एवं सामाजिक विधान के उदाहरण हैं – संरक्षात्मक अधिनियमों में कल्याण–संबंधों उपबंध, कोयला खान श्रम–कल्याण निधि अधिनियम, 1947, अभ्रक खान श्रम–कल्याण निधि अधिनियम, 1946, लौह अयस्क, मैंगनीज अयस्क, चूना–पत्थर, डोलोमाइट, क्रोम अयस्क, बीड़ी कर्मकार, असम चाय–बागान तथा राज्य सरकारों के श्रम–कल्याण निधि अधिनियम, राज्य सरकारों के आवासीय बोर्ड अधिनियम, बालक अधिनियम, विवाह में संबद्ध कानून, जैसे हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955, विशेष निवाह अधिनियम, 1954, अंतराज्यीय प्रवासी कर्मकार अधिनियम, 1979 तथा दहेज अधिनियम, 1961।

कुछ संरक्षात्मक श्रम–अधिनियमों, जेसे– कारखाना अधिनियम, खान अधिनियम, बागान श्रमिक अधिनियम के अधीन श्रमिकों के लिए कई तरह की कल्याणकारी सुविधाएं

उपलब्ध कराना अनिवार्य है। इन सुविधाओं में कैंटीन, विश्राम–कक्ष, शिशु–कक्ष, नहाने धोने की सुविधा, प्राथमिक उपचार साधन तथा एंबुलेंस कमरा की व्यवस्था तथा कल्याण अधिकारी की नियुक्ति का विशेष रूप से उल्लेख किया जा सकता है।

5. सामाजिक सुरक्षा का सिद्धांत – व्यापक अर्थो में सामाजिक सुरक्षा समाज कल्याण का ही एक अंग है, लेकिन विगत वर्षो में सामाजिक सुरक्षा–विधान के बढ़ते हुए महत्व के कारण इसे अलग श्रेणी में रखना उपयुक्त प्रतीत होता है। औद्योगिक समाज में दुर्घटना, बीमारी, वृद्धावस्था, आशक्तता, बेरोजगारी, प्रसूति, अर्जक की मृत्यु आदि आकस्मिकताओं की स्थिति में अर्जकों या उनके परिवार के सदस्यों को अनेक प्रकार की आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। मजदूरी–अर्जकों के स्थायी वर्ग में आने वाले व्यक्तियों की संख्या में अप्रत्याशित रूप से वृद्धि होने के कारण उपर्युक्त आकस्मिकताओं से उत्पन्न खतरे और भी जटिल हो गए हैं; क्योंकि ऐसे व्यक्तियों को जीवनयापन के लिए केवल मजदूरी पर ही आश्रित रहना पड़ता है। जीवन के इन खतरों के प्रति आर्थिक सुरक्षा की व्यवस्था करना ही सामाजिक सुरक्षा है। सामाजिक सुरक्षा के दो मुख्य आधारस्तंभ होते हैं – (क) सामाजिक बीमा और (ख) सामाजिक सहायता। सामाजिक बीमा में हिताधिकारियों को हितलाभ के लिए सामान्यतः अंशदान देना पड़ता है। हितलाभ के लिए राशि बीमित व्यक्तियों और नियोजकों तथा सरकार के अनुदान से आती है। योग्यता की शर्ते पूरी करने पर हिताधिकारियों को हितलाभ अधिकारस्वरूप मिलते है और उनमें निरंतरता कायम रहती है। सामाजिक सहायता में सरकार या अन्य अभिकरणों द्वारा जरूरतमंद व्यक्तियों को बिना किसी अंशदान की शर्त पर सहायता दी जाती है। सामाजिक सुरक्षा–विधान में सामाजिक बीमा और सामाजिक सहायता दोनों प्रकार के विधान सम्मिलित होते हैं।

प्रारम्भ में सामाजिक सुरक्षा–विधान मुख्यतः औद्योगिक श्रमिकों के लिए बनाए गए, लेकिन बाद में सामान्य नागरिकों के लाभ के लिए भी ऐसे विधान बनाए गए। धनी संपन्न देशों में सामाजिक सुरक्षा विधान विकसित अवस्था में है। निर्धन देशों में सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता अधिक होती है, लेकिन वे इसकी संतोषजनक रूप से व्यवस्था करने में असमर्थ होते हैं। सामाजिक सुरक्षा–विधान के अंतर्गत आने वाले कुछ महत्वपूर्ण विषय है – दुर्घटनाओं की स्थिति में क्षतिपूर्ति, प्रसूति के लाभ, अशक्तता–हितलाभ, अनियोजन हितलाभ, उत्तरजीवी या आश्रित हितलाभ बर्धक्य पेंशन, भविष्य निधि, परिवार भत्ता तथा उपदान।

सामाजिक सुरक्षा के सिद्धांत को ध्यान में रखकर बनाए गए कुछ महत्त्वपूर्ण विधानों के उदाहरण है– भारत में कर्मकार क्षतिपूर्ति अधिनियम, 1923, प्रसूति हितलाभ अधिनियम, 1961, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 कोयला–खान भविष्य–निधि तथा प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम, 1948, कर्मचारी भविष्य निधि तथा प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम, 1952, तथा उपदान संदाय अधिनियम, 1972, ग्रेट ब्रिटेन में राष्ट्रीय बीमा

अधिनियम, राष्ट्रीय बीमा (औद्योगिक दुर्घटना) अधिनियम तथा राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा अधिनियम और संयुक्त राज्य अमेरिका का वृद्धावस्था, उत्तरजीवी, असमर्थता तथा स्वास्थ्य बीमा अधिनियम।

6. निवारण का सिद्धांत – समाज में होने वाले परिवर्तन और विकास के साथ–साथ मूल्य–प्रणालियों, प्रथाओं, रीति–रिवाजों, सामाजिक संस्थाओं और सामाजिक समूहों के पारस्परिक संबंधों में परिवर्तन होते रहते हैं। परिवर्तन और विकास की इस प्रक्रिया में कुछ प्रथाएं सामाजिक प्रगति एवं मानवीय हितों के विकास में बाधक हो जाती है। इनमें कई समाज के कुछ समूहों के शोषण को प्रोत्साहित करती है, जिनके फलस्वरूप अनेक लोगों के जीवन दयनीय हो जाते हैं। इन कुप्रथाओं में सती–प्रथा, शिशु–हत्या, बालविवाह, दहेज–प्रथा, अस्पृश्यता, वेश्यावृत्ति, भिक्षावृत्ति, दास, कृषि दास, बलात एवं बंधुआ श्रम प्रथाओं, बहुविवाह, मद्यपान आदि का उल्लेख किया जा सकता है। इन सामाजिक कुप्रथाओं को रोकने के उद्देश्य से भी समय–समय विधान बनाए गए हैं। भारतीय संविधान में बलात श्रम, मनुष्यों के क्रय–विक्रय, मध्यपान, अस्पृश्यता, मनुष्यों में अनैतिक व्यापार आदि कुप्रथाओं को रोकने से संबद्ध महत्त्वपूर्ण उपबंध है। सामाजिक कुप्रथाओं को रोकने के लिए कुछ अधिनियम हैं – बंगाल (1829), मद्रास (1830) और बंबई (1830) के सती विनियम, बालक–विवाह अवरोध अधिनियम, 1929, अस्पृश्यता विधान सम्बन्धी नागरिक अधिकार संरक्षा अधिनियम, 1856, अनैतिक (निवारण) अधिनियम, 1956 राज्य संरक्षकों के भिक्षावृत्ति निराय नशाबंदी से संबद्ध अधिनियम दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961, सती–कृत्य (निवारण) अधिनियम, 1987 और महिला अशिष्ट व्यपदेशन (प्रतिषेध) अधिनियम, 1986।

7. आर्थिक विकास का सिद्धांत – किसी भी देश में अनसमुदाय की सुख–समृद्धि वहां के आर्थिक विकास की अवस्था पर निर्भर करती है। जहां कुल और प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय अधिक वहां लोगों का रहन–सहन भी उंचे स्तर का होता है। विश्व के सभी देशों में आर्थिक विकास के लिए राज्य की ओर कदम उठाए गए है। इनमें कई ने योजनाबद्ध आर्थिक विकास के कार्यक्रम अपनाएं है। आर्थिक विकास के विभिन्न क्रमों में उद्योग, कृषि, परिवहन एंव संचार खनिज शक्ति के साधन, सिंचाई, वन्य संपदा, वाणिज्य–व्यापार, नवीय संसाधनों और सेवाओं के विकास, जनसंख्या की वृद्धि पर अंकुश और उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि तथा आय के वितरण सम्मिलित होते हैं।

श्रम और सामाजिक विधान के माध्यम से आर्थिक विकास की गति तेज की जा सकती है। इससे साधनों के अनुचित बंटवारे में भी सहायता मिलती है। श्रम–विधानों द्वारा कार्य की भौतिक दशाओं में सुधार लाकर उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। इसी तरह समुचित कार्य के घंटे, कल्याणकारी सुविधाओं, स्वास्थ्यप्रद पर्यावरण एवं उचित मजदूरी की व्यवस्था से लोगों की कार्यक्षमता बढ़ाई जा सकती है और आर्थिक प्रगति की गति तेज की जा सकती है। सामाजिक शोषण की रोकथाम, समाज के दुर्बल समूहों

की रक्षा, सामाजिक समानता की स्थापना, हड़ताल, तालाबंदी तथा अन्य प्रकार की औद्योगिक कार्रवाइयों पर रोक, सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था, श्रम–प्रबंध–सहयोग को प्रोत्साहन तथा औद्योगिक विवादों को सुलझाने के लिए संयंत्र की व्यवस्था का उत्पादन, उत्पादकता और आर्थिक विकास पर प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रभाव पड़ता है। विधान द्वारा मजदूरी की मात्रा, मजदूरी में अंतर, उत्पादन से जुड़ा बोनस, भविष्य–निधि, कल्याण–निधि, मजदूरी के भुगतान, महंगाई–भत्ते की मात्रा तथा अन्य भत्तों का नियमन कर राष्ट्रीय आय के वितरण, उत्पादन तथा लोगों के जीवन सतर में सुधार लाया जा सकता है। श्रम विधानों के माध्यम से बचत और निवेश की भी प्रोत्साहित किया जा सकता है, जिससे बेरोजगारी की समस्या के समाधान में मदद मिलेगी। जनसंख्या के नियंत्रण–संबंधी सामाजिक विधान का आर्थिक विकास से गहरा संबंध होता है। भिक्षावृत्ति, विवाह, सामाजिक कुरीतियों, नशाबंदी, सामाजिक शोषण से संबद्ध सामाजिक विधानों का भी आर्थिक समृद्धि पर प्रभाव पड़ता रहता है।

उपर्युक्त कारणों से कई देशों में आर्थिक विकास की नीति और कार्यक्रम बनाते समय श्रम और सामाजिक विधानों की भूमिका पर भी गंभीरता से विचार किया जाता है। कुछ देशों में श्रम–विधान तो आर्थिक विकास के कार्यक्रम के आवश्यक अंग होते हैं। मजदूरी, बोनस, औद्योगिक संबंध और सामाजिक सुरक्षा से सुबद्ध विधान आज विभिन्न देशों की राष्ट्रीय आर्थिक नीतियों और विकास कार्यक्रमों से गहराई से जुड़े होते हैं। जिन देशों में जनसंख्या का एक बड़ा भाग श्रमिकों का बना होता है, उनमें आर्थिक विकास के लिए श्रम एवं सामाजिक विधान का महत्व और भी अधिक होता है।

8. अंतराष्ट्रीय दायित्व का सिद्धांत – कई श्रम और सामाजिक विधान अंतराष्ट्रीय दायित्वों को निवाहने के लिए भी बनाएं जाते हैं। विश्व के विभिन्न देश प्रथम विश्वयुद्ध के बाद बने राष्ट्रसंघ और द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद बने संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य रहे हैं। वे इन संगठनों के विशिष्ट अभिकरणों, जैसे – अंतराष्ट्रीय श्रम संगठन, संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन, संयुक्त राष्ट्र बाल कोष, विश्व स्वास्थ्य संगठन तथा अन्य अंतराष्ट्रीय संगठनों के भी सदस्य है या उनके क्रियाकलाप में सक्रिय रूप से भाग लेते रहे हैं। इन अंतराष्ट्रीय संगठनों के सदस्य होने के नाते सदस्य–देशों का यह कर्त्तव्य होता है कि वे इनके द्वारा पारित किए गए प्रस्तावों एवं निर्णयों का सम्मान करें। श्रम एवं सामाजिक दशाओं के क्षेत्र में अनेक अंतराष्ट्रीय प्रस्ताव पारित किए गए हैं, जिनके उपबंधों को लागू करने के लिए विभिन्न देशों में कानून बनाए गए हैं।

श्रम एवं सामाजिक क्षेत्रों में अंतराष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा पारित किए गए प्रस्तावों की भूमिका अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण रही है। संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्य अंतराष्ट्रीय श्रम संगठन के भी सदस्य होते हैं। इस संगठन के तीन अवयव होते हैं। ये है – अंतराष्ट्रीय श्रम सम्मेलन, शासी निकाय तथा अंतराष्ट्रीय श्रम कार्यालय अंतराष्ट्रीय श्रम सम्मेलन की

बैठक वर्ष में एक बार होती है। इस सम्मेलन में प्रत्येक सदस्य राज्य चार प्रतिनिधि भेजता है, जिनमें दो सरकार के, एक श्रमिकों के और एक नियोजकों के प्रतिनिधि होते हैं। अंतराष्ट्रीय श्रम सम्मेलन का एक अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण कार्य श्रम एवं सामाजिक विषयों पर प्रस्ताव पारित करना है। इनमें कुछ प्रस्ताव अभिसमयों तथा कुछ सिफारिशों का रूप लेते हैं। दोनों के पारित होने के लिए सम्मेलन की कम–से–कम दो–तिहाई सदस्यों की उपस्थिति और दो–तिहाई का बहुमत आवश्यक होता है। सम्मेलन ही निर्णय करता है कि कौन सा प्रस्ताव अभिसमय का रूप लेगा और कौन सा सिफारिश का। अगर कोई प्रस्ताव अभिसमय का रूप लेता है, तो उसे अनुसमर्थन के लिए सदस्य राज्यों की सरकारों के पास भेजा जाता है। सदस्य राज्य किसी अभिसमय को अनुर्धित करने या नही करने के लिए स्वतंत्र है। अगर कोई राज्य किसी अभिसमय को अनुसमर्थित करने का निर्णय लेता है, तो उसका कर्त्तव्य होता है कि वह श्रम–विधान बनाकर या अन्य तरीके से उसे लागू करे। अगर वह किसी अभिसमय का अनुसमर्थन नहीं करने का निर्णय करता है, तो उसका कर्त्तव्य होता है कि अंतराष्ट्रीय श्रम संगठन को अनुसमर्थित नहीं करने के कारणों को भेजे। सिफारिशों के साथ अनुसमर्थित करने या नहीं करने का प्रश्न नहीं उठता। उन्हें सदस्य–राज्यों की सरकारों के पास इस अनुरोध के साथ भेजा जाता है कि श्रम और सामाजिक नीति संबंधी निर्णय करते समय या कार्यक्रम चलाते समय सिफारिशों के उपबंधों को लागू करने का प्रयास करें।

अभिसमयों और सिफारिशों के कुछ महत्त्वपूर्ण विषय रहे हैं – कार्य की दशाएं, कार्य के घंटे, साप्ताहिक अवकाश, संवेतन छुट्टी, बालकों और अल्पवयों का नियोजन, स्त्रियों का नियोजन, औद्योगिक स्वास्थ्य, सुरक्षा और कल्याण, सामाजिक सुरक्षा, औद्योगिक संबंध, नियोजन एवं अनियोजन आदि। अवतक अंतराष्ट्रीय श्रम सम्मेलन द्वारा 185 अभिसमय पारित किए जा चुके हैं। अलग–अलग सदस्य राज्यों ने अलग–अलग अभिसमयों को अनुसमर्थित कर श्रम विधान बनाए है। कुछ देशों ने बड़ी संख्या में अभिसमयों की अनुसमर्थित किया है, तो कुछ देशों ने कम संख्या में भारत ने अब तक 39 अभिसमयों को अनुसमर्थित किया है। इन अमिसमयों को लागू करने का सबसे महत्वपूर्ण तरीका श्रम और सामाजिक विधान बनाना रहा है। इस तरह, विश्व के विभिन्न देशों ने अंतराष्ट्रीय श्रम–संगठन के प्रति अपने दायित्व निवाहने के उद्देश्य से कई श्रम और सामाजिक विज्ञान बनाएं है।

कुछ सामाजिक विधानों के पीछे अन्य अंतराष्ट्रीय संगठनों के प्रस्तावों का भी हाथ रहा है। महिलाओं के अधिकारों, वेश्यावृत्ति उन्मूलन, नागरिक अधिकारों, प्रजातीय भेदभाव की रोकथाम, बालक–विकास, बाल–अपराध, सार्वजनिक स्वास्थ्य, अशिक्षा एवं निरक्षरता आदि क्षेत्रों में अंतराष्ट्रीय प्रस्ताव पारित किए गए है। कई देशों ने इन प्रस्तावों को लागू करने के लिए भी विधान बनाए हैं।

9.7 सार संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में विधान से सम्बन्धित तथ्यों की विवेचना की गई तथा श्रम विधान की अवधारणा एवं परिभाषाओं को दिया गया है। इसी इकाई में श्रम विधान के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला गया है। इस इकाई के अंत में श्रम विधान के सिद्धान्तों के बारे में भी विस्तृत रूप से लिखा गया है।

9.8 परिभाषिक शब्दावली

Legislation	विधान	Protection	संरक्षा
Authority	प्राधिकार	Criticism	आलोचना
Rules of Law	विधि के नियम	Social Justice	सामाजिक न्याय
Ordinance	अध्यादेश	Declaration	घोषणा
Instruments	लिखत	Remuneration	पारिश्रमिक
Directives	निदेशों	Welfare	कल्याण
Execitive	कार्यकारिणी	Standing Orders	स्थायी अध्यादेश
Regulations	विनियमों	Benefits	हितलाभ
Customary	प्रथागत	Disablement	अशक्तता
Code of Individual Legislators	व्यक्तिगत विधायकों की संहिता	Prevention	निवारण
Mores	लोकरीतियां	Economic	आर्थिक

9.10 अभ्यास प्रश्न – लघु, विस्तृत

1. विधान से आप क्या समझते हैं ?
2. श्रम विधान की अवधारणा क्या है ?
3. श्रम विधान के अर्थ को समझाइये ?
4. श्रम विधान के उद्देश्यों को लिखिये ?
5. श्रम विधान के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों पर एक निबन्ध लिखिए ?

9.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिन्हा एवं इन्दूबाला, श्रम एवं समाज कल्याण, आधुनिक श्रम विधान के सिद्धान्त, मां दुर्गा प्रोसेशिंग प्रेस, पटना, वर्ष 2008, पेज 1–15.
2- ममोरिया एवं ममोरिया, सेवीवर्गीय प्रबन्ध एवं औद्योगिक सम्बन्ध, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा, वर्ष 2002, पेज 560–562.

इकाई – 10

कार्य की शर्तों एवं सुरक्षा से सम्बधित विधान

Legislation (Provisions) Pertaining to Working Condition & Safety

इकाई की रूपरेखा

10.1 परिचय
10.2 उद्देश्य
10.3 कारखाना अधिनियम : महत्वपूर्ण परिभाषायें
10.3.1 स्वास्थ्य सम्बन्धी उपबन्ध
10.3.2 सुरक्षा सम्बन्धी उपबन्ध
10.3.3 कल्याण सम्बन्धी उपबन्ध
10.3.4 वयस्क कर्मकारों के काम के घण्टे
10.3.5 अल्पवयस्क व्यक्तियों का नियोजन
10.4 खान अधिनियम का महत्वपूर्ण उपबन्ध
10.5 बागान श्रमिक अधिनियम का महत्वपूर्ण उपबन्ध
10.6 मोटर यातायात श्रमिक अधिनियम का महत्वपूर्ण उपबन्ध
10.7 दुकान और संस्थान अधिनियम के महत्वपूर्ण उपबन्ध
10.8 सार संक्षेप
10.9 परिभाषिक शब्दावली
अभ्यास प्रश्न – लघु, विस्तृत
10.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

10.1 परिचय

वर्तमान समय में जहाँ पर एक तरफ भारत आधुनिक युग्म में नितनय आयात प्रस्तुत कर रहा है वहीं पर औद्योगिक की प्रक्रिया अपना योगदान प्रस्तुत कर रही है। भारत में आधुनिक उद्योगों के विकास के पश्चात से मालिकों को बहुत दिनों की इस बात की स्वतंत्रता रही कि वे अपने श्रमिकों से किसी भी प्रकार का कार्य ले सकते हैं। लेकिन प्रगति के फलस्वरूप कर्मचारियों के बीच अपने अधिकारों के प्रति जागरूता उत्पन्न हुई जिसके फलस्वरूप 1881 में प्रथम कारखारा अधिनियम बना। समय–समय पर कारखाना अधिनियम में परिवर्तन होते रहे। 1948 कारखाना अधिनियम इन्हीं

संसोधित अधिनियमों से एक है। जिससे सम्बन्धित महत्वपूर्ण उपबन्ध अग्रलिखित दिये जा रहे है।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- कारखाना अधिनियम 1948 में दिये गये विभिन्न परिभाषाओं के बारे में जान सकेगें।
- कारखाना अधिनियम उल्लेखित स्वास्थ्य सम्बन्धी उपबन्धों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- सुरक्षा संबंधी उपबन्धों के बारे में लिख सकेगें।
- कल्याण सम्बन्धी उपबन्धों की जानकारी कर सकेगें।
- कार्य के घंटों के बारे में दिये गये उपबन्धों के बारे में लिख सकेगें।
- अल्पवयस्क व्यक्तियों के नियोजन के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- खान अधिनियम के महत्वपूर्ण उपबन्धों के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत कर सकेगें।
- बागान श्रमिक अधिनियम के महत्वपूर्ण उपबन्धों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- मोटर यातायात श्रमिक अधिनियम के महत्वपूर्ण उपबन्धों के बारे में लिख सकेगें।
- दुकान और संस्थान अधिनियम क्या है ? तथा इससे सम्बन्धित उपबन्धों के बारे में जान सकेगें।

10.3 कारखाना अधिनियम, 1948 : महत्त्वपूर्ण परिभाषाएं

1. **कारखाना** – कारखाना अपनी प्रसीमाओं सहित ऐसा परिसर है, जिसमें (क) दस या अधिक कर्मकार काम कर रहे हैं या पिछले बारह महीने के किसी दिन काम कर रहे थे और जिसके किसी भी भाग में विनिर्माण–प्रक्रिया शक्ति की सहायता से की जा सकती रही है, या आम तौर से इस तरह की जाती है, या (ख) जिसमें बीस या अधिक कर्मकार काम कर रहे हैं या पिछले बारह महीने के किसी दिन काम कर रहे थे, और जिसके किसी भी भाग में विनिर्माण–प्रक्रिया शक्ति की सहायता के बिना की जा रही है, या आम तौर से ऐसे की जाती है। (धारा 2 M)
2. **विनिर्माण–प्रक्रिया** – विनियोग–प्रक्रिया में अग्रलिखित सम्मिलित है– (1) किसी वस्तु या पदार्थ के प्रयोग, विक्रय, परिवहन, परिदान या व्ययन की दृष्टि से उसका निर्माण, परिवर्तन, मरम्मत, अलकरण, परिष्करण, पैंकिग, स्नेहन, धुलाई, सफाई, विघटन, उन्मूलन या अन्य प्रकार से अभिक्रियान्वयन या अनुकूलन करने

के लिए कोई प्रक्रिया, (2) तेल, जल, मल या कोई अन्य पदार्थ उद्वाहित करने के लिए कोई प्रक्रिया, (3) शक्ति का उत्पादन, रूपांतरण या संचारण करने के लिए कोई प्रक्रिया; (4) मुद्रण के लिए टाइप कंपोज करने, लेटर प्रेस, अश्म–मुद्रण, प्रकाशोत्कीर्ण या अन्य वैसी ही प्रक्रिया द्वारा मुद्रण या जिल्दबंदी करने के लिए कोई प्रक्रिया; (5) पोतों या अलयानों की सन्निर्मित या पुनः सन्निर्मित करने, मरम्मत करने, पुनः ठीक करने, परिष्कृत करने या विघटित करने के लिए कोई प्रक्रिया तथा (6) शीतागार में किसी वस्तु के परिक्षण या भंडारकरण के लिए कोई प्रक्रिया। (धारा 2 K)

3. **कर्मकार** – कर्मकार का अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है, जो किसी विनिर्माण–प्रक्रिया में या मशीनरी अथवा विनिर्माण प्रक्रिया के लिए प्रयुक्त परिसर के किसी भाग की सफाई में या विनिर्माण–प्रक्रिया अथवा विनिर्माण प्रक्रियाधीन विषयवस्तु के प्रासंगिक या उससे संबद्ध किसी अन्य प्रकार के काम में नियोजित हो, चाहे इसकी जानकारी नियोजक को हो या नहीं या उसका नियोजन सीधे या किसी अभिकरण के द्वारा हुआ हो या उसे पारिश्रमिक पर या बिना पारिश्रमिक के नियोजित किया गया हो। लेकिन, संघ के सशस्त्र बल का कोई सदस्य कर्मकार की परिभाषा के अंतर्गत नही आता। (धारा 2 I)
4. **बालक** – बालक का अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है, जिसने अपनी आयु का पंद्रहवीं वर्ष पूरा नहीं किया है। (धारा 2 C)
5. **कुमार** – कुमार का अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है जिसने अपनी आयु का पंद्रहवीं वर्ष पूरा कर लिया है, किन्तु अपना अठ्ारहवीं वर्ष पूरा नहीं किया है। (धारा 2 b)
6. **अल्पवय व्यक्ति** – अल्पवय व्यक्ति का अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से हे, जो या तो बालक या कुमार है। (धारा 2 d)
7. **वयस्क** – वयस्क का अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है, जिसने अपनी, आयु का अठ्ारहवीं वर्ष पूरा कर लिया है। (धारा 2 a)

10.3.1 स्वास्थ्य संबंधी उपबंध

कारखाना अधिनियम, 1948 के स्वास्थ्य संबंधी उपबध सफाई, कचरे और बहिःस्त्राव, संवातन और तापमान, भूल और धूम, कृत्रिम नमीकरण, अतिभीड़, रोशनी, पीने का जल, शौचालय और मूत्रालय तथा थूकदान से संबद्ध हैं। ये उपबंध निम्नलिखित हैं –

1. **सफाई** – हर कारखाने को साफ रखना आवश्यक है। उसे किसी शौचालय या अन्य प्रकार के अप्रदूषण से उत्पन्न दुर्गंध से मुक्त रखा जाएगा। काम करने के कमरों के फर्शे, बेंचों, सीढ़ियों और रास्तों से कूड़े और कचरे के ढेर का प्रतिदिन

बुहारकर या अन्य कारगर तरीके से हटाना आवश्यक है। काम करने के प्रत्येक कमरे के फर्श को धोकर या किसी अन्य प्रभावी ढंग से सप्ताह में कम–से–कम एक बार साफ किया जाएगा। जहाँ किसी विनिर्माण प्रक्रिया के दौरान फर्श भींग जाता हों, वहाँ जल–निकासी की व्यवस्था की जाएगी। कमरों की सभी भीतरी दीवारों, विभाजकों, छतों, ऊपरी हिस्सों तथा रास्तों और सीढ़ियों की सभी दीवारों, पाश्वों और ऊपरी हिस्सों को पांच वर्ष को प्रत्येक कालावधि में कम–से–कम एक बार पुनः रंगा या रोगन किया जाएगा। (धारा 11)

2. **कचरे और बहिःस्त्राव का व्वचन** – प्रत्येक कारखाने में विनिर्माण प्रक्रिया के चलाए जाने से निकलनेवाले कचरे और बहिःस्त्राव को हानिकारक नहीं होने देने और उनके व्ययन के लिए कारगर प्रबंध किए जाएंगे। (धारा 12)
3. **संचालन और तापमान** – कारखाने के प्रत्येक कमरे में स्वच्छ वायु के संचारण के लिए पर्याप्त संवातन की प्रभावपूर्ण व्यवस्था की जाएगी। काम के प्रत्येक कमरे में कर्मकारों के युक्तियुक्त सुखद दशा सुनिश्चित करने तथा उनके स्वास्थ्य की रक्षा के लिए उपयुक्त तापमान बनाए रखना आवश्यक है। दीवारों और छतों की सामग्री इस प्रकार की होगी और उन्हें इस प्रकार बनाया जाएगा, जिससे तापमान बढ़े नहीं और यथासंभव कम बना रहे। जहां कार्य की प्रकृति के कारण अत्यधिक ऊंचा तापमान उत्पन्न होता हो, वहां गर्भ भागों का रोधन करके या अन्य प्रभावों ढंग से ऊंचे तापमान उत्पन्न करने वाली प्रक्रिया को काम के कमरे से पृथक करना आवश्यक है, जिससे कर्मकारी के स्वास्थ्य को क्षति नहीं पहुंचे। (धारा 13)
4. **धूल और धूम** – प्रत्येक कारखाने में, जिसमें विनिर्माण प्रक्रिया के कारण धूम, धूल या अन्य आपद्रव्य इस प्रकार का और इतनी मात्रा में निकलता हो, जो वहां कार्यरत कर्मकारों के लिए क्षतिकारक या संतापकारी हो, तो उसकी सांस में जाने और उसके संचयन को रोकने के लिए प्रभावपूर्ण उपाय करना आवश्यक है। अगर इसके लिए कोई निष्कासक साधन आवश्यक हो, तो उसे धूल, धूम या अपद्रव्य के निकटतम मूल स्थल पर प्रयुक्त किया जाएगा और जहां तक संभव हो, ऐसे स्थान को बंद कर दिया जाएगा। (धारा 14)
5. **कृत्रिम नमीकरण** – राज्य सरकार को उन सभी कारखानों के संबंध में नियम बनाने की शक्ति प्राप्त है, जिनमें वायु की नयी कृत्रिम रूप से बढ़ाई जाती हो। ऐसे नियम कृत्रिम नमीकरण से संबद्ध कई बातों के लिए बनाए जा सकते हैं, जैसे – नमीकरण के मान, वायु की नमी को कृत्रिम रूप से बढ़ाने के तरीकों, वायु की नमी के निर्धारण के लिए परीक्षण और पर्याप्त संवातन सुनिश्चित करने तथा वायु को ठंडा करने के लिए बनाए जाने वाले तरीको। (धारा 15)

6. **अतिभीड़** – कारखाने के किसी भी कमरे में इतनी अतिभीड़ नहीं की जाएगी कि वह वहां कार्यरत कर्मकारों के स्वास्थ्य के लिए क्षतिकर हो। कारखाना अधिनियम, 1948 के प्रारंभ की तारीख के पूर्व स्थापित कारखानों में प्रत्येक कर्मकार के लिए कम–से–कम 9.9 घन मीटर तथा अधिनियम के प्रारंभ के बाद में बने कारखानों में प्रत्येक कर्मकार के लिए कम–से–कम 14.2 घन मीटर जगह की व्यवस्था करना अनिवार्य है। इस संबंध में कमरे के फर्श के तल से 4.2 मीटर से ऊपर की जगह को गणना में सम्मिलित नहीं किया जाएगा। मुख्य कारखाना निरीक्षक कारखाने के प्रत्येक कमरे के लिए कर्मकारों की अधिकतम संख्या निर्धारित कर सकता है। मुख्य कारखाना निरीक्षक को इस संबंध में छूट देने की भी शक्ति प्राप्त है। (धारा 16)
7. **प्रकाश** – कारखाने के प्रत्येक भाग में जहां कर्मकार काम करते हैं या जहां से गुजरते हैं, प्राकृतिक या कृत्रिम या दोनों प्रकार के पर्याप्त और यथोचित प्रकाश की व्यवस्था करना आवश्यक है। (धारा 17)
8. **पीने का जल** – प्रत्येक कारखाना में कर्मकारों के लिए सुविधाजनक एवं उपयुक्त स्थलों पर पर्याप्त मात्रा में पीने के स्वच्छ जल की प्रभावपूर्ण व्यवस्था करना आवश्यक है। ऐसे सभी स्थलों पर कर्मकारों की बहुसंख्या द्वारा समझी जाने वाली भाषा में 'पीने का जल' लिखा होगा। (धारा 18)
9. **शौचालय एवं मूत्रालय** – हर कारखाने में विहित प्रकार के पर्याप्त शौचालयों और मूत्रालयों की व्यवस्था करना अनिवार्य है। ये स्थान सुविधाजनक रूप से अवस्थित होंगे और काम पर लगे सभी कर्मकारी को सभी समय सहजता से उपलब्ध होगें। पुरुष और महिला कर्मकारी के लिए अलग–अलग बंद शौचालयों और मूत्रालयों की व्यवस्था करना अनिवार्य है। (धारा 19)
10. **थूकदान** – हर कारखाने में सुविधाजनक स्थानो पर पर्याप्त संख्या में थूकदान की व्यवस्था करना अनिवार्य है। थूकदान को साफ और स्वास्थ्यकर दशा में रखा जाएगा। राज्य सरकार किसी कारखाने में रखे जाने के लिए थूकदान के प्रकार, उनकी संख्या, उनके स्थान निश्चित करने तथा उन्हें साफ और स्वास्थ्यकर दशा में रखने से संबद्ध नियम बना सकती है। थूकदान को छोड़कर कारखाना–परिसर में अन्यत्र थूकने वाले को पांच रुपए के जुर्माने से दंडित किया जा सकता है। (धारा 20)

10.3.2 सुरक्षा संबंधी उपबंध

अधिनियम के सुरक्षा संबंधी महत्वपूर्ण उपबंध निम्नांकित रूप में हैं –

1. **मशीनरी को घेरना** – अधिनियम में कई प्रकार की मशीनरी या यंत्रों या उनके भागों का उल्लेख है, जिनमें कर्मकारों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए बाड़

लगाना अनिवार्य है। इनमें ये यंत्र सम्मिलित है– (1) मूलगत उत्पादक के गतिमान भाग तथा उनसे संबंद्ध गतिपालक चक्र (2) जलचव और जल–टर्बाइल की आवाही कुल्या तथा अंतः कुल्या; (3) धारक छड़ के भाग जो खराद के अग्रधारक से आगे निकल जाता है; तथा आवश्यकतानुसार (4) विद्युत जानत्र मोटर या घूर्णी परिवर्तित्र के भाग; (5) संचारण मशीनरी के भाग तथा (6) अन्य मशीनरों के संकटकारी भाग। राज्य सरकार इस संबंध में अतिरिक्त सावधानियों के पालन के लिए नियम बना सकती है और इन प्रावधानों से छूट भी दे सकती है। (धारा 21)

2. **गतिमान मशीनरी पर या उसके निकट काम** – अगर किसी मशीनरी की परीक्षा उसकी गति की स्थिति में करनी आवश्यक हो, तो ऐसी परीक्षा केवल चुस्त कपड़े पहने विशेष रूप से प्रशिक्षित वयस्क कर्मकार द्वारा ही की जाएगी। (धारा 22)
3. **खतरनाक मशीनों पर अल्पसय व्यक्तियों का नियोजन** – किसी भी अल्पवय व्यक्ति को किसी मशीन पर तब तक काम करने लिए नहीं लगाया जाएगा जबतक कि उसे मशीन से उत्पन्न होने वाले खतरों तथा अनुपालन की जानेवाली सावधानियों के बारे में पूरी तरह अवगत न करा दिया गया हो। (धारा 23)
4. **आघात गियर और बिजली काटने के लिए युक्तियाँ** – प्रत्येक कारखाने में उपयुक्त आघात गियर या अन्य यांत्रिक साधनों को चालन पट्टों को चलाने के लिए प्रयुक्त किया जाएगा। इन गियरों या साधनों की बनावट इस प्रकार होगी या उन्हें इस प्रकार रखा जाएगा कि पट्टा सख्त घिरनी पर वापस नहीं आ जाए। (धारा 24)
5. **स्वीक्रिय मशीनें** – किसी भी स्वक्रिय मशीन के गामी भाग और उसपर ले जाई जानेवाली किसी सामग्री को किसी अन्य स्थिर संरचना से 45 सेंटीमीटर की दूरी के अंदर बाहरी या भीतरी आरपार गमन–पथ पर चलने नहीं दिया जाएगा। लेकिन, अधिनियम के प्रारंभ होने के पहले स्थापित मशीनों के संबंध में इस उपबंध में छूट दी जा सकती है। (धारा 25)
6. **नई मशीनरी का आवेष्टन** – इस अधिनियम के लागू होने के बाद स्थापित होने वाले हर कारखाने में शक्ति से चलाई जाने वाली सभी विहित मशीनरी और उनके भागों या पुर्जों आदि का आवेष्टन करना या उन्हें सुरक्षापूर्ण स्थिति में रखना आवश्यक है, जिससे उनसे खतरा उत्पन्न नहीं हो। (धारा 26)

7. **रूई धुनकियों के पास स्त्रियों और बालकों के नियोजन का प्रतिषेध** – रूई दबाने के कारखाने के किसी ऐसे भाग में, जिसमें रूई–धुनकी चल रही हो, किसी स्त्री या बालक को काम पर नहीं लगाया जा सकता। (धारा 27)
8. **उत्तोलक और उत्थापक** – प्रत्येक कारखाने में उत्तोलक तथा उत्थापक अच्छी यांत्रिक, बनावट, ठोस सामग्री तथा पर्याप्त ताकतवाले होंगे। उन्हें समुचित ढंग से अनुरक्षित रखा जाएगा तथा हर छह महीने में कम–से–कम एक बार उनकी जांच किसी सक्षम व्यक्ति द्वारा कराई जाएगी। (धारा 28)
9. **उत्थापक यंत्र, जंजीर आदि** – अधिनियम में व्यक्तियों, मालों या अन्य सामग्री को ऊपर या नीचे ले जाने के लिए उत्तोलक और उत्थापक से भिन्न अन्य उत्थापक यंत्रों, जंजीरों, रस्सियों और उत्थापक टैकल की बनावट, निर्माण–सामग्री, ताकत, अनुरक्षण, परीक्षण, अधिकतम वहनीय भार संबंधी उपबंध उत्तोलकों और उत्थापकों के साथ लागू होने वाले उपबंधों की तरह है। इनके अतिरिक्त, अगर कोई व्यक्ति किसी चल–क्रेन के चल मार्ग पर या उसके पास ऐसे स्थान पर नियोजित है, जहां उसके क्रेन से टकराने की संभावना है, तो ऐसे कदम उठाए जाएंगे, जिससे क्रेन उस स्थान से बीस फुट के अंदर नहीं जाए। (धारा 29)
10. **परिक्रामी मशीनरी** – प्रत्येक कारखाने में जिसमें घिसाई की प्रक्रिया चलती हो, वहाँ सान या अपघर्षी चक्र की अधिकतम निरापद चाल की सूचना स्थायी रूप से लिखी होनी चाहिए। (धारा 30)
11. **दाब संयंत्र** – यदि किसी कारखाने में किसी संयंत्र या मशीनरी या उसके किसी भग को वायुमंडलीय दाब से अधिक दाब पर चलाया जाता हो, तो यह सुनिश्चित करने के लिए प्रभावी उपाय किए जाएँगे कि ऐसे भाग का दाब निरापट कर्मचालन दाब से अधिक न हो। राज्य सरकार किसी भी संयंत्र या मशीनरी की परीक्षा और परख के लिए नियम बना सकती है। कुछ विशेष परिस्थितियों में राज्य सरकार इस उपबंध से छूट भी दे सकती है। (धारा 31)
12. **फर्श, सीढ़ियां और पहुंच के साधन** – प्रत्येक कारखाने में फर्श, सोपान, सीढ़ियां तथा मार्ग सुदृढ़ता से निर्मित होंगे और उन्हें बाधाओं तथा फिसलन से मुक्त रखा जाएगा। (धारा 32)
13. **स्थिर पात्र, गर्त, चहबच्चे आदि** – कारखाने में अगर स्थिर पात्र, गर्त, चहबच्चे या फर्श या भूमि में दरार अपनी गहराई, निर्माण या स्थिति के कारण खतरे के स्रोत हों, तो उन्हें सुरक्षित रूप से ढंका जाएगा या उनपर पक्की बाड़ लगाई जाएगी। राज्य सरकार इस उपबंध से छूट दे सकती है। (धारा 33)
14. **अत्यधिक भार** – कारखानों में किसी व्यक्ति को इतना भारी बोझ उठाने, ले जाने या खिसकाने नहीं दिया जाएगा जिससे उसे क्षति पहुंचने को संभावना हो। राज्य

सरकार वयस्क पुरुषों, वयस्क स्त्रियों, कुमारों और बालकों के द्वारा उठाए जाने, ले जाने या खिसकाए जाने वाले अधिकतम भार विहित कर सकती है। (धारा 34)

15. **आंखों की सुरक्षा** – राज्य सरकार नियमों द्वारा ऐसी विनिर्माण–प्रक्रिया पर लगे व्यक्तियों की आंखों की रक्षा के लिए उपयुक्त, पर्दो या गॉगलों की व्यवस्था करना अनिवार्य कर सकती है, जिससे कार्य–प्रक्रिया के दौरान छिटकनेवाले कणों या खंडों या अत्यधिक प्रकाश के कारण आंखों की क्षति का खतरा हो। (धारा 35)

16. **खतरनाक धुएं, गैस आदि से सुरक्षा** – किसी भी कारखाने में ऐसे कोष्ठ, टंकी, कुंड, गर्त नलिका, धूमवाहिका या अन्य परिरुद्ध स्थान में जहाँ खतरनाक गैस, धुआँ, वाष्प या धूल विद्यमान हो, किसी भी व्यक्ति को तब तक प्रवेश करने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा या उसकी अनुमति दी जाएगी, जबतक उसमें पर्याप्त आकार के मैनहोल या बाहर जाने के अन्य कारगर साधनों की व्यवस्था नही की गई हो। (धारा 36)

17. **वहनीय विद्युत प्रकाश का प्रयोग** – किसी कोष्ठ तालाब, कुंड, नलिका, धूमवाहिका या अन्य परिरुद्ध स्थान के भीतर 24 वोल्ट से अधिक वाले वहनीय विद्युत प्रकाश या विद्युत साधनों के प्रयोग की अनुज्ञा तब तक नहीं दी जाएगी जबतक पर्याप्त युक्तियों की व्यवस्था नही की गई हो। अगर परिरुद्ध स्थानों के भीतर ज्वलनशील गैस धुँआ या धूल के विद्यमान होने की संभावना है वहां केवल ज्वाला सह लैप या प्रकाश का ही प्रयोग किया जाएगा। (धारा 36A)

18. **विस्फोटक या ज्वलनशील धूल, गैस आदि** – अगर किसी विनिर्माण–प्रक्रिया से इस प्रकार की और इतनी मात्रा में धूल, गैस, धुआं या वाष्प पैदा होता हो कि उसके ज्वलन से विस्फोट होने की संभावना हो, तो वहां विस्फोट को रोकने के लिए सभी संभव उपाय किए जाएंगे। (धारा 37)

19. **आग लगने की दशा में सावधानियां** – प्रत्येक कारखाने में भीतर या बाहर आग लगने और उसके फैलने को रोकने के लिए सभी व्यावहारिक उपाय किए जाएंगें तथा इसके लिए निम्नलिखित व्यवस्था आवश्यक है –

    a. आग लगने की स्थिति में सभी व्यक्तियों के बच निकलने के लिए सुरक्षित उपाय, तथा

    b. आग बुझाने के लिए आवश्यक उपस्कर तथा सुविधाएं। (धारा 38)

20. **भवनों और मशीनरी की सुरक्षा, स्थिरता की परख आदि** – अगर कारखानों के भवन, मार्ग, मशीनरी या संयंत्र के उपभोग करने में मानव–जीवन या सुरक्षा के लिए आसन्न खतरा है, तो कारखाना–निरीक्षक उनका प्रयोग तब तक के लिए

स्थगित करने का आदेश दे सकता है, जब तक उनकी मरम्मत नहीं कर ली जाती। (धारा 39-40 & 40A)

21. **सुरक्षा अधिकारी** – प्रत्येक कारखाने में, (1) जिसमें एक हजार या उससे अधिक कर्मकार नियोजित हैं या (2) जिसमें राज्य सरकार की राय में विनिर्माण प्रक्रिया या संक्रिया के कारण उसमें नियोजित व्यक्तियों की शारीरिक क्षति, विषाक्तीकरण, बीमारी या स्वास्थ्य के लिए कोई अन्य खतरा है, तो वहां राज्य सरकार द्वारा अपेक्षित संख्या में सुरक्षा अधिकारियों की नियुक्ति अनिवार्य की जा सकती है। राज्य सरकार को सुरक्षा अधिकारियों के कर्त्तव्य, अर्हताएं और सेवा की शर्ते विहित करने की शक्ति प्राप्त है। (धारा 40B)

22. **सुरक्षा संबंधी नियम बनाने की शक्ति** – राज्य सरकार कारखानों में नियोजित व्यक्तियों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए अतिरिक्त अध्युपायों से संबद्ध नियम बना सकती है। (धारा 41)

23. **खतरनाक संक्रियाएं** – अगर राज्य सरकार की राय में किसी कारखाने में चलाई जाने वाली कोई विनिर्माण प्रक्रिया या संक्रिया ऐसी है, जिससे उसमें नियोजित व्यक्तियों को शारीरिक क्षति, विषाक्तीकरण या रोग का गंभीर खतरा हो, तो वह निम्नांकित बातों के संबंध में नियम बना सकती है–

   a. विनिर्माण प्रक्रिया या संक्रिया के उल्लेख तथा उसे खतरनाक घोषित करने के संबंध में,

   b. उस सक्रिया में स्त्रियों, कुमारी या बालकों के नियोजन पर रोक लगाने के संबंध में।

   c. उस संक्रिया में नियोजित या नियोजन चाहने वाले व्यक्तियों की सामाजिक चिकित्सकीय परीक्षा के संबंध में।

   d. उस संक्रिया के समीप नियोजित व्यक्तियों की संरक्षा के संबंध में।

   e. उस संक्रिया से संबद्ध किसी सामग्री या प्रक्रिया के नियंत्रण के संबंध में, या

   f. विनिर्माण प्रक्रिया या संक्रिया की खतरनाक प्रकृति को ध्यान में रखते हुए अतिरिक्त कल्याण संबंधी सुख सुविधाओं, स्वास्थ्य सुविधाओं तथा रक्षात्मक उपकरणों और वस्त्रों के संबंध में। (धारा 87)

24. **गंभीर परिसंकट के कारण नियोजन के प्रतिषेध की शक्ति** – जब कारखाना निरीक्षक की राय में कारखाने या उसके किसी भाग की दशाएं ऐसी है जिनके कारण वहां नियोजित व्यक्तियों या आसपास की सामान्य जनता को चोट या मृत्यु के रूप में गंभीर खतरा हो सकता है, तो वह कारखाने के अधिष्ठाता को लिखित आदेश द्वारा गंभीर खतरे के कारणों के बारे में सूचित कर सकता है

तथा कारखाने या उसके संबद्ध भाग में खतरे के हटाए जाने तक श्रमिकों के नियोजन को प्रतिषिद्ध कर सकता है। (धारा 87 A)

25. **कतिपय दुर्घटनाओं तथा रोगों की सूचना** – कारखाने के प्रबंधक के लिए विहित प्राधिकारियों के पास कारखाने में होनेवाली निम्नांकित प्रकार की दुर्घटनाओं तथा रोगों की सूचना देना आवश्यक है –
   - **a.** ऐसी दुर्घटना, जिसके कारण किसी कर्मकार की मृत्यु हो गई हो,
   - **b.** ऐसी दुर्घटना, जिसके फलस्वरूप कर्मकार दुर्घटना के शीघ्र बाद 48 घंटे या उससे अधिक अवधि के लिए काम करने में असमर्थ हो गया हो, या
   - **c.** विहित प्रकार की अन्य दुर्घटना। (धारा 88)

26. **दुर्घटना या रोग–संबंधी मामलों की जांच की शक्ति** – राज्य सरकार कारखाने में होने वाली किसी दुर्घटना या तीसरी अनुसूची में उल्लिखित किसी रोग के मामले की जांच करने के लिए किसी सक्षम व्यक्ति को नियुक्त कर सकती है। (धारा 90)

27. **नमनू लेने की शक्ति** – अगर कारखाना निरीक्षक को इस बात का विश्वास है कि किसी कारखाने में किसी पदार्थ के व्यवहार से संबंधित अधिनियम या उसके अधीन बनाए गए नियमों का उल्लघंन होता है या उससे कर्मकारों को शारीरिक क्षति या उनके स्वास्थ्य को हानि पहुंचती है, तो वह साधारण काम के घंटों के दौरान तथा अधिष्ठता, प्रबंधक या प्रभारी व्यक्ति को सूचित करने के बाद कारखाने से उस पदार्थ का नमूना पर्याप्त मात्रा में ले सकता है। (धारा 91)

28. **सुरक्षा एवं व्यावसायिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण** – मुख्य कारखाना निरीक्षक, भारत सरकार के कारखाना सलाह सेवा एवं श्रम–संस्थानों का महानिदेकशक या राज्य सरकार या उपर्युक्त अधिकारियों द्वारा अधिकृत व्यक्ति कारखाने के सामान्य कार्य के घंटों के दौरान और कारखाने के अधिष्ठताता, प्रबंधक अथवा अन्य प्रभारी व्यक्ति को लिखित आदेश देने के बाद व्यावसायिक स्वास्थ्य संबंधी सर्वेक्षण कर सकता है। (धारा 91A)

10.3.3 कल्याण संबंधी उपबंध

कल्याण के अध्याय में सम्मिलित किए गए उपबंध निम्नांकित रूप में हैं –

1. **धुलाई की सुविधाएं** – प्रत्येक कारखाने में वहां के कर्मकारों के उपयोग के लिए धुलाई की पर्याप्त और उपयुक्त सुविधाओं की व्यवस्था करना आवश्यक है। पुरुष और स्त्री कर्मकारों के लिए अलग–अलग पर्दायुक्त सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएगी। इन सुविधाओं को साफ रखा जाएगा और ये सहजता से उपलब्ध होगी। राज्य सरकार धुलाई की सुविधाओं के समुचित और उपयुक्त मानक विहित कर सकती है। (धारा 42)

2. **वस्त्रों को रखने और सुखाने की सुविधाएं** – राज्य सरकार कारखानों में काम के घंटों के दौरान न पहले जाने वाले वस्त्रों को रखने और गीले कपड़ों को सुखाने के लिए समुचित स्थानों की व्यवस्था से संबद्ध नियम बना सकती है। (धारा 43)
3. **बैठने की सुविधाएं** – प्रत्येक कारखाने में खड़े होकर काम करने के लिए बाध्य सभी कर्मकारों के बैठने के लिए उपयुक्त व्यवस्था की जाएगी जिससे वे काम के दौरान उपलब्ध विश्राम के अवसरों का लाभ उठा सकें। (धारा 44)
4. **प्राथमिक उपचार–साधन** – कारखानों में प्रत्येक डेढ़ सौ कर्मकारों के लिए कम–से–कम एक की दर से प्राथमिक उपचार बक्से या कबर्ड रखे जाएंगें। इन्हें सारे काम के घंटों के दौरान आसानी से उपलब्ध होना चाहिए। (धारा 45)
5. **कैंटीन** – ऐसे प्रत्येक कारखाने में जहाँ 250 से अधिक कर्मकार सामान्यतः नियोजित हो, वहां राज्य सरकार नियमों द्वारा अधिष्ठाता को कर्मकारों के उपयोग के लिए कैंटीन की व्यवस्था करने के लिए बाध्य कर सकती है। (धारा 46)
6. **आश्रय, विश्राम–कक्ष और भोजन–कक्ष** – ऐसे कारखाने में, जिसमें 150 से अधिक कर्मकार सामान्यतः नियोजित हों, वहां उनके उपयोग के लिए उपयुक्त आश्रय या विश्राम–कक्ष और भोजन–कक्ष की व्यवस्था करना भी अनिवार्य है। (धारा 47)
7. **शिशु–कक्ष** – प्रत्येक कारखाने में, जिसमें तीस से अधिक स्त्री कर्मकार सामान्यतः नियोजित है, वहां उनके 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों के लिए उपयुक्त शिशु–गृह की व्यवस्था करना अनिवार्य है। शिशु–गृहों में पर्याप्त जगह, पर्याप्त प्रकाश और संवातन का होना आवश्यक है। शिशु–गृहों में बालकों और शिशुओं को प्रशिक्षित स्त्रियों की देखरेख में रखा जाएगा। (धारा 48)
8. **कल्याण अधिकारी** – प्रत्येक कारखाने में, जिसमें 500 या उससे अधिक कर्मकार सामान्यतः नियोजित है, अधिष्ठाता के लिए उसमें विहित संख्या में कल्याण–अधिकारियों को नियुक्त करना आवश्यक है। राज्य सरकार को कल्याण–अधिकारियों के कर्त्तव्य, अर्हताएं और सेवा की शर्तें विहित करने की शक्ति प्राप्त है। (धारा 49)
9. **कल्याण–संबंधी नियम बनाने की शक्ति** – राज्य सरकार कल्याण–संबंधी उपबंधों के अनुपालन से छूट तथा कल्याणार्थ व्यवस्थाओं के प्रबंध में कर्मकारों के प्रतिनिधित्व से संबद्ध नियम बना सकती है। (धारा 50)

10.3.4 वयस्क कर्मकारों के काम के घंटे

1. **वयस्क कर्मकारों के दैनिक काम के घंटे** – किसी भी कारखान में वयस्क कर्मकारों से 9 घंटे दैनिक से अधिक न तो काम लिया जाएगा और न ही इसके लिए उन्हें अनुमति दी जाएगी। (धारा 54)

2. **वयस्क कर्मकारों के साप्ताहिक काम के घंटे** – किसी भी कारखाने में वयस्क कर्मकारों से सप्ताह में 48 घंटे में अधिक न तो कम लिया जाएगा और न ही इसके लिए उन्हें अनुमति दी जाएगी। (धारा 51)
3. **विश्रमा–अंतराल** – किसी भी कारखाने में वयस्क कर्मकारों के प्रतिदिन के काम की कालावधि इस प्रकार नियत की जाएगी कि कोई भी कालावधि पांच घंटों से अधिक की नही हो। किसी भी दिन कोई भी कर्मकार पांच घंटे से अधिक समय तक काम तबतक नहीं कर सकता, जबतक उसे कम–से–कम आधे घंटे का विश्राम अंतराल नहीं मिल चुका हो। (धारा 55)
4. **विस्तृति** – कारखानों में किसी वयस्क कर्मकार के काम की कालावधि इस प्रकार व्यवस्थित की जाएगी कि उसके विश्राम के लिए अंतरालों सहित विस्तृति किसी भी दिन 10 1/2 घंटे से अधिक की नहीं हो। (धारा 56)
5. **साप्ताहिक अवकाश दिन** – अधिनियम के अधीन कारखानों के कर्मकारों को सप्ताह में कम–से–कम एक दिन का अवकाश दिवस देना आवश्यक है। (धारा 52)

अगर अधिनियम के अधीन बनाए गए नियम या दिए गए आदेश के अंतर्गत दी गई छूट के परिणामस्वरूप कोई कर्मकार अधिकृत साप्ताहिक अवकाश–दिवसों से वंचित हो जाता है, तो उसे उस महीने में या उसके ठीक बाद के दो महीनों के अन्दर प्रतिकारात्मक अवकाश दिवस उपलब्ध कराना आवश्यक है। (धारा 52–53)

जहाँ कारखाने में कोई कर्मकार ऐसी पारी में काम करता है, जिसका विस्तार मध्यरात्रि के बाद तक होता है, वहाँ उसके लिए साप्ताहिक अवकाश दिवस की कालावधि पारी की समाप्ति से लगातार 24 घंटों की होगी। (धारा 57)

6. **दैनिक और साप्ताहिक काय्र के घंटों, विश्राम–अंतराल, विस्तृति आवकाश–दिवस से संबद्ध उपबंधों से छूट** – कुछ स्थितियों में दैनिक कार्य के घंटों, विश्राम अंतराल तथा विस्तृति से संबंद्ध उपबंधों से छूट दी जा सकती है। इनके अतिरिक्त, अधिनियम में कुछ विशेष प्रकार के कर्मकारों, कार्यो तथा स्थितियों का उल्लेख किया गया है, जिनके संबंध में काम के घंटों से छूट देने के लिए राज्य सरकार नियम बना सकती है।
1. **साप्ताहिक कार्य के घंटों तथा साप्ताहिक अवकाश–दिवस–संबंधी उपबंधों से अतिरिक्त छूट** – **(क)** ऐसे कर्मकार, जो प्राथमिक आवश्यकता की उन चीजों के निर्माण और प्रदाय में लगे हों, जिनका हर दिन निर्माण या प्रदाय आवश्यक हो तथा **(ख)** नियत मौसमों के अतिरिक्त नहीं चलाई जा सकने वाली विनिर्माण प्रक्रियाओं में लगे कर्मकार;

2. **साप्ताहिक अवकाश तथा विश्राम–अंतराल–संबंधी उपबंधों से अतिरिक्त छूट** – ऐसी विनिर्माण प्रक्रिया में लगे कर्मकार जो प्राकृतिक शक्तियों की अनियमित क्रिया पर निर्भर समयों के सिवा नहीं चलाई जा सकती;
3. **साप्ताहिक कार्य के घंटों, साप्ताहिक अवकाश–दिवस तथा दैनिक कार्य के घंटों से संबद्ध उपबंधों से अतिरिक्त छूट** – इंजन कक्षों या बॉयलर–घरों या शक्ति–संयंत्र या संचारण–मशीनरी के काम में लगे कर्मकार; तथा
4. **साप्ताहिक कार्य के घंटों, दैनिक कार्य के घंटों तथा विस्तृति सं संबद्ध उपबंधों से अतिरिक्त छूट** – समाचारपत्रों के मुद्रण में लगे कर्मकार, जिनका काम मशीनरी के ठप्प हो जाने के कारण रुक जाता है।
7. **स्त्रियों के कार्य के घंटों से संबद्ध अतिरिक्त प्रतिबंध** – स्त्री कर्मकारों से कार्य के विहित अधिकतम दैनिक घंटों, अर्थात् 9 घंटे दैनिक से अधिक की छूट नही दी जा सकती। स्त्री कर्मकारों से 7 बजे प्रातः और 7 बजे संध्या के बीच के घंटों के अतिरिक्त किसी अन्य समय में काम नहीं लिया जाएगा और न ही इसके लिए उन्हें अनुमति दी जाएगी। (धारा 66)
8. **अतिकाल के लिए अतिरिक्त मजदूरी** – अगर कारखाने में नियोजित कोई कर्मकार दैनिक 9 घंटे या साप्ताहिक 48 घंटे से अधिक अवधि तक काम करता है, तो उसे अतिकाल काम के लिए उसकी मजदूरी की सामान्य दर से दुगुनी दर पर मजदूरी दी जाएगी। (धारा 59)
9. **परस्परव्यापी पारियाँ** – किसी कारखाने में पारियों की इस प्रकार की व्यवस्था से काम नहीं लिया जाएगा कि एक ही समय, एक ही प्रकार के काम पर कर्मकारों की एक से अधिक टोली लगी हो। (धारा 58)
10. **वयस्कों के लिए काम की कालावधि की सूचना** – प्रत्येक कारखाने में वयस्कों के प्रतिदिन के काम करने की कालावधि की सूचना प्रदर्शित करना आवश्यक है। यह कालावधि इस प्रकार पहले से ही नियत रहेगी कि अधिनियम के दैनिक एवं साप्ताहिक कार्य के घंटों, साप्ताहिक अवकाश–दिवस, विश्राम–अंतराल, विस्तृति तथा परस्परव्यापी पारियों से संबद्ध प्रावधानों का उल्लंघन नही हो। कारखानों में इन्हीं कालावधियों के दौरान काम होगा। इस सूचना में पारियों में काम के लिए कर्मकारों के समूहों, अन्य प्रकार के काम के लिए समूहों, टोलियों आदि का भी उल्लेख रहेगा। (धारा 61, 108)
11. **वयस्क कर्मकारों का रजिस्टर** – प्रत्येक कारखाने में प्रबंधक के लिए वयस्क कर्मकारों का रजिस्टर रखना आवश्यक है।

10.3.5 अल्पवय व्यक्तियों का नियोजन

1. **बालकों के नियोजन का प्रतिबंध** – किसी भी बालक को जिसने अपना चौदहवाँ वर्ष पूरा नहीं किया हों, किसी कारखाने में काम के लिए नियोजित नही किया जाएगा और न ही इसके लिए उसे अनुमति दी जाएगी। (धारा 67)
2. **अल्पवय व्यक्तियों का नियोजन और योग्यता प्रमाणपत्र** – ऐसे बालकों को, जिन्होंने अपना चौदहवीं वर्ष पूरा कर लिया हो या कुमारी (15 वर्ष से अधिक और 18 वर्ष से कम उम्र के व्यक्ति) को कारखाने में तभी नियोजित किया जा सकता है, जब उनके संबंध में प्रबंधक के पास प्रमाणकर्ता सर्जन द्वारा निर्गत योग्यता–प्रमाणपत्र हो तथा ऐसे व्यक्ति कार्य के समय इस आशय का टोकन रखते हो। प्रमाणकर्ता सर्जन निम्नांकित प्रमाणपत्र दे सकता हैं –
    a. **बालक के रूप में कारखाने में काम करने का योग्यता प्रमाणपत्र** – अगर परीक्षा के बाद प्रमाणकर्ता सर्जन पाता है कि अल्पवय व्यक्ति चौदह वर्ष का हो चुका है और उसने विहित शारीरिक मान प्राप्त कर लिए है, तो उसे बालक के रूप में कारखाने में काम करने के लिए योग्यता प्रमाणपत्र दे सकता है।
    b. **वयस्क के रूप में कारखाने में काम करने का योग्यता प्रमाणपत्र** – अगर परीक्षा के बाद प्रमाणकर्ता सर्जन पाता है कि उस अल्पवय व्यक्ति ने अपना पंद्रहवां वर्ष पूरा कर लिया है और वह कारखाने में पूरे दिन का काम करने में समर्थ हैं, तो वह उसे वयस्क के रूप में काम करने के लिए योग्यता प्रमाणपत्र दे सकता है।
3. **बालकों के लिए काम के घंटे** – किसी भी कारखाने में बालकों से दैनिक 4 घंटों से अधिक काम नहीं लिया जा सकता। उनसे रात के दौरान (10 बजे रात से 6 बजे सुबह तक की अवधि) भी काम नहीं लिया जा सकता। बालिकाओं से केवल 8 बजे दिन से 7 बजे सायं तक के बीच ही काम लिया जा सकता है। कारखानों में नियोजित सभी बालकों के काम करने की कालावधि दो पारियों तक ही सीमित होगी। इन पारियों में प्रत्येक की विस्तृति पांच घंटों से अधिक नहीं होगी। प्रत्येक बालक को केवल एक ही टोली में नियोजित किया जाएगा। (धारा 71)
4. **बालकों के काम की कालावधि की सूचना** – बालकों के लिए काम की कालावधि की विहित सूचनाएं देना तथा उन्हें स्पष्ट रूप में प्रदर्शित करना आवश्यक है। कालावधि अधिनियम के उपबंधों के अनुसार ही बनाई जाएगी। (धारा 72, 74)
5. **बालक कर्मकारों का रजिस्टर** – प्रत्येक कारखाने में, जिसमें बालक नियोजित है, प्रबंधक के लिए बालक कर्मकारों का रजिस्टर रखना आवश्यक है। इस रजिस्टर में निम्नांकित बातों का उल्लेख रहेगा –
    a. कारखाने में प्रत्येक बालक कर्मकार का नाम,

b. उसके कार्य की प्रकृति
c. उस समूह का नाम, जिसमें उसे सम्मिलित किया गया है,
d. जहां काम पारियों में होता है, उस टोली का नाम जिसमें उसे रखा गया है तथा
e. उसके योग्यता प्रमाणपत्र की संख्या। ऐसे प्रत्येक रजिस्टर को काम के दौरान सभी समयों में कारखाना निरीक्षक के लिए उपलभ्य होना चाहिए।

किसी बालक कर्मकार को कारखाना में तबतक नियोजित नहीं किया जा सकता, जबतक उसका नाम रजिस्टर में प्रविष्ट नहीं कर लिया गया हो। रजिस्टर के प्रारूप तथा उसके रखे जाने के तरीके आदि के संबंध में राज्य सरकार नियम बना सकती है। (धारा 73, 74)

कारखाना अधिनियम के अधीन बालकों के नियोजन से संबंद्ध उपबंध बालश्रम (प्रतिषेध एवं विनियम) अधिनियम, 1986 के उपबंधों के अतिरिक्त होगें। (धारा 77)

10.4 खान अधिनियम, 1952 के महत्वपूर्ण उपबन्ध

खानों में श्रमिक संबंधी विधान को कारखानों के श्रमिक सम्बन्धी विधान के समान करने के लिये भारत सरकार ने 1952 में खान अधिनियम पारित किया। 1959 में तथा 1983 में इसमें संशोधन किया गया। यह अधिनियम पिछले सभी ऐसे अधिनियमों को निरस्त करके उनका समन्वय करता है जो खानों में सुरक्षा तथा श्रमिकों के विनियमन से सम्बन्धित थे। यह अधिनियम बातों के अतिरिक्त कम कार्य के घंटे, समयोपरि तथा वेतन सहित छुट्टियों की भी व्यवस्था करता है तथा सुरक्षा व स्वास्थ्य संबंधी उपबन्धों को दृढ़ बनाता है। अधिनियम के मुख्य उपबन्ध निम्नलिखित है –

क) यह अधिनियम उन समस्त व्यक्तियों पर लागू होता है जो खान के कार्यो में या उससे सम्बन्धित किसी भी काम में लगे हुए है। जम्मू और कश्मीर को छोड़कर यह समस्त भारत पर लागू होता है। खानों के अन्तर्गत खानों से सम्बन्धित अन्य कार्य तथा स्थान जहां भी श्रमिक कार्य करते हैं सम्मिलित कर लिये गये है। खान की परिभाषा अतिरिक्त विस्तृत कर दी गई है और उसमें निम्नलिखित सम्मलित कर दिये गये हैं – खानों के रास्ते, समतल क्षेत्र, मशीन, ट्रामगाड़ियां, कार्यशालायें, बिजली घर, ट्रामगाड़ियों के ठहरने के स्थान और कोयला ढोने के स्थान।

ख) खान के ऊपर तथा खान के भीतर कार्य करने वाले समस्त वयस्क श्रमिकों के कार्य घण्टे घटाकर प्रति सप्ताह 48 कर दिये गये हैं तथा अधिनियम में यह भी व्यवस्था है कि खान के अन्दर प्रतिदिन 8 घण्टे से अधिक एवं खान के ऊपर प्रतिदिन 9 घण्टे से अधिक किसी श्रमिक को कार्य करने की अनुमति नहीं होगी। काम करने के प्रत्येक पांच घण्टों के पश्चात् आधे घण्टे का एक विश्राम मध्यान्तर देना होगा और कोई भी श्रमिक सप्ताह में 6 दिन से अधिक कार्य नहीं करेगा। 1923 के अधिनियम ने समयोपरि देने की दर निश्चित नहीं की थी किन्तु 1942 के अधिनियम में यह व्यवस्था थी कि खान के

ऊपर कार्य करने वाले श्रमिकों को मजदूरी की साधारण दरों से 1 गुनी दरों पर तथा खान के भीतर कार्य करने वाले श्रमिकों की दुगुनी दर पर समयोपरि दी जायेगी। सन् 1949 से दोनों ही प्रकार के श्रमिकों के लिए समयोपरि सहित एक दिन में 10 घण्टों से अधिक कार्य नहीं कर सकता। कार्य का अधिकतम समय–विस्तार खान के ऊपर कार्य करने वाले श्रमिकों के लिए 12 घण्टे तथा खान के भीतर कार्य करने वालों के लिए 9 घण्टे निश्चित किया गया है।

ग) अधिनियम के अन्तर्गत खान के अन्दर रोजगार में लगे व्यक्तियों की आयु–सीमा बढ़ाकर 17 से 18 कर दी गई है, तथा किशोर (अर्थात् 15 से 18 वर्ष की आयु के बीच के व्यक्ति) श्रमिकों के लिए प्रतिदिन 4 घण्टे कार्य की सीमा निर्धारित की गई है।

घ) खान के अन्दर स्त्रियों को रोजगार पर लगाने पर प्रतिबन्ध इस अधिनियम में भी है, तथा इस बात की व्यवस्था है कि खान के ऊपर किसी भी स्त्री को प्रातः 6 बजे से सन्ध्या 7 बजे के अतिरिक्त कार्य करने की अनुमति नहीं दी जायेगी। राज्य सरकारें इन सीमाओं को कम या अधिक कर सकती है, किन्तु 10 बजे रात्रि से 8 बजे प्रातः के बीच कार्य करने की अनुमति नहीं दे सकतीं।

ड़) अधिनियम मे एक साप्ताहिक विश्राम दिवस के अतिरिक्त श्रमिकों को वेतन सहित छुट्टियों तथा एवजी छुट्टियों को प्रदान करने की भी व्यवस्था है। श्रमिक 12 माह की निरन्तर नौकरी पूर्ण करने के पश्चात् निम्न दरों पर छुट्टी ले सकते हैं – (1) मासिक वेतन पाने वाले श्रमिक 14 दिन, (2) साप्ताहिक मजदूरी पाने वाले श्रमिक तथा सामान चढ़ाने वाले या खान के भीतर डैली मजदूरी करने वाले 7 दिन। मासिक मजदूरी पाने वाले श्रमिक 38 दिन तक छुट्टियां एकत्रित कर सकते हैं।

च) 1948 के फैक्ट्री अधिनियम के आधार पर इस अधिनियम में स्वास्थ्य, सुरक्षा तथा कल्याण सम्बन्धी पर्याप्त उपबन्ध भी बनाये गये है। कल्याण अधिकारी की नियुक्ति, प्राथमिक उपचार का सामान, शिशुगृह, विश्रामगृह, खान के ऊपर स्नानघर, बचाव करने वाले केन्द्रिय स्थान, कैन्टीन, एम्बुलेंस तथा रोगी को ले जाने वाले स्ट्रेचर इत्यादि की अधिनियम में व्यवस्था है।

छ) अधिनियम के उपबन्धों का उल्लघन करने वालों को समुचित दण्ड देने की भी व्यवस्था है, यह दण्ड या जुर्माना या दोनों रूप में दिया जा सकता है।

ज) प्रशासन हेतु अधिनियम में खानों के मुख्य निरीक्षकों की व्यवस्था है, जिसकी सहायता खानों के निरीक्षक तथा जिलाधीश करेगें। निरीक्षक ऐसे कार्यो को करने की आज्ञा दे सकते हैं जो श्रमिकों की सुरक्षा के लिए आवश्यक हो।

10.5 बागान श्रमिक अधिनियम, 1951 के महत्वपूर्ण उपबन्ध

इस अधिनियम का उद्देश्य बागान के श्रमिकों को कल्याण सुविधा प्रदान करना तथा उनकी कार्य की दशा को नियंत्रित करना है। अधिनियम के मुख्य उपबंध निम्नलिखित है –

1. यह अधिनियम उन समस्त चाय, कॉफी, रबर तथा सिनकोना बागान में लागू होता है। जिनका 25 एकड़ या अधिक क्षेत्र हो तथा जो 30 या व्यक्तियों को रोजगार में लगाये हुये हो, केन्द्रीय सरकार की अनुमति से किसी भी राज्य सरकार द्वारा यह अधिनियम अन्य बागान पर लागू किया जा सकता है। केरल, तमिलनाडु तथा कर्नाटक में इलाइची बागानों को भी अधिनियम की परिधि में रखा गया है। यह अधिनियम जम्मू कश्मीर के अतिरिक्त सम्पूर्ण भारत पर लागू होता है।
2. यह अधिनियम बनाने के लिए निरीक्षक कर्मचारी वर्ग की राज्य सरकार द्वारा नियुक्ति की व्यवस्था करता है। इसके अन्तर्गत बागान का एक मुख्य निरीक्षक तथा उसके अधीन अन्य निरीक्षक नियुक्त किये जाते हैं।
3. अधिनियम के अन्तर्गत मालिकों से यह कहा गया है कि वे पीने के स्वच्छ पानी की व्यवस्था करें, स्त्री तथा पुरूषों के लिये पर्याप्त मात्रा में शौचालयों एवं मूत्रालयों की व्यवस्था करें, तथा उचित डॉक्टरी सुविधायें भी दें। यदि कोई मालिक इन सुविधाओं को प्रदान करने में असफल रहे तो मुख्य निरीक्षक इन सुविधाओं को प्रदान कर सकता है तथा मालिकों से इनका व्यय वसूल कर सकता है।
4. बागान श्रमिकों के कल्याण के लिये भी अधिनियम में उपबन्ध हैं, जैसे – प्रत्येक उस बागान में जिसमें 150 या अधिक श्रमिक रोजगार में लगे हों, एक कैन्टीन स्थापित करने की व्यवस्था है तथा उस बागान में, जहाँ 50 या अधिक स्त्री श्रमिक रोजगार में लगी हैं, वहां विशिष्ट प्रकार के शिशु गृहों के बनाने की व्यवस्था है। श्रमिक तथा उनके बालकों के लिए मनोरंजन तथा शिक्षा की सुविधायें प्रदान करने की व्यवस्था भी है। राज्य सरकारों द्वारा निर्धारित किये गये नियमों के अनुसार बीमारी व मातृत्व–कालीन–लाभ भत्ते भी दिये जायेंगे। प्रत्येक श्रमिक तथा उसके परिवार को आवश्यक आवास सुविधा देने का उत्तरदायित्व भी मालिक का है तथा राज्य सरकारें मकानों की विशेषतायें एवं स्तर तथा किराये के लिये नियम बना सकती है। इसके अतिरिक्त, राज्य सरकारें मालिकों द्वारा श्रमिकों के लिये पीने के पानी की सुविधा शौचालय, मूत्रालय तथा छतरी, कम्बल, बरसाती आदि जैसी वस्तुयें प्रदान करने के लिये नियम बना सकती है, जिससे श्रमिकों का वर्षा तथा शीत से बचाव हो सके। प्रत्येक उस बागान में कल्याण अधिकारी भी नियुक्त करने की व्यवस्था है जहाँ 300 या इससे अधिक श्रमिक साधारणतया रोजगार में लगे हों।
5. अधिनियम वयस्क श्रमिकों के लिये प्रति सप्ताह 54 घण्टे तथा किशोरों (15 से 18 वर्ष की आयु के श्रमिक) एवं बालकों (12 से 15 वर्ष की आयु के श्रमिक) के लिये प्रति सप्ताह 40 घण्टे कार्य समय निर्धारित करता है। अधिनियम कार्य के

दैनिक घण्टे तो निर्धारित नहीं करता किन्तु यह निर्धारित करता है कि कोई भी श्रमिक आधे घण्टे के विश्राम मध्यान्तर के बिना 8 घण्टे से अधिक कार्य नहीं करेगा।

6. प्रत्येक श्रमिक को सवेतन अवकाश निम्नलिखित दर पर दिये जाने की व्यवस्था है – (क) यदि श्रमिक वयस्क है तो कार्य के प्रत्येक 20 दिनों पर एक दिन का अवकाश, (ख) यदि किशोर है तो कार्य के प्रत्येक 15 दिनों पर दिन का अवकाश। छुट्टियाँ 30 दिन तक एकत्रित की जा सकती है।
7. अधिनियम के उपबन्धों का उल्लंघन करने पर अथवा कार्य–योग्यता का झूठा प्रमाण–पत्र देने पर भी दण्ड निर्धारित कर दिये गये है।

10.6 मोटर यातायात श्रमिक अधिनियम, 1961 के महत्वपूर्ण उपबन्ध

इस विधान में मोटर यातायात संस्थानों में श्रमिकों के लिये कार्य के घण्टे, श्रम समय–विस्तार, समयोपरि, सवेतन अवकाश, कल्याण सुविधाओं आदि पर नियन्त्रण करने की व्यवस्था है। यह अधिनियम उन समस्त मोटर यातायात संस्थानों में लागू होता है जहाँ पांच या उससे अधिक श्रमिक कार्य करते हैं। राज्य सरकारें उनको ऐसे मोटर यातायात संस्थानों पर लागू कर सकती है जहां पांच से कम व्यक्ति कार्य करते हैं। 15 वर्ष से कम आयु के बालकों को रोजगार पर लगाना निषेध कर दिया गया है। किशोर भी तभी कार्य कर सकते हैं, जब उनको कार्य करने की समर्थता का प्रमाण–पत्र मिल जाये। वयस्क श्रमिकों के कार्य के घण्टे प्रतिदिन 8 तथा प्रति सप्ताह 48 निर्धारित किये गये है और ये कार्य घण्टे एक दिन में दो से अधिक टुकड़ों में नहीं बांटे जा सकते। लम्बे सफर पर तथा विशेष अवसरों पर कार्य के घण्टे प्रतिदिन 10 तथा प्रति सप्ताह 54 निश्चित किये गये। मोटर में खराबी हो जाने आदि पर काम के घण्टे कुछ अधिक हो सकते हैं। किशोर के लिये कार्य के घण्टे प्रतिदिन 6 निर्धारित किये गये है और उनको 10 बजे रात्रि से 6 बजे प्रातः तक कार्य पर नहीं लगाया जा सकता। श्रम समय–विस्तार वयस्कों के लिये प्रतिदिन 12 घण्टे व किशारों के लिये प्रतिदिन 9 घण्टे निर्धारित किया गया है। समयोपरि कार्य के लिये दोनों को ही दुगुनी दर से मजदूरी देने की व्यवस्था है। सप्ताह में एक विश्राम दिन दिया जाना अनिवार्य है। सवेतन छुट्टियों की व्यवस्था इस प्रकार है – 1 कलैण्डर वर्ष में 240 दिनों की उपस्थिति के पश्चात् वयस्कों के लिये 20 दिन के कार्य पर 1 दिन की छुट्टी और किशोरों के लिये 15 दिन के कार्य पर एक दिन की छुट्टी। जिस संस्थान में 100 या उससे अधिक श्रमिक कार्य करते हैं वहां कैन्टीन की व्यवस्था की जायेगी। मालिकों द्वारा अच्छे प्रकार के विश्राम स्थल, वर्दी, बरसाती, प्राथमिक उपचार की सुविधायें, कपड़े धोने के लिये भत्ता आदि का प्रबन्ध करने के लिये भी उपबन्ध है। 1936 का मजदूरी अदायगी अधिनियम मोटर यातायात श्रमिकों पर भी लागू होगा। अधिनियम के उपबन्धों का उल्लंघन करने पर दण्ड की व्यवस्था की गई है। अधिनियम के प्रशासन का उत्तरदायित्व राज्य सरकारों पर डाला गया है।

10.7 दुकान और संस्थान अधिनियम के महत्वपूर्ण उपबन्ध

दूकान और प्रतिष्ठान अधिनियम, 1947

1. कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएं

1. **बालक** – 'बालक' ऐसा व्यक्ति है जिसने अपनी उम्र का चौदहवां वर्ष पूरा नहीं किया हो। [धारा 2(1 A)]
2. **अल्पवय व्यक्ति** – 'अल्पवय व्यक्ति' ऐसा व्यक्ति है जिसने अपनी उम्र का चौदहवां वर्ष पूरा किया हो लेकिन अठारहवां वर्ष पूरा नहीं किया हो। [धारा 2(22)]
3. **दूकान** – 'दूकान' का तात्पर्य ऐसे परिसर से है जहाँ माल का खुदरा या थोक बिक्री होती है या जहाँ ग्राहकों को सेवा दी जाती है और इसके अंतर्गत बिक्री या सेवा के संबंध में प्रयुक्त उसी परिसर में या दूसरी जगह स्थित कार्यालय, संग्रह–कक्ष, गोदाम, भंडार और कार्यस्थल शामिल है, लेकिन इसके अंतर्गत रेस्तराँ, आवासीय होटल, भोजनालय, थियेटर या लोक–मनोरंजन या आमोद–प्रमोद के दूसरे स्थान शामिल नहीं है। [धारा 2(16)]
4. **प्रतिष्ठान** – 'प्रतिष्ठान' का तात्पर्य ऐसे प्रतिष्ठान या स्थापन से है जो कोई कामकाज, व्यापार या धंधा या उससे संबद्ध प्रासगिक या सहायक कोई कार्य करता है। इसके अंतर्गत 1. प्रतिष्ठान से संबद्ध प्रशासनिक या लिपिकीय सेवा, 2. दूकान, उपाहार–गृह, आवासीय होटल, भोजनालय, थियेटर या लोक–मनोरंजन का कोई स्थान, तथा 3. राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित अन्य प्रतिष्ठान शामिल है, लेकिन 'मोटर परिवहन उपक्रम' शामिल नही है। [धारा 2(6)]
5. कर्मचारी– 'कर्मचारी' का तात्पर्य किसी प्रतिष्ठान में या उससे संबद्ध वेतन, पुरस्कार या कमीशन–सहित भाड़े या मजदूरी के लिए पूर्णतः या अंशतः नियोजित है तथा इसके अंतर्गत शिक्षु सम्मिलित है, लेकिन नियोजक के परिवार के सदस्य सम्मिलित नहीं है। 'कर्मचारी' के अंतर्गत कारखाना में नियुक्त ऐसा व्यक्ति भी सम्मिलित है जो कारखाना अधिनियम, 1948 के अधीन कामगार नहीं है। इस अधिनियम के अंतर्गत कार्यवाही करने के लिए 'कर्मचारी' की परिभाषा के अंतर्गत ऐसा भी कर्मचारी सम्मिलित है जिसे किसी कारणवश पदच्युत, सेवोन्मुक्त या जिसकी छंटनी कर दी गई हो। [धारा 2(4)]

2. प्रतिष्ठानों का पंजीकरण

राज्य सरकार प्रतिष्ठानों के पंजीकरण या नवीकरण को अनिवार्य करने के लिए नियम बना सकती है। ऐसे नियम में पंजीकरण या नवीकरण के तरीकों और देय फीस आदि विहित किए जा सकते हैं। (धारा 6)

3. प्रतिष्ठानों को खोलने और बंद करने का समय

किसी भी प्रतिष्ठान को 9 बजे सुबह या उसक बाद खोला जाएगा और 9 बजे रात्रि या उसके पहले बंद किया जाएगा। लेकिन, प्रतिष्ठान को बंद करने के निर्धारित समय यदि किसी ग्राहक को वहाँ सेवा उपलब्ध कराई जा रही हो या सेवा उपलब्ध कराने का इंतजार हो रहा हो, तो बंद होने के बाद 15 मिनटों तक उसे सेवा उपलब्ध कराई जा सकती है।

राज्य सरकार अधिसूचना जारी कर विभिन्न क्षेत्रों या वर्ष की विभिन्न अवधियों के लिए प्रतिष्ठान को खोलने और बंद करने के समय में परिवर्तन कर सकती है। जब किसी प्रतिष्ठान में दो या अधिक धंधे या कामकाज किए जाते हों, जिनमें से कोई एकमात्र धंधा या कामकाज हो तो उसके संचालन के संबंध में प्रतिष्ठान को खोलने और बंद करने के समय से संबद्ध उपर्युक्त उपबंध लागू नहीं होगें।

कोई भी व्यक्ति किसी भी स्थान पर, चाहे वह दूकान हो या नहीं, प्रतिष्ठान के खुलने के समय के पहले और बंद होने के समय के बाद सामान को बेचने का काम नहीं कर सकता। लेकिन, फुटपाथ या बाजार के मार्गो में फेरी वाले 11 बजे रात्रि तक अपना धंधा या कामकाज चला सकते हैं। समाचारपत्रों की फेरी पर ये उपबंध लागू नहीं होंगे। (धारा 7–8)

4. कार्य के घंटे, विश्राम–अंतराल, विस्तृति, साप्ताहिक अवकाश–दिन, आदि

1. **दैनिक और साप्ताहिक कार्य के घंटे–** किसी भी प्रतिष्ठान में किसी कर्मचारी से दैनिक 9 घंटे तथा साप्ताहिक 48 घंटे से अधिक समय तक काम नहीं लिया जाएगा और न ही उसे इसकी अनुमति दी जाएगी। कार्य के इन घंटों के परिकलन में विश्राम या भोजन के लिए अनुमति अंतराल को, जो कुल मिलाकर न्यूनतम एक घंटा दैनिक होगा, शामिल नहीं किया जाएगा। स्टॉक की जाँच, या लेखा तैयार करने या अन्य विहित प्रयोजनों के लिए वयस्क कर्मचारियों के कार्य के इन अधिकतम घंटों से अधिक समय के लिए काम लिया जा सकता है, लेकिन अतिकाल के साथ कार्य के घंटे दैनिक 10 और साप्ताहिक 54 से अधिक नहीं हो सकते। किसी वर्ष में अतिकाल कार्य के कुल घंटों का योग 150 घंटे से अधिक नहीं हो सकता। अतिकाल के लिए मजदूरी की दर सामान्य मजदूरी–दर से दुगुनी होगी। किसी कर्मचारी से अतिकाल कार्य लेने के लिए मुख्य निरीक्षी पदाधिकारी या राज्य सरकार द्वारा अधिकृत अन्य अधिकारी को विहित तरीके से कम–से–कम तीन दिनों की पूर्व सूचना देना आवश्यक है। (धारा 9)
2. **विश्राम–अंतराल–** किसी कर्मचारी से किसी भी दिन कम–से–कम आधे घंटे के विश्राम–अंतराल के बिना लगातार पांच घंटे से अधिक समय के लिए न तो काम लिया जाएगा और न ही उन्हें इसके लिए अनुमति दी जाएगी। ऐसा विश्राम–अंतराल किसी भी दिन पूरी कार्यावधि के दौरान एक से अधिक नहीं होगा। (धारा 10)

3. **विस्तृति–** किसी भी प्रतिष्ठान में कर्मचारी की कार्यावधि और विश्राम–अंतराल को इस तरह व्यवस्थित किया जाएगा कि किसी भी दिन कुल मिलाकर विस्तृति 1. बालकों के लिए 8 घंटे, 2. अल्पवयों के लिए 10 घंटे तथा 3. वयस्कों के लिए 12 घंटे से अधिक नहीं हो। (धारा 11)
4. **साप्ताहिक अवकाश–दिन–** प्रत्येक प्रतिष्ठान सप्ताह में एक पूरा दिन बंद रहेगा, लेकिन अगर यह वित्तीय वर्ष का पहला दिन है तो नियोजक प्रतिष्ठान को साप्ताहिक अवकाश–दिन भी खुला रख सकता है। नियोजक के लिए साप्ताहिक अवकाश–दिन की सूचना देवनागरी लिपिवाली हिन्दी और आवश्यकतानुसार अधिकांश कर्मचारियों द्वारा समझी जाने वाली भाषा में सुस्पष्ट और सुपाठ्य रूप में प्रतिष्ठान के मुख्य द्वारा पर या उसके समीप सुविधाजनक स्थल पर प्रदर्शित करना आवश्यकत है। विनिर्दिष्ट अवकाश–दिन को तीन महीने में एक बार से परिवर्तित नहीं किया जा सकता, लेकिन इसके लिए निरीक्षी पदाधिकारी की पूर्वानुमति आवश्यक है।

मुख्य निरीक्षी पदाधिकारी लोकहित में किसी विशेष क्षेत्र में सभी या किसी वर्ग के प्रतिष्ठानों के लिए विशेष साप्ताहिक अवकाश–दिन को अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट कर सकता है। ऐसी स्थिति में यही विनिर्दिष्ट दिन उस क्षेत्र में साप्ताहिक अवकाश दिन समझा जाएगा।

प्रतिष्ठान के प्रत्येक कर्मचारी को हर सप्ताह एक पूरे दिन का अवकाश दिया जाएगा, लेकिन अगर सप्ताह में कर्मचारी के नियोजन की कुल अवधि अधिकृत छुट्टी के दिन के साथ 6 दिन से कम है या प्रतिष्ठान की साप्ताहिक बंदी के दिन उससे काम नहीं लिया जाता हो, तो वह साप्ताहिक अवकाश–दिन का हकदार नहीं होगा। प्रतिष्ठान की बंदी या साप्ताहिक अवकाश–दिन के लिए कर्मचारी की मजदूरी से कटौती नहीं की जा सकती। (धारा 12)

5. अन्य अवकाश–दिन – 1. प्रतिष्ठान के प्रत्येक कर्मचारी को प्रत्येक वर्ष स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस और महात्मा गाँधी के जन्म–दिवस पर पूरे वेतन पर अवकाश दिया जाएगा। 2. इसके अतिरिक्त, प्रत्येक प्रतिष्ठान–कर्मचारी राज्य सरकार द्वारा समय–समय घोषित त्यौहारों में प्रत्येक वर्ष पूरे वेतन सहित पांच त्यौहार दिनों के लिए अवकाश का हकदार होगा। [धारा (12A)]

5. बालकों और अल्पवयों का नियोजन

1. बालकों के नियोजन का प्रतिषेध– बारह वर्ष से कम उम्र के किसी भी बालक से किसी भी प्रतिष्ठान में कर्मचारी के रूप में न तो काम लिया जाएगा और न ही उसे इसके लिए अनुमति दी जाएगी। (धारा 13)

2. रात्रिकार्य – अधिनियम के दायरे में आने वाले प्रतिष्ठानों में बालकों, अल्पवयों या महिलाओं से प्रातः 6 बजे के पहले या रात्रि 10 बजे के बाद कर्मचारी के रूप में या अन्यथा काम नहीं लिया जाएगा। (धारा 14)

3. बालकों और अल्पवयों के दैनिक और साप्ताहिक कार्य के घंटे – अधिनियम के दायरे में आने वाले प्रतिष्ठानों में किसी भी बालक से 5 घंटे दैनिक या 30 घंटे साप्ताहिक से अधिक समय तक काम नहीं लिया जाएगा। अल्पवयों के लिए कार्य के अधिकतम घंटे 7 दैनिक और 42 साप्ताहिक होंगे। किसी भी बालक या अल्पवय व्यक्ति से विश्राम या भोजन के लिए कम–से–कम एक घंटा के अंतराल के बिना किसी भी दिन लगातार 4 घंटे से अधिक समय तक काम नहीं लिया जाएगा। किसी भी बालक से किसी प्रतिष्ठान में उस दिन काम नहीं लिया जाएगा जिस दिन वह दूसरे प्रतिष्ठान में पहले से ही काम कर रहा हो। (धारा 15)

6. छुट्टियाँ

1. सवेतन वार्षिक छुट्टी– किसी प्रतिष्ठान का प्रत्येक कर्मचारी जिसने किसी कैलेन्डर वर्ष (जनवरी से दिसम्बर) के दौरान उसमें 240 या उससे अधिक दिनों तक काम किया हो, और जो अवैध हड़ताल पर नहीं रहा हो, बाद के कैलेन्डर वर्ष के दौरान निम्नलिखित दर से मजदूरी सहित छुट्टी का हकदार होगा–

1. बालक के लिए– पूर्ववर्ती कैलेन्डर वर्ष के दौरान उसके द्वारा किए गए काम के प्रत्येक 15 दिनों के लिए एक दिन की मजदूरी की दर से;

2. अन्य व्यक्तियों के लिए – पूर्ववर्ती कैलेन्डर वर्ष के दौरान उसके द्वारा किए गए काम के प्रत्येक 10 दिनों के लिए एक दिन की मजदूरी की दर से।

उपर्युक्त 240 दिनों के परिकलन में 1. किसी समझौते, संविदा या स्थायी आदेश के अधीन अनुज्ञान जबरी छुट्टी की अवधि, 2. स्त्री कर्मचारियों के मामले में अधिकतम 12 सप्ताह की प्रसूति छुट्टी, और 3. छुट्टी उपयोग किए जाने वाले वर्ष के पूर्ववर्ती वर्ष में उपार्जित छुट्टी के दौरान या उसके दोनों सिराओं पर पड़ने वाले सभी अवकाश दिनों के अतिरिक्त होगी। अगर किसी कर्मचारी की नौकरी कैलेन्डर वर्ष के बीच में आरंभ होती है, तो वह उस वर्ष के अवशिष्ट भाग के दिनों की कुल संख्या के दो तिहाई के लिए काम करने पर संवेतन छुट्टी का हकदार होगा। अगर कोई कर्मचारी कम–से–कम 120 दिनों की अवधि के लिए नियुक्त रहा है, तो वह निर्धारित दर से संवेतन छुट्टी का हकदार होगा, यदि उसकी नियुक्ति के दिनों का अनुपात उस अनुपात से कम नहीं है जो 240 का 365 से है।

यदि कोई कर्मचारी किसी एक कैलेन्डर वर्ष में संपूर्ण अधिकृत छुट्टी में उसके द्वारा नहीं ली गई छुट्टी को जोड़ दिया जाएगा, लेकिन अगले वर्ष जोड़ी जाने वाली छुट्टी के कुल दिनों की संख्या 45 दिनों से अधिक नहीं हो सकती।

कर्मचारी के लिए संवेतन वार्षिक छुट्टी पर जाने के लिए कम–से–कम 15 दिन पहले आवेदन देना आवश्यक है। सामान्यतः बिना पर्याप्त लिखित कारण बताएं छुट्टी के आवेदन को अस्वीकृत नहीं किया जाएगा। अस्वीकृति से विक्षुब्ध कर्मचारी विहित प्राधिकारी के पास अपील कर सकता है। अगर छुट्टी लेखा में कर्मचारी की 45 दिनों की छुट्टी जमा है और छुट्टी के उसके आवेदन की अस्वीकृत किया गया है, तो वह अस्वीकृति वाली अवधि के लिए उतनी मजदूरी पाने का हकदार होगा, जितनी उसे छुट्टी पर नहीं जाने पर देय होती। यह राशि उस अवधि के लिए देय औसत मजदूरी के अतिरिक्त होगी।

अगर किसी कर्मचारी की नौकरी पूरी अधिकृत वार्षिक सवेतन छुट्टी लेने के पहले समाप्त कर दी जाती है या वह छुट्टी के आवेदन की अस्वीकृति के बाद नियोजन छोड़ देता है, तो नियोजक उसे अप्रयुक्त छुट्टी के लिए निर्धारित दर से भुगतान करेगा। सेवोन्मुक्ति या पदच्युति से पहले दी जाने वाली अपेक्षित नोटिस की अवधि की गणना में कर्मचारी की अप्रयुक्त छुट्टी को शामिल नहीं किया जाएगा। (धारा 16)

2. अन्य तरह की छुट्टियां – किसी प्रतिष्ठान का प्रत्येक कर्मचारी सवेतन वार्षिक छुट्टी के अतिरिक्त निम्नलिखित छुट्टियों का हकदार होता है –

1. किसी कैलेन्डर वर्ष में पूरे वेतन पर 12 दिन की आकस्मिक छुट्टी तथा

2. चिकित्सक के प्रमाणपत्र पर कैलेन्डर वर्ष में आधे वेतन पर 12 दिनों की चिकित्सा छुट्टी।

आकस्मिक या चिकित्सा छुट्टी का संचयन नही होता। अवधावक, रक्षक तथा प्रहरी 12 महीने या अधिक अवधि तक लगातार नियोजन में रहने के बाद सवेतन वार्षिक छुट्टी, आकस्मिक छुट्टी और चिकित्सा छुट्टी के अतिरिक्त अपनी लगातार सेवा के प्रत्येक पूरे किए गए 12 महीने के लिए पूरे वेतन पर 45 दिनों की छुट्टी के हकदार होते हैं। [धारा 16 A]

3. छुट्टी की अवधि के दौरान मजदूरी – स्वीकृत सवेतन वार्षिक छुट्टी के लिए मजदूरी कर्मचारी को उसकी छुट्टी के ठीक पूर्ववर्ती महीने के दौरान उसके द्वारा वास्तव में काम किए गए दिनों में कुल पूर्णकालिक उपार्जनों के दैनिक औसत के बराबर होगी। इन पूर्णकालिक उपार्जनों के परिकलन में अतिकाल अर्जनों तथा वार्षिक बोनस को सम्मिलित नहीं किया जाएगा, लेकिन उसमें उपस्थिति बोनस, दक्षता बोनस और अन्य प्रेरणा बोनस, तथा महंगाई भत्ता एवं रियायती दरों पर खाद्यान्नों और दूसरी सामग्रियों के विक्रय में होने वाले लाभ के नकद समतुल्य को शामिल किया जाएगा। उपार्जित छुट्टी पर जाने वाले कर्मचारी द्वारा माँग करने पर उसे छुट्टी की आधी अवधि के लिए अग्रिम मजदूरी तथा ऐसी छुट्टी के ठीक पूर्ववर्ती अवधि के लिए मजदूरी का भुगतान कर दिया जाएगा। (धरा 17)

4. छुट्टी से संबद्ध अन्य उपबंध– राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट प्रतिष्ठान या उसके वर्ग के लिए छुट्टी की कुल मात्रा और छुट्टी के दिनों की अधिकतम संचयन सीमा बढ़ा सकती है। जहाँ राज्य सरकार की राय में किसी प्रतिष्ठान में कर्मचारियों के लिए छुट्टी की सुविधा से संबद्ध नियम इस अधिनियम के उपबंधों से कम अनुकूल नहीं है, तो वह लिखित आदेश द्वारा इन उपबंधों से छूट दे सकती है। [धारा 18, 18 A]

7. मजदूरी का भुगतान

1. प्रत्येक नियोजक अपने कर्मचारियों को अधिनियम के अधीन भुगतान की जाने वाली सभी मजदूरी के लिए दायी होगा। (धारा 19)
2. नियोजक उस अवधि का निर्धारण करेगा जिसके संबंध में मजदूरी देय होगी, लेकिन कोई भी मजदूरी अवधि एक महीने से अधिक की नहीं होगी। (धारा 20)
3. प्रत्येक कर्मचारी की मजदूरी का भुगतान उस मजदूरी अवधि की समाप्ति के सातवें दिन के पहले कर देना होगा। अगर कोई कर्मचारी इस निर्धारित अवधि के अंतिम दिन तक अनुपस्थित हो तो काम पर उसकी पुनरूपस्थिति के दिन से तीन सप्ताह के पहले मजदूरी का भुगतान किया जाएगा। जहाँ नियोजक के आदेशानुसार किसी कर्मचारी का नियोजन समाप्त कर दिया जाता है, वहाँ नियोजन की समाप्ति के दिन से दूसरे कार्य–दिवस की समाप्ति के पहले उसकी अर्जित मजदूरी दे दी जाएगी। मजदूरी के सारे भुगतान कार्य–स्थल पर या उसके नजदीक तथा काम के समय के दौरान कार्य–दिवस में किए जाएगें । (धारा 23)
4. सारी मजदूरी का भुगतान प्रचलित सिक्कों या करेंसी नोटों या दोनों में किया जाएगा। (धाा 24)
5. नियोजक अपने कर्मचारी की मजदूरी से विहित कटौतियों को छोड़कर अन्य कोई कटौती नहीं करेगा। (धारा 25)
6. अधिनियम में मजदूरी से उत्पन्न विवादों के निपटारें और अभियुक्त को दंडित करने से संबद्ध उपबंध है। ऐसे मामलों में कर्मचारी, वकील, कर्मचारी का अधिकृत अभिकर्ता, पंजीकृत श्रमसंघ का कोई अधिकारी या निरीक्षी पदाधिकारी विहित प्राधिकारी के पास आवेदन दे सकता है। (धारा 28)

8. पदच्युति और सेवोन्मुक्ति

1. कोई भी नियोजक किसी भी कर्मचारी को, जो कम–से–कम 6 महीने तक लगातार नियोजन में रह चुका हो, बिना समुचित कारण के और न्यूनतम एक महीने की नोटिस दिए बिना या नोटिस के बदले एक महीने की मजदूरी दिए बिना पदच्युत या सेवोन्मुक्त नहीं कर सकता है। लेकिन, जहाँ राज्य सरकार द्वारा विहित कदाचार के आरोप के साबित होने पर किसी कर्मचारी को सेवान्मुक्त किया जाता हो, वहाँ ऐसी नोटिस आवश्यक नहीं है। पदच्युत या सेवोन्मुक्त या अन्य प्रकार से नौकरी से हटाया गया

कर्मचारी आदेश की प्राप्ति के 90 दिनों के अन्दर विहित प्राधिकारी के पास लिखित परिवाद कर सकता है। परिवाद के आधार है – 1. उसे सेवा से हटाने के लिए समुचित कारण का अभाव, 2. नोटिस का नहीं दिया जाना, 3. किसी कदाचार का दोषी नहीं होना तथा 4. सेवा–समाप्ति के पहले प्रतिपूर्ति का नहीं दिया जाना। सुनवाई और जांच के बाद विहित प्राधिकारी कर्मचारी को पुनर्स्थापित करने या मुद्रा के रूप में प्रतिपूर्ति करने या दोनों के रूप में राहत देने का आदेश दे सकता है। विहित प्राधिकारी का निर्णय अंतिम होगा और कर्मचारी तथा नियोजक दोनों के लिए बंधनकारी होगा। (धारा 26)

2. कोई भी कर्मचारी अपने नियोजक को नोटिस दिए बिना अपने नियोजन को समाप्त नही कर सकता है। उपर्युक्त नोटिस नही देने पर नियोजक उसकी अधिकतम 15 दिनों की भुगतान न की गई मजदूरी को जब्त कर सकता है। (धारा 27)

9. निरीक्षा पदाधिकारी

राज्य सरकार अधिनियम के प्रयोजनों के लिए निरीक्षी पदाधिकारियों की नियुक्ति तथा उनकी स्थानीय सीमाएँ निर्धारित कर सकती है। राज्य सरकार एक मुख्य निरीक्षी पदाधिकारी को भी नियुक्त कर सकती है, जो अपने में निहित शक्तियाँ के अतिरिक्त राज्यभर में निरीक्षी पदाधिकारी की शक्तियों का प्रयोग कर सकता है। अपने–अपने क्षेत्र में जिला दंडाधिकारी तथा अनुमंडल दंडाधिकारी भी इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए निरीक्षी पदाधिकारी होंगे। निरीक्षी पदाधिकारी की शक्तियों में मुख्य हैं – 1. किसी प्रतिष्ठान के परिसर में प्रवेश करने की शक्ति, 2. रजिस्टर, अभिलेख और नोटिस के निरीक्षण करने और जब्त करने की शक्ति, 3. कार्य–स्थल पर या अन्यथा किसी व्यक्ति के अभिकथन लेने की शक्ति तथा 4. अन्य विहित शक्तियां। निरीक्षी पदाधिकारी भारतीय दंडसंहिता के अंतर्गत लोकसेवक होता है। निरीक्षी पदाधिकारी को उसकी शक्तियों के प्रयोग में व्यवधान डालने वालों को छह महीने तक के कारावास या 250 रुपये तक के जुर्माने या दोनों से दंडित किया जा सकता है। (धारा 29–31)

10.8 सार संक्षेप

कारखाना अधिनियम 1948 में दिये गये विभिन्न परिभाषाओं के बारे में जानने के साथ कारखाना अधिनियम उल्लेखित स्वास्थ्य सम्बन्धी उपबन्धों के बारे में जानकारी प्राप्त हो गयी होगी। सुरक्षा संबंधी उपबन्धों के बारे मे, कल्याण सम्बन्धी उपबन्धों की जानकारी,कार्य के घंटों के बारे में दिये गये उपबन्धों के बारे में वर्णन किया गया है।अल्पवयस्क व्यक्तियों के नियोजन के बारे में जानकारी प्राप्त हो गयी होगी।खान अधिनियम के महत्वपूर्ण उपबन्धों के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत करने से आप इसके बारे में समझ गये हागे।बागान श्रमिक अधिनियम के महत्वपूर्ण उपबन्धों,मोटर यातायात श्रमिक अधिनियम के महत्वपूर्ण उपबन्धों ,दुकान और संस्थान अधिनियम तथा इससे सम्बन्धित उपबन्धों के बारे में जान गये हागे।

10.9 पारिभाषिक शब्दावली

Legislation	विधान	Protection	संरक्षा
Authority	प्राधिकार	Criticism	आलोचना
Rules of Law	विधि के नियम	Social Justice	सामाजिक न्याय
Ordinance	अध्यादेश	Declaration	घोषणा
Instruments	लिखत	Remuneration	पारिश्रमिक
Directives	निदेशों	Welfare	कल्याण
Execitive	कार्यकारिणी	Standing Orders	स्थायी अध्यादेश

10.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सक्सैना, आर0सी0, श्रम समस्यायें एवं समाज कल्याण, के नाथ कम्पनी, मेरठ, वर्ष 1997, पेज, 349–360.
2. फैक्ट्री एक्ट, कानून लॉ प्रकाशक, जोधपुर, वर्ष 2002, पेज, 1–45.
3. सिंह, इन्द्रजीत, श्रमिक विधियां, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद, वर्ष 2008, पेज, 15–60.
4. सिन्हा, पी0आर0एन0 एवं इन्दूबाला, श्रम एवं समाज कल्याण, भारती भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीव्यूटर्स, पटना, वर्ष 2008, पेज 33–66.

इकाई – 11

मजदूरी से संबंधित विधान

Legislation relation to wages

इकाई की रूपरेखा

11.1 परिचय
11.2 उद्देश्य
11.3 मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936 का विस्तार व मजदूरी की परिभाषा
11.3.1 मजदूरी भुगतान का दायित्व, मजदूरी–कालावधि तथा मजदूरी–भुगतान के लिए समय
11.3.2 न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 की परिभाषाएँ व विस्तार
11.3.3 मजदूरी की न्यूनतम दरों का नियतन और पुनरीक्षण
11.3.4 सामान्य कार्य के घंटों आदि का नियतन
11.4 समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 का विस्तार
11.5 ठेका श्रम विनियमन अधिनियम, 1970
11.6 बेानस भुगतान अधिनियम, 1965
11.7 सार संक्षेप
10.8 परिभाषिक शब्दावली
अभ्यास प्रश्न – लघु, विस्तृत
10.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

11.1 परिचय

श्रमिकों के लिए केवल मजदूरी की मात्रा ही महत्वपूर्ण नहीं होती, बल्कि उसकी अदायगी के तरीके, मजदूरी–भुगतान के अंतराल, उससे कटौतियां तथा उसके संरक्षण

से संबद्ध अन्य कई बातें भी महत्वपूर्ण होती है। मजदूरी की संरक्षा से संबद्ध कानूनों के बनाए जाने के पहले मजदूरी के भुगतान में कई तरह के अनाचार हुआ करते थे। उदाहरणार्थ, श्रमिकों की इच्छा नही रहते हुए भी नियोजक उन्हें मजदूरी नकद के बदले प्रकार में लेने के लिए बाध्य करते थे। मजदूरी–भुगतान के लिए कोई निश्चित अवधि भी नहीं रहती थी। कई नियोजक तो अपनी इच्छा से एक लंबी अवधि, यहाँ तक कि कई महीनों के बीत जाने पर ही मजदूरी का भुगतान किया करते थे। नियोजक कार्य से अनुपस्थिति, खराब काम, औजारों या समानों की क्षति, नियमों और आदेशों के उल्लंघन, वस्तुओं या सेवाओं की आपूर्ति आदि कई बहानों से मजदूरी से मनमाने ढंग से कटौतियां भी किया करते थे। इन कटौतियों के फलस्वरुप कभी–कभी तो श्रमिकों की मजदूरी की पूरी राशि से भी हाथ धोना पड़ता था। मजदूरी–भुगतान से संबद्ध इन अनुचित और और स्वेच्छाचारी अनाचरों से श्रमिकों के बीच असंतोष निरंतर बढ़ता गया। औद्योगिकीकरण के प्रसार तथा मजदूरी के संरक्षण की समस्या निरंतर गंभीर और व्यापक होती गई। मजदूरी की अदायगी से संबद्ध अनाचार को रोकने के लिए अलग–अलग देशों में मजदूरी की संरक्षा के लिए कानून बनाए गए। इन्हीं कानूनों में मजदूरी अधिनियम, 1936 भी था जिसके बारे में अग्रलिखित चर्चा कर रहे हैं।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- मजदूरी अधिनियम 1936 के विस्तार एवं परिभाषा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- मजदूरी के अन्य प्रकारों के बारे में भी जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- मजूदरी की संगणना कैसे होती है तथा उनका नियमन कैसे होता है के बारे में लिख सकेगें।
- न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 की परिभाषाएं और विस्तार के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- मजदूरी की न्यूनतम दरों का नियतन और पुनरीक्षण कैसे होता है के बारे में जान सकेगें।
- सामान्य कार्य के घण्टों आदि के नियतन के बारे में लिख सकेगें।
- सामान्य पारिश्रमिक अधिनियम के विस्तार के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- सामान्य पारिश्रमिक अधिनियम से सम्बन्धित विभिन्न प्रावधानों के बारे में लिख सकेगें।
- ठेकाश्रम विनियमन अधिनियम क्या है तथा इनमें कौन–कौन से प्रावधान है ? के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

➢ बोनस भुगतान अधिनियम के बारे में पूर्णरुप से जानकारी प्राप्त कर सकेगें व बोनस भुगतान के बारे में लिख सकेगें।

11.3 मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936

1. विस्तार : प्रारंभ में यह अधिनियम कारखानों और रेलवे–प्रशासन में काम करने वाले ऐसे कर्मचारियों के साथ लागू था, जिनकी मजदूरी 200 रुपये प्रतिमाह से अधिक नही थी। बाद में इसे कई अन्य औद्योगिक प्रतिष्ठानों तथा नियोजनों में लागू किया गया। इनमें मुख्य हैं – (1) ट्राम पथ सेवा या मोटर परिवहन–सेवा, (2) संघ की सेना या वायुसेना या भारत सरकार के सिविल विमानन विभाग में लगी हुई वायु–परिवहन सेवा के अतिरिक्त अन्य वायु परिवहन सेवा, (3) गोदी, घाट तथा जेटी (4) यांत्रिक रूप से चालित अंतर्देशीय जलयान (5) खान, पत्थर–खान या तेल–क्षेत्र, (6) कर्मशाला या प्रतिष्ठान, जिसमें प्रयोग, वहन या विक्रय के लिए वस्तुएं उत्पादित, अनुकूलित तथा विनिर्मित होती है, तथा (7) ऐसा प्रतिष्ठान, जिसमें भवनों, सड़कों, पुलों, नहरों या जल के निर्माण, विकास या अनुरक्षण से संबंद्ध कोई कार्य या बिजली या किसी अन्य प्रकार की शक्ति के उत्पादन, प्रसारण या वितरण से संबंद्ध कोई कार्य किया जा रहा हो।

न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 में किए गए एक संशोधन के अनुसार समुचित सरकार को इस अधिनियम को उन नियोजनों में भी लागू करने की शक्ति दी गई है, जो न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के दायरे में आते हैं। इस शक्ति का प्रयोग कर कई राज्य सरकारों ने इस अधिनियम को कृषि तथा कुछ अन्य असंगठित नियोजनों में भी लागू किया है। इस तरह, आज मजदूरी भुगतान अधिनियम देश के कई उद्योगों, नियोजनों और प्रतिष्ठानों में लागू है। यह अधिनियम उपर्युक्त प्रतिष्ठानों या उद्योगों में ऐसे कर्मचारियों के साथ लागू है, जिनकी मजदूरी 6500 रु0 प्रतिमाह से अधिक नही है। (धारा 1, 2)

2. मजदूरी की परिभाषा

मजदूरी भुगतान अधिनियम में 'मजदूरी' की परिभाषा निम्नांकित प्रकार से दी गई है–

मजदूरी का अभिप्राय उन सभी पारिश्रमिक (चाहे वेतन, भत्ते या अन्य रूप में) से है, जिन्हें मुद्रा के रूप में अभिव्यक्त किया गया है या किया जा सकता है और जो नियोजन की अभिव्यक्त या विवक्षित शर्तो के पूरी किए जाने पर नियोजित व्यक्ति को उसके नियोजन या नियोजन के दौरान किए गए काम के लिए देय होता है। **'मजदूरी' के अंतर्गत निम्नलिखित सम्मिलित होते हैं –**

1) किसी अधिनिर्णय या पक्षकारों के बीच किए गए समझौते या न्यायालय के आदेश के अधीन देय पारिश्रमिक;

2) ऐसा पारिश्रमिक जिसके लिए नियोजित व्यक्ति अतिकाल कार्य या छुट्टी के दिनों या अवधि के लिए हकदार है;

3) ऐसा कोई पारिश्रमिक (चाहे उसे बोनस या किसी अन्य नाम से पुकारा जाए) जो नियोजन की शर्तो के अधीन देय होता है;

4) ऐसी कोई राशि जो नियोजित व्यक्ति को उसकी सेवा की समाप्ति पर किसी कानून, संविदा या लिखित के अधीन कटौतियों के साथ या कटौतियों के बिना देय होती है तथा उसकी अदायगी के लिए अवधि की व्याख्या नही की गई है; या

5) ऐसी कोई राशि जिसके लिए नियोजित व्यक्ति किसी लागू कानून के अधीन बनाई गई योजना के अंतर्गत हकदार होता है।

अधिनियम के प्रयोजनों के लिए 'मजदूरी' की परिभाषा के अंतर्गत निम्नलिखित को सम्मिलित नही किया जाता –

1) ऐसा बोनस, जो नियोजन की शर्तो, अधिनिर्णय, पक्षकारों के बीच समझोते या न्यायालय के आदेश के अधीन देय नही है;

2) आवास–स्थान, प्रकाशा, जल, चिकित्सकीय परिचर्या, अन्य सुख–सुविधा का मूल्य, ऐसी सेवा का मूल्य जिसे राज्य सरकार के सामान्य या विशेष आदेश द्वारा मजदूरी की गणना से अपवर्जित कर दिया गया हो;

3) नियोजक द्वारा किसी पेंशन या भविष्य निधि के अंशदान के रूप में दी गई तथा उस पर प्राप्त किया जाने वाला सूद;

4) यात्रा–भत्ता या यात्रा–संबंधी रियायत का मूल्य;

5) किसी नियोजित व्यक्ति को उसके नियोजन की प्रकृति के कारण उस पर पड़े विशेष व्यय को चुकाने के लिए दी गई धनराशि; या

6) ऊपर के भाग (4) में वर्णित राशि को छोड़कर नियोजन की समाप्ति पर दिया जाने वाला उपादान।

मजदूरी भुगतान का दायित्व

इस अधिनियम के अंतर्गत नियोजित व्यक्तियों को अपेक्षित मजदूरी देने का दायित्व नियोजक पर है, लेकिन निम्नलिखित नियोजनों में नियोजक के प्रति उत्तरदायी या उसके द्वारा नामनिर्दिष्ट या नामांकित व्यक्ति भी मजदूरी के भुगतान के लिए दायी होते हैं –

1) कारखानों में उनके प्रबंधक;

2) औद्योगिक या अन्य प्रतिष्ठानों में उनके पर्यवेक्षण और नियंत्रण के लिए नियोजक के प्रति उत्तरदायी व्यक्ति;

3) रेलवे में, अगर उसका नियोजक रेलवे–प्रशासन है, तो स्थानीय क्षेत्र के लिए प्रशासन द्वारा इसके लिए नामनिर्दिष्ट व्यक्ति। (धारा 3)

4. मजदूरी–कालावधि तथा मजदूरी–भुगतान के लिए समय : राज्य सरकार सामान्य या विशेष आदेश द्वारा रेलवे (कारखानों को छोड़कर) में या केंद्रीय या राज्य सरकार के

लोकनिर्माण विभाग में दैनिक दर पर नियोजित व्यक्तियों के संबंध में मजदूरी भुगतान के उपर्युक्त उपबंधों से छूट दे सकती है, लेकिन इस संबंध में छूट देने के पहले केंद्र सरकार से सलाह ले लेना आवश्यक है। कर्मचारी की सेवा की समाप्ति को छोड़कर अन्य स्थितियों में मजदूरी का भुगतान काम चलने वाले ही दिन किया जाना जरूरी है।

5. वैध मुद्रा में मजदूरी का भुगतान : मजदूरी का भुगतान चालू सिक्कों या करेंसी नोटों या दोनों में ही किया जा सकता है, लेकिन कर्मचारियों के लिखित प्राधिकरण पर नियोजक उन्हें मजदूरी चेक से या उनके बैंक खाते में जमाकर भी कर सकता है। (धारा 6)

6. मजदूरी से अनुज्ञेय कटौतियाँ : अधिनियम के अनुसार कर्मचारियों की मजदूरी से केवल निम्नांकित प्रकार की की कटौतियाँ ही की जा सकती हैं –

1. **जुर्माने के लिए कटौतियाँ –** कर्मचारियों पर जुर्माना केवल ऐसे कृत्यों और लोगों के लिए लगाया जा सकता है, जिनके संबंध में नियोजक ने राज्य सरकार या सक्षम प्राधिकारी की अनुमति ले ली हो। ऐसे कृत्यों और लोगों की सूचना विहित स्थानों में और विहित तरीकों से प्रदर्शित करना आवश्यक है। किसी भी कर्मचारी पर जुर्माना तबतक नहीं लगाया जा सकता, जबतक उसे जुर्माने के खिलाफ कारण बताओं का अवसर नहीं दिया गया हो या इस संबंध में विहित प्रक्रिया नही अपनाई गई हो। किसी भी मजदूरी कालावधि में जुर्माने की अधिकतम राशि उस कालावधि के लिए देय मजदूरी के 3 प्रतिशत से अधिक नहीं हो सकती। पंद्रह वर्ष से कम उम्र के व्यक्तियों पर जुर्माना नहीं लगाया जा सकता। जुर्माने की रकम को किश्तों में या उसे लगाए जाने के 60 दिनों के बीत जाने के बाद वसूल नहीं किया जा सकता। सभी जुर्मानों और इस संबंध में वसूल की गई सभी वसूलियों को रजिस्टर में अंकित करना जरूरी है। जुर्माने के रूप में वसूल की गई सभी राशि को केवल उस कारखाने या प्रतिष्ठान में नियोजित व्यक्तियों के लाभ के लिए ही खर्च किया जा सकता है। [धारा 7(2)(a),9]
2. **काम से अनुपस्थिति के लिए कटौतियां –** अगर कोई कर्मचारी नियोजन की शर्त का उल्लघंन कर काम से अनुपस्थित होता है, तो उसके लिए भी मजदूरी से कटौती की जा सकती है। काम से अनुपस्थिति के लिए कटौती वास्तविक अनुपस्थिति से अधिक अवधि के लिए नहीं की जा सकती। लेकिन, जब किसी प्रतिष्ठान में दस या अधिक कर्मचारी गुटबंदी से बिना सूचना के या बिना उचित कारण के अनुपस्थित होते हैं, तो अनुपस्थिति की अवधि के लिए कटौती करते समय अधिकतम आठ और दिनों के लिए भी कटौती की जा सकती है, अगर नियोजन की शर्त के अनुसार अनुपस्थिति की नोटिस के बदले मजदूरी से कटौती करने की व्यवस्था है। नियोजित व्यक्तियों को काम से अनुपस्थित तब भी समझा जाएगा, जब कार्यस्थल पर उपस्थित रहने के बावजूद वे हाजिर हड़ताल

या अन्य अनुचित कारणों से अपना काम करने से इनकार करते हैं। [धारा 7(2)(b),9]

3. **नुकसान या हानि के लिए कटौतियाँ** – नुकसान या हानि के लिए कटौती की राशि नियोजक को होने वाली हानि की रकम से अधिक नहीं हो सकती। उपर्युक्त सभी स्थितियों में मजदूरी से कटौती तबतक नहीं की जा सकती, जबतक उस कर्मचारी को कटौती के विरुद्ध कारण बताने का अवसर नहीं दिया जा चुका हो या विहित प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया गया हो। मजदूरी देने के लिए उत्तरदायी व्यक्ति के लिए उपर्युक्त सभी कटौतियों को विहित तरीके से रजिस्टर में दर्ज करना आवश्यक है। [धारा 7(2)(c, m, n, o), 10]

4. **प्रदत्त सेवाओं के लिए कटौतियाद्द** – अधिनियम के अंतर्गत कर्मचारियों को उपलब्ध कराई जाने वाली निम्नलिखित सेवाओं के लिए मजदूरी से कटौतियाँ की जा सकती हैं –

   i. नियोजक, सरकार, किसी कानून के अधीन स्थापित आवास–बोर्ड, या अन्य सहायता–प्राप्त आवास–स्थान उपलब्ध कराने वाले प्राधिकारी द्वारा प्रदान की जाने वाली आवासीय सुविधाओं के लिए कटौतियाँ, तथा

   ii. नियोजक द्वारा प्रदत्त ऐसी सुख–सुविधाओं के लिए कटौतियाँ, जिनके संबंध में, राज्य सरकार या उसके द्वारा अधिकृत पदाधिकारी ने सामान्य या विशेष आदेश से स्वीकृति दे दी हो।

   इन सुविधाओं के लिए कर्मचारी की मजदूरी से तबतक कटौती नही की जा सकती, जबतक उसने इन सुविधाओं को नियोजन की शर्त के रूप में स्वीकार नहीं किया हो। कटौती की मात्रा सेवा के मूल्य के अनुपात से अधिक नहीं हो सकती। सरकार इस संबंध में शर्ते भी निर्धारित कर सकती है। [धारा 7(2)(d, e), 11]

5. **अग्रिमों की वसूली के लिए कटौतियाँ** – कर्मचारियों को किसी भी प्रकार की पेशगी (जिसमें यात्रा–भत्ता या सवारी–भत्ता के लिए पेशगी भी शामिल है) या उस पर देय ब्याज की वसूली या अधिक मजदूरी के समायोजन के लिए कर्मचारियों की मजदूरी से कटौती की जा सकती है। नियोजन के पहले दिए गए अग्रिम धन की वसूली पहली पूरी मजदूरी–कालावधि के लिए देय मजदूरी से ही की जा सकती है, लेकिन यात्रा–खर्च के लिए दी गई पेशगी के लिए मजदूरी से कटौती नहीं की जा सकती है। नियोजन के बाद दिए गए अग्रिम के लिए कटौती राज्य सरकार द्वारा निर्धारित शर्तो के अनुसार ही की जा सकती है। जो मजदूरी पहले से अर्जित नहीं की गई हो, उसके अग्रिम के लिए कटौती राज्य

सरकार द्वारा बनाए गए नियमों के अनुसार ही की जा सकती है। [धारा 7(2)(f), 12]

6. **ऋणों की वसूली के लिए कटौतियाँ** – श्रमिकों के कल्याण के लिए स्थापित निधि से या गृह निर्माण या राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित अन्य प्रयोजनों के लिए दिए गए ऋण और उससे संबंद्ध ब्याज की वसूली के लिए भी कर्मचारियों की मजदूरी से कटौती की जा सकती है। इस प्रकार की कटौती राज्य सरकार बनाए गए नियमों के अनुसार ही की जा सकती है। [धारा 7(2) (ff), (fff), 12 A]
7. **सहकारी समितियों तथा बीमा–योजनाओं में देनगी के लिए कटौतियाँ** – श्रमिकों की मजदूरी से राज्य सरकार या अधिकार प्राप्त पदाधिकारी द्वारा स्वीकृत सहकारी समितियों या डाकखाने द्वारा चलाई जाने वाली बीमा योजना में देनगी के लिए मजदूरी से कटौतियाँ की जा सकती है। इसी तरह, जीवन बीमा निगम को जीवन बीमा पॉलिसी के लिए देय किश्त या केन्द्र सरकार या राज्य सरकार की प्रतिभूतियों के क्रय या सरकार को किसी बचत योजना डाकघर बचत योजना में जमा करने के लिए कर्मचारियों के लिखित प्राधिकरण पर मजदूरी से कटौती की जा सकती है। ये कटौतियाँ राज्य सरकार द्वारा निर्धारित शर्तो के अनुसार ही की जा सकती है। कर्मचारियों के लिए बनाई गई केन्द्र सरकार की किसी बीमा योजना के लिए भी मजदूरी से कटौतियाँ की जा सकती है। [धारा 7(2) (ff), (fff), 12 A]
8. नियोजित व्यक्ति द्वारा देय आयकर के लिए कटौतियाँ। [धारा 7(2) (g)]
9. न्यायालय या अन्य सक्षम प्राधिकारी के आदेश द्वारा अपेक्षित कटौतियाँ। [धारा 7(2) (h)]
10. कानून के अधीन स्थापित तथा राज्य सरकार या समक्ष पदाधिकारी द्वारा अनुमोदित भविष्य निधि में अंशदान या अग्रिम की वसूली के लिए कटौतियाँ। [धारा 7(2) (i)]
11. कर्मचारी द्वारा लिखित रूप से प्राधिकृत किए जाने पर राज्य सरकार या सक्षम पदाधिकारी से स्वीकृत नियोजक या पंजीकृत श्रमसंघ द्वारा नियोजित व्यक्तियों या उनके परिवार के सदस्यों के कल्याण के लिए गठित निधि में अंशदान के लिए कटौतियाँ। [धारा 7(2) (kk)]
12. कर्मचारी के लिखित प्राधिकरण पर श्रमसंघ अधिनियम, 1926 के अंतर्गत पंजीकृत श्रमसंघ की सदस्यता के लिए देय फीस से संबद्ध कटौतियाँ। [धारा 7(2) (g)]
13. विश्वस्तता गारंटी बांड पर बीमा किश्त देने के लिए कटौतियाँ। [धारा 7(2)1]

14. नियोजित व्यक्ति के लिखित प्राधिकरण पर 'प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत–निधि' या केन्द्र सरकार द्वारा निर्दिष्ट ऐसे अन्य कोष के लिए कटौतियाँ। [धारा 7(2)P]

किसी भी मजदूरी कालावधि में कटौतियों की कुल राशि उस कालावधि के लिए दी जाने वाली मजदूरी के 50 प्रतिशत से अधिक नहीं हो सकती, लेकिन सहकारी समितियों में अंशदान के लिए यह 75 प्रतिशत तक हो सकती है। अगर कटौतियों की कुल राशि इन सीमाओं से अधिक हो जाती है, तो अतिरिक्त राशि की वसूली विहित तरीके से की जाएगी। [धारा 7(3)] नियोजक भारतीय रेलवे अधिनियम, 1890 को छोड़कर अन्य लागू कानूनों के अंतर्गत देय किसी भी राशि को कर्मचारियों की मजदूरी से वसूल कर सकता है। [धारा 7(4)]

7. अन्य उपबंध : अधिनियम के कुछ अन्य महत्वपूर्ण उपबंध निम्नांकित प्रकार के हैं

1. **अधिनियम के सार का प्रदर्शन** – अधिनियम के दायरे में आने वाले कारखानों या औद्योगिक या अन्य प्रतिष्ठानों में मजदूरी–भुगतान के लिए दायी व्यक्ति के लिए अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों के सार को अग्रेंजी तथा जिनयोजित बहुसंख्यक श्रमिकों द्वारा समझी जाने वाली भाषा में विहित ढंग से प्रदर्शित करना आवश्यक है। [धारा 25]
2. **रजिस्टरों और अभिलेखों का अनुरक्षण** – नियोजक के लिए कर्मचारियों के संबंध में उनके कार्यो, उनको दी गई मजदूरी, मजदूरी से की गई कटौतियों, दी गई रसीदों तथा अन्य विहित विवरणों को विहित ढंग से रजिस्टरों और अभिलेखों में अनुरक्षित करना आवश्यक है। ऐसे रजिस्टरों और अभिलेखों को अंतिम प्रविष्टि के दिन से कम–से–कम तीन वर्षो की अवधि तक सुरक्षित रखा जाएगा। [धारा 13(A)]
3. **संविदा द्वारा त्याग** – इस अधिनियम के लागू होने के पहले या बाद में की गई कोई भी संविदा या समझौता, जिससे नियोजित व्यक्ति अधिनियम के अधीन उपलब्ध किसी अधिकार का त्याग कर देता है, अकृत और शून्य है। [धारा 23]
4. **असंवितरित मजदूरी का भुगतान** – अगर किसी कर्मचारी की मृत्यु या उसका पता नहीं मालूम होने के कारण मजदूरी का भुगतान नहीं हो सका हो, तो उसका भुगतान कर्मचारी द्वारा मनोनीत व्यक्ति को करना आवश्यक है। अगर ऐसे मनोनीत व्यक्ति को मजदूरी का भुगतान करना संभव नहीं है, तो उसे विहित प्राधिकारी के पास जमा करना जरूरी है। कर्मचारी द्वारा मनोनीत व्यक्ति को मजदूरी का भुगतान कर देने या उसे विहित प्राधिकारी के पास जमा कर देने पर नियोजक का मजदूरी के भुगतान का दायित्व समाप्त हो जाता है। [धारा 7(A)]

5. **निरीक्षक** – कारखाना अधिनियम, 1948 के अंतर्गत नियुक्त निरीक्षक भी इस अधिनियम के अधीन कारखानों के लिए निरीक्षक होते हैं। इनके अतिरिक्त, राज्य सरकार रेल कर्मशालाओं तथा अन्य प्रतिष्ठानों के लिए भी निरीक्षकों की नियुक्त कर सकती है। खानों, तेलक्षेत्रों, रेल कर्मशालाओं को छोड़कर रेलवे तथा केंद्रीय वायु–यातायात सेवा में निरीक्षकों की नियुक्ति केन्द्र सरकार करती है। निरीक्षक भारतीय दंडसंहिता के अर्थो में लोकसेवक भी होता है। नियोजक के लिए निरीक्षक को परिसर में प्रवेश, निरीक्षण, पर्यवेक्षण, परीक्षण तथा जांच करने की सुविधाएं प्रदान करना अनिवार्य है [धारा 14, 14(A)]
6. **दावे और अपील** – राज्य सरकार औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 या इस तरह के अन्य कानून के अंतर्गत स्थापित श्रम–न्यायालय या औद्योगिक अधिकरण के पीठासीन अधिकारी या कर्मकार क्षतिपूर्ति आयुक्त या सिविल न्यायालय के न्यायाधीश का अनुभव रखनेवाले अन्य अधिकारी या वैतनिक दंडाधिकारी को मजदूरी से कटौतियों या मजदूरी भुगतान में विलंब आदि से संबद्ध दावों की सुनवाई और फैसले के लिए प्राधिकारी नियुक्त कर सकती है। [धारा 15-18]
7. **संपत्ति की कुर्की** – अगर नियोजक या मजदूरी–भुगतान के लिए दायी अन्य व्यक्ति प्राधिकारी या न्यायालय के आदेश या निर्णय के अनुसार कटौती या बकाए की रकम देने में टाल–मटोल कर रहे हों, तो ऐसे व्यक्ति की संपत्ति की कुर्की के लिए भी आदेश दिए जा सकते हैं। [धारा 17(A)]
8. **शास्तियाँ** – विहित समय में मजदूरी भुगतान नहीं करने या मजदूरी भुगतान में विलंब करने या मजदूरी से अनधिकृत कटौतियाँ करने या अधिनियम के उपबंधों के उल्लंघन में जुर्माना लगाने या विहित विवरणी या दस्तावेज रखने में विफलता, वांछित सूचनाएँ नही देने या गलत सूचनाएँ देने, निरीक्षक के कार्य में बाधा डालने या निरीक्षक के समक्ष रिकार्ड और दस्तावेज नही पेश करने के दोषों की 200 रु0 से 1000 रु0 तक के जुर्माने से दंडित किया जा सकता है। मजदूरी कालावधि नियत नहीं करने या काम के दिन तथा प्रचलित सिक्कों या करेंसी नोटों में भुगतान करने में विफलता या जुर्माने या कटौतियों से संबद्ध रजिस्टर नहीं रखने या विहित सूचनाओं को प्रदर्शित नहीं करने के दोषी को 500 रु0 तक के जुर्माने से दंडित किया जा सकता है। अपराधों को दुहराना एक महीने से 6 महीने तक के कारावास तथा 500 रु0 से 3000 रु0 तक के जुर्माने से दंडनीय है। प्राधिकारी द्वारा नियत तिथि तक मजदूरी का भुगतान नहीं करने पर अभियुक्त की अपराध के प्रत्येक दिन के लिए 100 रु0 के जुर्माने से दंडित किया जा सकता है। [धारा 20]

9. **नियम बनाने की शक्ति** – अधिनियम के उपबंधों को लागू करने तथा प्राधिकारियों और न्यायालयों की प्रक्रियाओं को विनियमित करने के लिए राज्य सरकार नियम बना सकती है। अधिनियम में उन विषयों का भी उल्लेख किया गया है, जिनके संबंध में राज्य सरकार नियम बना सकती है। रेलवे, खान तथा तेलक्षेत्रों के संबंध में केन्द्र सरकार द्वारा बनाए गए नियम लागू होगें। [धारा 26]
10. **अन्य उपबंध** – अधिनियम के अन्य उपबंध अपराधों के परीक्षण के लिए प्रक्रियाओं [धारा 21], वादों के वर्जन [धारा 22] तथा सद्भावपूर्वक कार्यवाही के लिए बचाव [धारा 12(A)] से संबद्ध है।

11.4 न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948

भारत सरकार द्वारा 1944 में नियुक्त श्रमिक जाँच समिति ने देश के विभिन्न उद्योगों में श्रमिकों की मजदूरी और उनके अर्जन का अध्ययन किया और बताया कि लगभग सभी उद्योगों में मजदूरी की दरें बहुत ही निम्न है। समिति ने अनुभव किया कि उस समय तक देश के प्रधान उद्योगों में भी श्रमिकों की मजदूरी में सुधार लाने के लिए समुचित प्रयास नहीं किए गए। स्थायी श्रम–समिति तथा भारतीय श्रम–सम्मेलन में देश के कुछ उद्योगों और नियोजनों में कानूनी तौर पर मजदूरी नियत करने के प्रश्न पर 1943 और 1944 में विस्तार से विचार–विमर्श किए गए। समिति और सम्मेलन दोनों ने कुछ नियोजनों में कानून के अंतर्गत न्यूनतम मजदूरी की दरें नियत करने और इसके लिए मजदूरी नियतन संयंत्र की व्यवस्था की सिफारिश की ।इन अनुशंसाओं को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने 1948 में न्यूनतम मजदूरी अधिनियम बनाया, जो उसी वर्ष देश में लागू हुआ। अधिनियम में समय–समय कुछ संशोधन भी किए गए है। अधिनियम के मुख्य उपबंधों की विवेचना नीचे की जाती है।

कुछ परिभाषाएँ :

1. **मजदूरी** – 'मजदूरी' का अभिप्राय ऐसे सभी पारिश्रमिक से है, जिसे मुद्रा में अभिव्यक्त किया जा सकता है तथा जो नियोजन की संविदा (अभिव्यक्त या विवक्षित) की शर्तो को पूरी करने पर नियोजित व्यक्ति को उसके नियोजन या उसके द्वारा किए जाने वाले काम के लिए देय होता है। मजदूरी में आवासीय भत्ता सम्मिलित होता है, लेकिन उसमें निम्नलिखित नहीं होते –
    - **a.** आवास–गृह, प्रकाश और जल की आपूर्ति तथा चिकित्सकीय देखभाल का मूल्य;
    - **b.** समुचित सरकार के सामान्य या विशेष आदेश द्वारा अपवर्जित किसी अन्य सुख–सुविधा या सेवा का मूल्य;
    - **c.** नियोजक द्वारा किसी पेंशन निधि, भविष्य निधि या किसी सामाजिक बीमा–योजना के अंतर्गत दिया गया अंशदान;

d. यात्रा–भत्ता या यात्रा रियायत का मूल्य;

e. नियोजन की प्रकृति के कारण किसी नियोजित व्यक्ति को विशेष खर्च के लिए दी जाने वाली राशि; या

f. सेवोन्मुक्ति पर दिया जानेवाला उपदान [धारा 2(h)]

2. **कर्मचारी** – 'कर्मचारी' का अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है, जो किसी ऐसे अनुसूचित नियोजन में कोई काम (कुशल, अकुशल, शारीरिक या लिपिकीय) करने के लिए भाड़े या पारिश्रमिक पर नियोजित हैं, जिसमें मजदूरी की न्यूनतम दरें नियत की जा चुकी है। कर्मचारी की श्रेणी में ऐसा बाहरी कर्मकार भी सम्मिलित है, जिसे दूसरे व्यक्ति द्वारा उसके व्यवसाय या व्यापार के लिए बनाने, साफ करने, धोने, बदलने, अलंकृत करने, पूरा करने, मरम्मत करने, अनुकूलित करने या अन्य प्रकार से विक्रय हेतु प्रसंस्कृत करने के लिए वस्तु या सामग्री दी जाती है, चाहे वह प्रक्रिया बाहरी कर्मकार के घर पर या अन्य परिसरों में चलाई जाती हो। कर्मचारी की श्रेणी में ऐसा कर्मचारी भी सम्मिलित है, जिसे समुचित सरकार ने कर्मचारी घोषित किया हो, लेकिन इसके अंतर्गत संघ के सशस्त्र बलों का सदस्य शामिल नहीं है। [धारा 2(i)]

3. **समुचित सरकार** – 'समुचित सरकार' का अभिप्राय हैं – (1) केन्द्र सरकार या रेल प्रशासन के प्राधिकार द्वारा या अधीन चलाए गए किसी अनुसूचित नियोजन के संबंध में या किसी भवन, तेलक्षेत्र या महापत्तन या केंद्रीय अधिनियम द्वारा स्थापित किसी निगम के संबंध में – केन्द्रीय सरकार तथा (2) अन्य अनुसूचित नियोजनों के संबंध में – राज्य सरकार।

4. **नियोजक** – 'नियोजक' का अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से हैं, जो या तो स्वयं या अन्य व्यक्ति के द्वारा या तो अपने किसी अन्य व्यक्ति के लिए या अधिक कर्मचारियों को ऐसे किसी अनुसूचित नियोजन में नियोजित करता है, जिसके लिए मजदूरी की न्यूनतम दरें इस अधिनियम के अधीन नियत की जा चुकी है। 'नियोजक' के अंतर्गत निम्नलिखित सम्मिलित हैं –

a. कारखाना–अधिनियम 1948 के अधीन कारखाना का प्रबंधक;

b. अनुसूचित नियोजन में सरकार के नियंत्रण के अधीन वह व्यक्ति या प्राधिकारी, जिसे सरकार ने कर्मचारियों के पर्यवेक्षण और नियंत्रण के लिए नियुक्त किया है। जहाँ इस प्रकार के किसी व्यक्ति या प्राधिकारी को नियुक्त नहीं किया गया है, वहाँ विभागाध्यक्ष को ही नियोजक माना जाएगा;

c. किसी स्थानीय प्राधिकारी के अधीन ऐसा व्यक्ति, जिसे कर्मचारियों के पर्यवेक्षण और नियंत्रण के लिए नियुक्त किया गया है। अगर वहाँ इस

तरह का कोई व्यक्ति नहीं है, तो उस स्थानीय प्राधिकारी के मुख्य कार्यपालक पदाधिकारी को नियोजक समझा जाएगा; तथा

d. अन्य स्थितियों में ऐसा व्यक्ति, जो कर्मचारियों के पर्यवेक्षण और नियंत्रण के लिए या मजदूरी देने के लिए स्वामी के प्रति उत्तरदायी है। [धारा 2(e)]

विस्तार : अधिनियम की अनुसूची से उन नियोजनों का उल्लेख है, जिनमें करने वाले श्रमिकों के लिए मजदूरी की न्यूनतम दरें नियत की जा सकती है। प्रारंभ में अधिनियम की अनुसूची के भाग एक में सम्मिलित नियोजन थे – (1) ऊनी गलीचे या दुशाले बुननेवाले प्रतिष्ठान, (2) धानकुट्टी, आटा–मिल या दाल–मिल, (3) तंबाकू (जिसके अंतर्गत बीड़ी बनाना भी शामिल है) का विनिर्माण, (4) बागान, जिसमें सिनकोना, रबर, चाय और कहवा सम्मिलित है, (5) तेल–मिल, (6) स्थानीय प्राधिकार, (7) पत्थर तोड़ने या फोड़ने के काम, (8) सड़कों का निर्माण या अनुरक्षण तथा भवन–संक्रियाएं, (9) लाख–विनिर्माण, (10) अभ्रक संकर्म, (11) सार्वजनिक मोटर परिवहन तथा (11) चर्म रंगाईशाला और चर्म विनिर्माण।

अधिनियम की अनुसूची के भाग दो में सम्मिलित नियोजन है – कृषि या किसी प्रकार के कृषिकर्म में नियोजन, जिसमें जमीन की खेती या उसे जोतना, दुग्ध–उद्योग, किसी कृषि या बागबानी की वस्तु का उत्पादन, उसकी खेती, उसे उगाना और काटना, पशुपालन, मधुमक्खीपालन या मुर्गीपालन तथा किसी किसान द्वारा या किसी कृषिक्षेत्र पर कृषिकर्म संक्रियाओं के आनुषंगिक या उनसे संयोजित (जिसमें वन–संबंधी या लकड़ी काटने से संबद्ध संक्रियाएं तथा कृषि–पैदावार को बाजार के लिए तैयार करने और भंडार या बाजार में देने या ढोने के कार्य शामिल है) कोई भी क्रिया सम्मिलित है।

11.4.1 मजदूरी की न्यूनतम दरों का नियतन और पुनरीक्षण

1. **न्यूनतम मजदूरी–दरों का नियतन –** समुचित सरकार (अपने–अपने अधिकार–क्षेत्र में केंद्रीय या राज्य सरकार) के लिए अधिनियम की अनुसूची में उल्लिखित तथा उसमें शामिल किए जाने वाले अन्य नियोजनों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए मजदूरी की न्यूनतम दरें नियत करना आवश्यक है। अनुसूची के भाग 2 में सम्मिलित नियोजनों, अर्थात् कृषि एवं संबद्ध क्रियाओं में समुचित सरकार पूरे राज्य की जगह केवल राज्य के विशेष भागों या विशिष्ट श्रेणी या श्रेणियों के नियोजनों (पूरे राज्य या उसके किसी भाग) के लिए मजदूरी की न्यूनतम दरें नियत कर सकती है।

अलग–अलग अनुसूचित नियोजनों, एक ही अनुसूचित नियोजन में अलग–अलग प्रकार के कामों, वयस्कों, तरुणों, बालकों और शिक्षुओं तथा अलग–अलग क्षेत्रों के लिए मजदूरी की अलग–अलग दरें नियत की जा सकती है। मजदूरी की न्यूनतम दरें घंटे, दिन, महीने या अन्य कालावधि के लिए नियत की जा सकती है। जहाँ मजदूरी की

दैनिक दर नियत की गई है। वहाँ उसे मासिक मजदूरी के रूप में गणना तथा जहाँ मासिक नियत की गई है, वहाँ उसे दैनिक मजदूरी के रूप में गणना के तरीकों का भी उल्लेख किया जा सकता है। जिन नियोजनों में मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936 लागू है, उनमें मजदूरी कालावधि उसी अधिनियम के अनुसार निर्धारित की जाएगी। (धारा 3)

नियत की जाने वाली मजदूरी–दरें निम्नलिखित प्रकार की हो सकती हैं –

1. मजदूरी की मूल दर और परिवर्ती निर्वाहव्यय–भत्ता;
2. निर्वाहव्यय–भत्ता के सहित या रहित मजदूरी की मूल दर तथा अनिवार्य वस्तुओं की रियायती दरों पर आपूर्ति के नकद मूल्य; या
3. ऐसा सर्वसमावेशी दर, जिसमें मूल दर, निर्वाहव्यय–भत्ता तथा रियायतों के नकद मूल्य सम्मिलित हों। (धारा 4)

2. **न्यूनतम मजदूरी दरों के नियतन की प्रक्रिया** – अधिनियम में अनुसूचित नियोजनों में पहली बार मजदूरी की न्यूनतम दरें नियत करने की दो प्रक्रियाओं की व्यवस्था है।

   पहली प्रक्रिया में समुचित सरकार समिति या समिति के सहायतार्थ विभिन्न क्षेत्रों के लिए उपसमितियों का गठन कर सकती है। समिति की सिफारिशों को ध्यान में रखकर सरकार संबंद्ध नियोजन के लिए मजदूरी की न्यूनतम दरें 'राजपत्र' में प्रकाशित कर नियत कर देती है।

   दूसरी विधि में समुचित सरकार किसी अनुसूचित नियोजन में काम करने वाले कर्मचारियों के लिए मजदूरी की न्यूनतम दरों के प्रस्ताव प्रभावित हो सकने वाले व्यक्तियों के सूचनार्थ राजपत्र में प्रकाशित कर देती है और उन्हें प्रकाशन की तिथि से दो महीने के अंदर अपने अभ्यावेदन देने का मौका देती है। इस संबंध में प्राप्त किए गए सभी अभ्यावेदनां पर विचार करने के बाद सरकार संबंद्ध अनुसूचित नियोजन के लिए मजदूरी की न्यूनतम दरें राजपत्र में प्रकाशित कर नियत कर देती है।

   दोनों में किसी भी प्रक्रिया द्वारा नियत की गई मजदूरी की दरें राजपत्र में अधिसूचना के प्रकाशन के तीन महीने की अवधि के बीत जाने के बाद लागू हो जाती है।

3. **न्यूनतम मजदूरी दरों का पुनरीक्षण** – नियत की गई न्यूनतम मजदूरी दरों की पुनरीक्षण के लिए भी वे ही विधियां अपनाई जाती है, जो उन्हें नियत करने के लिए हैं। मजदूरी दरों के पुनरीक्षण के लिए भी समिति और उपसमिति का गठन या राजपत्र में प्रस्तावों की अधिसूचना के प्रकाशन की विधि का प्रयोग किया जा सकता है। संशोधित मजदूरी की न्यूनतम दरें भी अलग–अलग अनुसूचित नियोजनों, एक ही अनुसूचित नियोजन में अलग–अलग प्रकार के कामों, वयस्कों, तरुणों और शिक्षुओं तथा अलग–अलग क्षेत्रों के लिए अलग–अलग हो सकती

है। ये दरें भी तीन प्रकार की हो सकती हैं – (1) मजदूरी की मूल दर और अलग से परिवर्ती निर्वाहव्यय–भत्ता, (2) निर्वाहव्यय–भत्ता के सहित या उनके बिना मजदूरी की मूल दर तथा अनिवार्य वस्तुओं की रियायती दरों पर आपूर्ति के नकद मूल्य, तथा (3) ऐसी सर्वसमावेशी दर, जिसमें मूल दर, निर्वाहव्यय–भत्ता तथा रियायतों के नकद मूल्य सम्मिलित हों। [धारा 3, (I) (b)]

4. **समिति, उपसमिति, सलाहकार बोर्ड और केंद्रीय सलाहकार बोर्ड** – समिति, उपसमिति तथा सलाहकार बोर्ड प्रत्येक में समुचित सरकार द्वारा मनोनीत अनुसूचित नियोजनों के नियोजकों और कर्मचारियों के प्रतिनिधि बराबर–बराबर की संख्या में, तथा अधिकतम एक–तिहाई की संख्या में स्वतंत्र व्यक्ति होगें। स्वतंत्र व्यक्तियों में एक को समुचित सरकार अध्यक्ष के रूप में नियुक्त करेगी। सलाहकार बोर्ड का काम समितियों और उपसमितियों के कार्यो को समन्वित करना तथा न्यूनतम मजदूरी–दरों के नियत किए जाने और उनमें संशोधन लाने के संबंध में समुचित सरकार को सलाह देना है। केंद्रीय सलाहकार बोर्ड की नियुक्ति केंद्रीय सरकार करती है। केंद्रीय सलाहकार बोर्ड में भी अनुसूचित नियोजनों के नियोजकों और कर्मचारियों के प्रतिनिधि बराबर–बराबर के अनुपात में तथा अधिकतम एक–तिहाई की संख्या में स्वतंत्र व्यक्ति होंगे। इन सभी सदस्यों को केंद्रीय सरकार मनोनीत करेगी। केंद्रीय सरकार स्वतंत्र व्यक्तियों में एक को अध्यक्ष के रूप में नियुक्त करेगी। केंद्रीय सलाहकार बोर्ड का मुख्य काम मजदूरी की न्यूनतम दरों को नियत करने या उनमें संशोधन लाने तथा अधिनियम के अंतर्गत अन्य विषयों के बारे में सलाह देना तथा सलाहकार बोर्डो के कार्यो को समन्वित करना है। (धारा 7, 8, 9)
5. **प्रकार में मजदूरी** – इस अधिनियम के अंतर्गत नियत की गई मजदूरी को नकद देना आवश्यक है, लेकिन जहाँ मजदूरी को पूर्णतः या आंशिक रूप में प्रकार में देने का प्रचलन है, वहाँ समुचित सरकार इस तरह से भुगतान दे सकती है। प्रकार में मजदूरी तथा अनिवार्य वस्तुओं की रियायती दरों पर आपूर्ति के नकद मूल्य का निर्धारण विहित तरीके से करना आवश्यक है। (धारा 11)

   जहाँ कर्मचारी मात्रानुपाती कार्य पर नियोजित है तथा जिसके लिए न्यूनतम कालानुपाती मजदूरी ही नियत की गई है, वहाँ उसे मात्रानुपाती मजदूरी दर के हिसाब से मजदूरी दी जाएगी। (धारा 17)
6. **न्यूनतम मजदूरी का भुगतान** – किसी भी अनुसूचित नियोजन में, जिसमें मजदूरी की दरें नियत की जा चुकी हैं, नियत की गई मजदूरी से कम दरों पर मजदूरी का भुगतान नहीं किया जा सकता। नियत की गई मजदूरी से केवल वे ही कटौतियाँ की जा सकती हैं, जो सरकार द्वारा अधिकृत की गई हो। जिन

नियोजनों में मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936 लागू है, उनमें उसी अधिनियम के उपबंधों के अनुसार मजदूरी से कटौतियां की जा सकती है। (धारा 12)

समुचित सरकार को मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936 के उपबंधों को राजपत्र में अधिसूचना द्वारा उन अनुसूचित नियोजनों में लागू करने की शक्ति प्राप्त हैं, जिनमें मजदूरी की न्यूनतम दरें नियत की गई है। (धारा 22F)

7. **दो या अधिक वर्गो के कामों के लिए मजदूरी –** अगर किसी कर्मचारी से दो या अधिक प्रकार के काम लिए जाते हैं, जिनके लिए मजदूरों की विभिन्न दरें नियत की गई हैं, तो उसे प्रत्येक काम के लिए अलग–अलग दरों से मजदूरी दी जाएगी। (धारा 16)

11.4.2 सामान्य कार्य के घंटों आदि का नियतन

निम्नलिखित कर्मचारियों के लिए दैनिक कार्य के घंटों, अंतराल, साप्ताहिक विश्राम तथा अवकाश–दिवस के कार्य के लिए भुगतान–संबंधी उपर्युक्त उपबंध केवल विहित सीमाओं और विहित शर्तो के अनुसार ही लागू होते हैं –

i) अत्यावश्यक काम पर या आपातकालीन स्थिति में काम करने वाले कर्मचारी;

ii) प्रारंभिक या अनुपूरक प्रकृति के कामों पर नियोजित कर्मचारी, जिन्हें निर्धारित अवधि की सीमाओं के बाद भी काम करना जरूरी होता है;

iii) ऐसे कर्मचारी, जिनका नियोजन मूलतः आंतरायिक है;

iv) ऐसे कर्मचारी, जिनका काम तकनीकी कारणों से कर्त्तव्यकाल के समाप्त होने के पहले ही किया जाना जरूरी होता है; या

v) ऐसे कर्मचारी, जो उन कार्यो पर नियोजित है, जिन्हें प्राकृतिक शक्तियों की अनियमित क्रियाओं के अलावा अन्य समयों में नही किया जा सकता। [धारा 13(2)]

आगे कोई कर्मचारी नियोजक के लोप के कारण निर्धारित कार्य के दैनिक घंटों से कम घंटों के लिए काम करता है, तो भी उसे पूरे दिन के लिए नियत मजदूरी–दर से भुगतान किया जाएगा। लेकिन, अगर वह अपनी अनिच्छा से या अन्य विहित परिस्थितियों के कारण पूरे समय तक काम नहीं करता, तो वह पूरे दिन के लिए मजदूरी का हकदार नहीं होता। [धारा 15]

अन्य उपबंध

1. **संविदा द्वारा त्याग पर रोक –** ऐसी कोई भी संविदा या समझौता, चाहे वह इस अधिनियम के पहले या बाद में किया गया हो, जिसके द्वारा कोई कर्मचारी इस अधिनियम के अंतर्गत मजदूरी की न्यूनतम दर, विशेषाधिकार या रियायत को छोड़ देता है या घटा देता है, वह अकृत और शून्य होता है। (धारा 25)

2. **दावे** – प्राधिकारी को गवाही लेने, गवाहों की उपस्थिति के लिए बाध्य करने, और दस्तावेजों को पेश करने के लिए सिविल प्रक्रिया–संहिता, 1908 के अधीन सिविल न्यायालय की सभी शक्तियाँ प्राप्त रहती है। प्राधिकारी को दंड प्रक्रिया–संहिता के प्रयोजनों के लिए सिविल न्यायालय समझा जाएगा। (धारा 20)

   न्यूनतम मजदूरी या अन्य रकम के बकाए की राशि के दावे से संबद्ध आवेदन कई कर्मचारी मिलकर एक साथ भी दे सकते हैं, लेकिन ऐसी स्थिति में हर्जाने की अधिकतम राशि न्यूनतम मजदूरी के बकाए की स्थिति में कुल राशि के दसगुने से अधिक और अन्य स्थितियों में प्रतिव्यक्ति 10 रु0 से अधिक नहीं हो सकती। प्राधिकारी किसी अनुसूचित नियोजन में बकाए से संबंद्ध अलग–अलग दिए गए कई आवेदनों पर एक आवेदन के रूप में भी विचार कर सकता है। (धारा 21)

3. **असंवितरित रकमों का भुगतान** – अगर किसी कर्मचारी की मृत्यु के कारण उसे इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के अंतर्गत देय न्यूनतम मजदूरी या अन्य रकम की राशि का भुगतान नहीं किया जा सका हो, तो नियोजक के लिए इस राशि को प्राधिकरी के पास जमा करना आवश्यक होगा। प्राधिकारी जमा की गई इस राशि का व्यवहार विहित तरीके से करेगा। (धारा 22D)

4. **जिस्टरों और रिकॉर्डो का अनुरक्षण** – अनुसूचित नियोजनों में नियोजकों के लिए अपने कर्मचारियों से संबद्ध ब्योरे, उनके कार्य, दी जानेवाली मजदूरी, मजदूरी की रसीद तथा अन्य विवरणियों के लिए रजिस्टर और रिकॉर्ड रखना आवश्यक है। उनके लिए कर्मचारियों को दी जाने वाली सूचना की समुचित व्यवस्था करना भी अनिवार्य है। समुचित मजदूरी–पुस्तिकाओं या मजदूरी–पर्चियों को दिए जाने के संबंध में नियम बना सकती है। (धारा 18)

5. **वादों का वर्णन** – निम्नलिखित स्थितियों में कोई भी न्यायालय बकाए की मजदूरी या अन्य रकम की वसूली के लिए किसी भी वाद को विचारार्थ नहीं ले सकता –

   1) अगर दावे की राशि के लिए वादी या उसकी ओर से आवेदन इस अधिनियम के अंतर्गत नियुक्त प्राधिकारों के पास दिया जा चुका हो;

   2) अगर प्राधिकारी ने दावे की राशि के संबंध में वादी के पक्ष में निर्देश दिए हो;

   3) अगर प्राधिकारी के निदेशानुसार दावे की राशि वादी को देय नही है; या

   4) अगर दावे की राशि इस अधिनियम के अधीन वसूल की जा सकती हो। (धारा 24)

6. **निरीक्षक** – केंद्र और राज्य सरकारें अपने–अपने अधिकार क्षेत्र में इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए निरीक्षकों की नियुक्ति और उनके कार्य की स्थानीय सीमाओं का निर्धारण कर सकती है।

   निरीक्षक को भारतीय दंडसंहिता के अर्थ में लोकसेवक समझा जाता है। निरीक्षक द्वारा किसी दस्तावेज या वस्तु को उपस्थित करने की माँग करने पर उसे प्रस्तुत करना संहिता की धाराओं 175 और 176 के अनुसार कानूनी रूप से अनिवार्य होता है। (धारा 19)

7. **कुछ अपराधों के लिए शास्तियाँ** – अगर नियोजक किसी कर्मचारी को नियत की गई न्यूनतम मजदूरी से कम दर पर या उसे देय अन्य रकम से कम का भुगतान करता है या कार्य के घंटों या विश्राम–दिवस से संबद्ध नियमों का उल्लंघन करता है, तो उसे अधिकतम 6 महीने के कारावास या 500 रुपये तक के जुर्माने या दोनों से दंडित किया जा सकता है। लेकिन, नियोजक को दंडित करते समय न्यायालय के लिए दावे से संबद्ध मामलों में उस पर लगाए गए हर्जाने की राशि को ध्यान में रखना आवश्यक है। (धारा 22)

   जहाँ अधिनियम या उसके अंतर्गत बनाए गए नियमों के उल्लंघन के लिए दंड का उल्लेख नहीं किया गया है, वहाँ अपराध के लिए नियोजक को अधिकतम 500 रुपये के जुर्माने से दंडित किया जा सकता है। [धारा 22(A)]

8. **अपराधों का संज्ञान** – अगर कोई शिकायत न्यूनतम मजदूरी या अन्य रकम के बकाए से संबद्ध हो और उस संबंध में प्राधिकारी ने उसे पूर्ण या आंशिक रूप में स्वीकृत कर दिया हो, तो कोई भी न्यायालय समुचित सरकार या उसके द्वारा अधिकृत अधिकारी की स्वीकृति के बिना उस शिकायत पर विचार नहीं कर सकता। अगर कोई शिकायत शास्तियों से संबद्ध हो, तो न्यायालय उस पर केवल निरीक्षक द्वारा शिकायत करने या उसकी स्वीकृति पर ही विचार कर सकता है। उल्लिखित शास्तियों के बारे में शिकायत इसके लिए मंजूरी दी जाने से एक महीने के अंदर और अन्य प्रकार की शास्तियों के लिए अपराध के अभिकथित दिन से 6 महीने के अंदर ही की जा सकती है। [धारा 22B]

9. **छूट और अपवाद** – समुचित सरकार को मजदूरी संबंधी अधिनियम के उपबंधों को अंशक्त कर्मचारियों के साथ लागू नहीं होने से संबद्ध निदेश देने की शक्ति प्राप्त है।

   अगर किसी अनुसूचित नियोजन में कर्मचारियों का इस अधिनियम में नियत की गई मजदूरी की दरां से अधिक दर पर मजदूरी मिलती है, या उनकी सेवा की शर्ते और दशाएँ इस अधिनियम के अंतर्गत निर्धारित शर्तो और दशाओं से ऊँचे स्तर की हैं, तो समुचित सरकार इन कर्मचारियों, प्रतिष्ठानों, या किसी

क्षेत्र में अनुसूचित नियोजन को अधिनियम के संबद्ध उपबंधों से छूट दे सकती है। (धारा 26)

10. **केंद्रीय सरकार द्वारा निदेश देने की शक्ति** – इस अधिनियम के समुचित निष्पादन के लिए केन्द्र सरकार राज्य सरकारों को निदेश दे सकती है। (धारा 28)
11. **नियम बनाने की शक्ति** – केन्द्र सरकार को केंद्रीय सलाहकार बोर्ड के सदस्यों की पदावधि, कामकाज के संचालन के लिए प्रक्रिया, मतदान के तरीके, सदस्यता में आकस्मिक रिक्तियों के भरे जाने और कामकाज के लिए आवश्यक गणपूर्ति के संबंध में नियम बनाने की शक्ति प्राप्त है। (धारा 29)

11.5 समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976

1. विस्तार : अधिनियम सारे भारत में लागू है। केन्द्रीय सरकार को इसे विभिन्न स्थापनों या नियोजनों में लागू करने की शक्ति प्राप्त है। अब तक यह अधिनियम देश के अधिकांश उद्योगों, स्थापनों या नियोजनों में लागू किया जा चुका है। अगर किसी अधिनिर्णय, समझौते या सेवा की संविदा या किसी अन्य कानून के उपबंध इस अधिनियम के उपबंधों के विरोध में हों, तो वहाँ इसी अधिनियम के उपबंध लागू होंगे।

2. पुरुष और स्त्री–कर्मकारों को समान पारिश्रमिक देने के संबंध में नियोजक का दायित्व : किसी स्थापना या नियोजन में कोई भी नियोजक एक ही या समान कार्य पर लगे किसी भी कामगार को उन दरों से कम अनुकूल दरों पर मजदूरी, चाहे वह नकद हो या प्रकार में, नहीं देगा, जिन दरों से वैसे ही काम पर लगे दूसरे लिंग के कामगारों को देय होती है। इन उपबंधों के अनुपालन के लिए कोई भी नियोजक किसी कामगार को देय पारिश्रमिक की दर को घटा नही सकता। जिस स्थापन या नियोजन में इस अधिनियम के लागू होने के पहले पुरुष और स्त्री–कामगारों को एक ही या समान कार्य के लिए देय पारिश्रमिक की दरों में केवल लिंग के आधार पर ही भिन्नता रही है, वहाँ इस अधिनियम के लागू होने पर उच्चतम दरें ही लागू रहेंगी। [धारा 2 (h)]

अधिनियम के अधीन एक ही या समान प्रकृति के कार्य से ऐसे कार्य का बोध होता है, जिसे अगर पुरुष या स्त्री द्वारा समान दशाओं में किया जाए, तो उसमें वांछित कौशल, प्रयास या दायित्व समान हो, तथा उसमें किसी पुरुष या स्त्री द्वारा किए जाने के लिए कौशल, प्रयास या दायित्व–संबंधी भिन्नताएं नियोजन की शर्तो एवं दशाओं के प्रयोजनों के लिए व्यावहारिक महत्व के नहीं हो। [धारा 2 (h)]

3. स्त्री और पुरुष कामगारों की भरती और नियोजन की शर्तो में भेदभाव करने का प्रतिषेध : उन स्थितियों को छोड़कर जहाँ स्त्रियों के नियोजन को प्रतिषिद्ध या प्रतिवंधित किया गया है, इस अधिनियम के प्रारंभ होने पर कोई भी नियोजक एक ही या समान प्रकृति के कार्य पर भरती करते समय स्त्रियों के साथ किसी तरह का भेदभाव नहीं

करेगा। स्त्रियों के साथ भेदभाव की मनाही भरती के उपरांत सेवा की दशाओं जैसे पदोन्नति, प्रशिक्षण या स्थानांतरण के संबंध में भी की गई हैं। लेकिन, भेदभाव–संबंधी उपर्युक्त उपबंध अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, भूतपूर्व सैनिकों, छंटनी किए गए कर्मचारियों या अन्य वर्ग या श्रेणी के व्यक्तियों से संबंद्ध प्राथमिकताओं या आरक्षण के साथ लागू नही होगें।[धारा 5]

4. सलाहकार समिति : स्त्रियों को रोजगार के अधिकाधिक अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से केन्द्रीय या राज्य सरकारें अपने–अपने अधिकार क्षेत्र में एक या अधिक सलाहकार समितियों का गठन कर सकती है। सलाहकार समिति में समुचित सरकार द्वारा मनोनीत कम–से–कम 10 सदस्य होगे, जिनमें आधी स्त्रियां होगी। समिति का मुख्य कार्य केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट प्रतिष्ठानों या नियोजनों में स्त्रियों को नियोजित किए जा जा सकने के संबंध में सलाह देना है। सलाह देते समय सलाहकार समिति को कतिपय बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है; जैसे – सम्बद्ध प्रतिष्ठान या नियोजन में नियोजित व्यक्तियों की संख्या, कार्य की प्रकृति, कार्य के घंटे, नियोजन के लिए स्त्रियों की उपयुक्तता, स्त्रियों को रोजगार के अधिकाधिक अवसर उपलबध कराने की आवश्यकता तथा समिति द्वारा समझी जाने वाली अन्य सुसंगत बातें। समिति की सिफारिशों पर विचार करने तथा संबद्ध व्यक्तियों को अभ्यावेदन का समुचित अवसर प्रदान करने के बाद समुचित सरकार स्त्री–कामगारों के नियोजन के संबंद्ध में निर्देश दे सकती है।[धारा 6]

5. विशिष्ट मामलों में अधिनियम का लागू नहीं होना : जहां किसी कानून के अंतर्गत महिलाओं के नियोजन की शर्तो और दशाओं से संबद्ध विशेष व्यवहार की व्यवस्था है, वहां इस अधिनियम के उपबंध लागू नही होंगे। जहाँ बच्चों के जन्म या संभावित जन्म या सेवा–निवृत्ति, विवाह या मृत्यु से संबद्ध नियोजन की शर्तो एवं दशाओं के संबंध में महिलाओं के लिए विशेष व्यवस्था की गई है, वहां भी इस अधिनियम के उपबंध लागू नहीं होंगे। [धारा 15]

6. घोषणा करने की शक्ति : जहाँ समुचित सरकार इस बात से संतुष्ट है कि किसी स्थापन या नियोजन में पुरुष और महिला–कामगारों के पारिश्रमिक में अंतर लिंग के अलावा अन्य कारकों से हैं, वहाँ वह इस संबंध में घोषणा कर सकती है, तथा इस तरह के अंतर के सिलसिले में नियोजक के किसी भी कृत्य को इस अधिनियम के उपबंधों का उल्लघंन नही समझा जाएगा। [धारा 16]

7. दावे और शिकायतें : अधिनियम के अधीन दावों एवं शिकायतों तथा निर्धारण के प्रयोजन के लिए समुचित सरकार प्राधिकारी की नियुक्ति कर सकती है। ऐसा पदाधिकारी से निम्न कोटि का पदाधिकारी नहीं होगा। ऐसे दावों या शिकायतों को विहित तरीके से करना आवश्यक है। प्राधिकारी के लिए दावे या शिकायत के संबंध में

आवेदक तथा नियोजक को सुनवाई का अवसर प्रदान करना आवश्यक है। ऐसे प्रत्येक प्राधिकारी को साक्ष्य लेने, गवाहों को उपस्थित होने के लिए बाध्य करने तथा दस्तावेजों को पेश करवाने के संबंध में सिविल प्रक्रिया संहिता के अधीन सिविल न्यायालय की शक्तियाँ प्राप्त है। प्राधिकारी के निर्णय से विक्षुब्ध व्यक्ति आदेश के दिन से 30 दिनों के अंदर सरकार द्वारा नियुक्त अपील–प्राधिकारी के पास अपील कर सकता है। [धारा 7]

8. निरीक्षक : अपने–अपने अधिकार क्षेत्र में केन्द्रीय एवं राज्य सरकारें इस अधिनियम तथा इसके अधीन बनाए गए नियमों के अनुपालन से संबंद्ध जांच के लिए निरीक्षकों की नियुक्ति कर सकती है। निरीक्षक भारतीय दंडसंहिता के अधीन लोकसेवक होता है। निरीक्षक को अपने अधिकार क्षेत्र की स्थानीय सीमाओं में अग्रलिखित शक्तियाँ प्राप्त रहती है– (1) किसी भी भवन, कारखाना, परिसर या जलयान में प्रवेश करने की शक्ति, (2) नियोजक से कामगारों के नियोजन से संबद्ध रजिस्टर या अन्य दस्तावेजों को पेश करवाने की शक्ति, (3) अधिनियम के उपबंधों के अनुपालन के संबंध में किसी व्यक्ति के साक्ष्य लेने की शक्ति, (4) किसी कामगार के संबंध में नियोजक, उसके अभिकर्ता या सेवक से पूछताछ करने की शक्ति, तथा (5) किसी रजिस्टर या अन्य दस्तावेज से नकल लेने की शक्ति।[धारा 9]

9. शक्तियाँ : अधिनियम के अंतर्गत कई कृत्यों या लोपों के लिए दोषी व्यक्तियों को कारावास या जुर्माने या दोनों से दंडित किया जा सकता है। विहित रजिस्टर या दस्तावेज के अनुरक्षण या उसे पेश करने में विफलता तथा साक्ष्य या कर्मकारों के नियोजन से संबंद्ध वांछित सूचना देने में विफलता या संबंद्ध व्यक्तियों को सूचनाएं देने से रोकने के दोषी व्यक्ति को एक महीने तक के कारावास या 10 हजार रुपये तक के जुर्माने या दोनों से दंडित किया जा सकता है। भरती, पदोन्नति, स्थानान्तरण, प्रशिक्षण आदि में स्त्रियों के साथ भेदभाव करना या पुरुष और स्त्री–कर्मकारों को एक ही या समान कार्य के लिए असमान मजदूरी देना या सलाहकार समिति द्वारा स्त्री–कर्मकारों के संबंध में दिए गए निर्देशों का पालन नहीं करना 10 हजार से 20 हजार रुपये तक के जुर्माने या 3 महीने से एक वर्ष तक के कारावास या दोनों से दंडनीय है। निरीक्षक के समक्ष रजिस्टर, दस्तावेज या सूचना नहीं प्रस्तुत करने के दोषी व्यक्ति को 500 रुपये तक के जुर्माने से दंडित किया जा सकता है।

10. अन्य उपबंध : अधिनियम के कुछ अन्य महत्वपूर्ण उपबंध निम्नलिखित है –

1. **रजिस्टरों का अनुरक्षण** – प्रत्येक नियोजक के लिए अपने कर्मकारों के संबंध में विहित रजिस्टरों और दस्तावेजों का रखना आवश्यक है। [धारा 8]
2. **कंपनियों द्वारा अपराध** – जहाँ अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी कंपनी द्वारा की गई हो, वहाँ ऐसा प्रत्येक व्यक्ति जो अपराध के समय कंपनी के व्यवसाय के संचालन के प्रभार में हो या कंपनी के प्रतिदायी हो, अपराध के लिए दोषी समझा जाएगा और उसके विरुद्ध अभियोग चलाया जाएगा और दंडित

किया जाएगा। लेकिन, अगर ऐसा व्यक्ति यह साबित कर देता है कि अपराध उसके ज्ञान के बिना किया गया हो या उसने उसे रोकने के लिए तत्परता दिखाई हो, तो उसे दंडित नहीं किया जाएगा। अगर यह पाया जाता है कि अपराध कंपनी के किसी निदेशक, सचिव या अन्य अधिकारी की सहमति या मौनानुकूलता या उपेक्षा के कारण हुआ है, तो उसे ही दंडित किया जाएगा।

[धारा 11]

3. **अपराध का संज्ञान** – अधिनियम के अंतर्गत किसी अभियोग का विचारण मेट्रोपोलिटन दंडाधिकारी या प्रथम श्रेणी के न्यायिक दंडाधिकारी से अन्यून कोटि का न्यायालय ही कर सकता है। अधिनियम के अंतर्गत अभियोग का संज्ञान न्यायालय द्वारा अपने स्वयं के ज्ञान या समुचित सरकार या अधिकृत पदाधिकारी द्वारा की गई शिकायत के आधार पर ही किया जा सकता है। इस तरह की शिकायत अपराध से क्षुब्ध व्यक्ति या कोई मान्यता–प्राप्त कल्याण संस्था या संगठन भी कर सकता है। [धारा 12]
4. **नियम बनाने की शक्ति**–अधिनियम के उपबंधों को लागू करने के प्रयोजनों के लिए केन्द्र सरकार विहित विषयों से संबंद्ध नियम बना सकती है। [धारा 13]

11.6 ठेका श्रम विनियमन अधिनियम, 1970

ठेकाश्रम के विनियमन हेतु ठेकाश्रम (विनियमन और उत्सादन अधिनियम, 1970 में पारित किया गया जो 10 फरवरी, 1970 से प्रभावी हुआ। इसका उद्देश्य ठेके पर काम करने वाले श्रमिकों को शोषण से बचाना है। श्रमिकों के स्वास्थ्य और कल्याण हेतु समुचित व्यवस्था सुनिश्चित कराना अधिनियम का उद्देश्य है। बीस या बीस से अधिक कर्मकार जिस प्रतिष्ठान में कार्यरत हैं या थे उन पर यह अधिनियम लागू होगा। लेकिन समुचित सरकार चाहे तो कम कार्यरत कर्मकारों वाले प्रतिष्ठान में भी शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा लागू कर सकती है। आन्तरायिक या आकस्मिक प्रकृति के स्थापनों पर वह लागू नहीं होगा। इस सम्बन्ध में सरकार का निश्चय अन्तिम होगा। यह अधिनियम सार्वजनिक निजी नियोजकों तथा सरकार पर लागू होता है। इसे असंवैधानिक नहीं माना गया यद्यपि कि यह ठेकेदारों पर कतिपय निर्बन्धन और दायित्व अधिरोपित करता है। स्थापन में कार्य/परिणाम सम्पन्न कराने के लिए श्रमिकों को उपलब्ध कराने वाला ठेकेदार (उपठेकेदार समेत) तथा उनके माध्यम से काम करने के लिए उपलब्ध व्यक्ति ठेका श्रमिक कहलाता है उसे भाड़े पर रखा जाता है। स्थापन का यहां व्यापक अर्थ है जहाँ अभिनिर्माण प्रक्रिया सम्पन्न की जाती है। प्रधान नियोजक धारा 1 उपधारा (छ) में परिभाषित है, नाम निर्दिष्ट इससे अभिप्रेत है। केन्द्रीय सरकार केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड (ठेकाश्रम) गठित करती है। इसमें एक अध्यक्ष, मुख्य श्रम, आयुक्त, केन्द्रीय सरकार, रेल, खान आदि के कम से कम 11 या अधिकतम 17 प्रतिनिधि होंगे।

कर्मकारों के हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्यों की संख्या प्रधान नियोजकों के प्रतिनिधियों से कम नहीं होगी। इसकी सलाह मानने के लिए सरकार बाध्य नहीं होगी।

राज्य सरकार राज्य स्तर पर सलाह देने के लिए राज्य सलाहकार (ठेकाश्रम) बोर्ड गठित करेगी इन दोनों के सदस्यों की पदावधि, सेवा की अन्य शर्ते, अपनाई जाने वाली प्रक्रिया तथा रिक्त स्थानों के भरने की रीति ऐसी होगी जो निर्धारित की जाये। वे बोर्ड समितियाँ गठित करने की शक्ति रखते हैं। धारा 6 के अनुसार सरकार अपने राजपत्रित अधिकारी को ठेकाश्रम पर नियोजित करने वाले स्थापनों के पूंजीकरण करने के लिए नियुक्त करेगी और उनके क्षेत्राधिकार की सीमा भी निश्चित कर देगी। निर्धारित अवधि में आवेदन देने पर तथा सारी शर्तो के पूरा रहने पर पंजीकरणकर्ता पंजीकरण करके प्रमाणपत्र जारी करेगा जो लाइसेन्सिंग का काम करेगा। पर्याप्त कारणों से सन्तुष्ट होने पर विलम्ब से प्रस्तुत किये गये आवेदन पर अधिकारी विचार कर सकेगा। अनुचित ढंग से प्राप्त किये गये पंजीकरण का प्रधान नियोजक सुनवाई का अवसर प्रदान करके तथा सरकार के पूर्व अनुमोदन से प्रतिसंहरण भी किया जा सकेगा। धारा 9 के अनुसार पंजीकरण रद्द होने पर ठेका श्रमिकों को नियोजित नहीं किया जायेगा। धारा 10 के अन्तर्गत समुचित सरकार ठेका श्रमिकों के नियोजन पर प्रतिषेध लगा सकेगी।

समुचित सरकार धारा 11 के अन्तर्गत अनुज्ञापन अधिकारियों की यथेष्ठ संख्या में उनकी सीमाओं को निर्धारित करते हुए नियुक्ति करेगी। बिना लाइसेन्स लिए ठेकाश्रम के माध्यम से कार्य नहीं कराया जायेगा। सेवा शर्तो जैसे काम के घण्टों आदि, तथा निर्धारित सिक्योरिटी राशि जमा करने के बारे में सरकार नियम बनायेगी। उसका प्रधान नियोजक को अनुपालन करना होगा। अनुज्ञापन अधिकारी समय पर अनुज्ञापन की धारा 13 के अधीन निर्धारित फीस देने पर नवीनीकरण कर सकेगा। अनुज्ञप्ति के दुर्व्यपदेशन, महत्वपूर्ण तथ्यों के गोपन, नियमोल्लंघन से प्राप्त किये जाने की दशा में उसका प्रतिसंहरण, निलम्बर तथा संशोधन भी किया जा सकेगा। धारा 15 के अधीन किसी आदेश से व्यथित हुआ व्यक्ति 30 दिन के भीतर सरकार द्वारा नाम निर्देशित व्यक्ति अपील अधिकारी के यहाँ अपील कर सकेगा।

धारा 16 में सरकार ठेका श्रमिकों के कल्याण तथा स्वास्थ्य के लिए जलपान गृहों की व्यवस्था के लिए नियोजकों को आदेश देगी। खाद्य पदार्थो का विवरण तथा मूल्य आदि के बारे में दिशा निर्देश देगी। धारा 18 के अन्तर्गत, विश्राम कक्षों तथा रात में रुकने के लिए स्वच्छ आरामदेह प्रकाशयुक्त आनुकल्पिक आवासों की व्यवस्था करने का नियोजक का दायित्व होगा। इसके अलावा स्वास्थ्यप्रद पेय जल की आपूर्ति, पर्याप्त संख्या में शौचालय, मूत्रालय, धुलाई की सुविधाएं उपलब्ध कराना होगा। धारा 20 के अनुसार फर्स्ट एड फैसिलिटीज की व्यवस्था होगी। इन सुविधाओं के लिए प्रधान नियोजक उपगत व्ययों का प्रधान नियोजक ठेकेदार से वसूल कर सकता है। धारा 21 के अनुसार मजदूरी का भुगतान ठेकेदारों पर होता। इसमें ओवर टाइम वेज भी

सम्मिलित होगी। कम भुगतान करने पर प्रधान नियोजक शेष राशि का भुगतान करके ठेकेदार से वसूल करने का हकदार होगा। इण्डियन एयर लाइन्स बनाम केन्द्रीय सरकार श्रम न्यायालय, के निर्णयानुसार ठेका श्रमिक मजदूरी न पाने की दशा में मुख्य नियोजक से मजदूरी माँग सकते हैं।

धारा 22 में दण्ड की व्यवस्था की गई है। जो कोई निरीक्षक के कार्य में बाधा पहुंचायेगा या निरीक्षण हेतु रजिस्टर देने से इन्कार करेगा वह तीन माह के कारावास या पांच सौ रुपये जुर्माना या दोनों से दण्डित कया जस सकेगा। निर्बन्धनों, अनुज्ञप्ति की शर्तो का उल्लंघन करने वाला नियोजक तीन माह के कारावास तथा एक हजार रुपये जुर्माना या दोनों से दण्डित होगा। प्रथम उल्लंघन के दोषसिद्ध होने पर उसके जारी रहने पर एक सौ रुपये प्रतिदिन के लिए धारा 23 के अन्तर्गत दण्ड किया जा सकेगा। उल्लंघन सिद्ध करने का भार शिकायतकर्ता पर होगा। कम्पनी के मामले में धारा 25 के अन्तर्गत कम्पनी का भारसाधक तथा उसके प्रति उत्तरदायी व्यक्ति दण्डित किया जा सकेगा। इसमें निदेशक, प्रबन्धक, प्रबन्ध अभिकर्ता, आदि आते हैं। प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेट या फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट से अवर कोई भी न्यायालय दण्डनीय अपराधों का संज्ञान या विचारण नहीं करेगा। अपराध किये जाने की तिथि से निरीक्षक द्वारा या उसकी लिखित पूर्व स्वीकृति प्राप्त करने वाले व्यक्ति द्वारा परिवाद 90 दिन के भीतर दाखिल किये जाने पर विचारण किया जायेगा अन्यथा नहीं। निरीक्षकों की जांच आदि करने, लोक अधिकारी की सहायता लेने, किसी व्यक्ति से परीक्षा करने, कार्य बांटने वाले का नाम–पता जानने, रजिस्टर आदि को जब्त करने या उनकी प्रतिलिपियां लेने का अधिकार होगा।

रजिस्टरों या अन्य अभिलेखों को बनाये रखने का दायित्व धारा 29 के अन्तर्गत प्रधान नियोजक का होगा जिसमें मजदूरी भुगतान आदि की प्रविष्टियां और अन्य वांछित जानकारियां आदि दी गई होती है। धारा 30 अधिनियम से असंगत विधियों और करारों के प्रभाव पर प्रकाश डालती है। अन्य विधियों में प्रदान की गई सुविधाओं से इस अधिनियम के अन्तर्गत दी जाने वाली सुविधाएं किसी भी दशा में कम नहीं होगी। धारा 31 समुचित सरकार को अधिनियम के कुछ निर्बन्धनों से कुछ समय किसी स्थापनों या ठेकेदारों को छूट देने की शक्ति प्रदान करती है। धारा 32 पंजीकरणकर्ता अधिकारी, अनुज्ञापन में सद्भावपूर्वक किये गये कार्य के लिए अभियोजन या विधिक कार्यवाही नहीं की जायेगी। यह धारा उन्हें संरक्षण प्रदान करती है। धारा 33 केन्द्र सरकार को राज्य सरकार को निर्देश देने की तथा धारा 34 अधिनियम के उपबन्धों को प्रभावी बनाने में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने की तथा धारा 34 नियम बनाने की शक्ति प्रदान करती है।

दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले – ''समान कार्य के लिए समान वेतन का सिद्धान्त'' दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले श्रमिकों पर भी लागू होता है चाहे उनकी

नियुक्ति स्थायी स्कीम में हो या अस्थायी स्कीम में, मजदूरी भुगतान में अन्तर अनुच्छेद 14 के अन्तर्गत विभेदकारी माना जायेगा। एक लम्बी अवधि के बाद ऐसे श्रमिकों को स्थायी माना जाना चाहिए।

11.7 बोनस भुगतान अधिनियम, 1965

अधिनियम का मुख्य उद्देश्य कुछ उद्योगों व संस्थानों में काम करने वाले व्यक्तियों के लिए बोनस के भुगतान की व्यवस्था कराना तथा उससे सम्बन्धित अन्य मामलों को सुलझाना है। यह अधिनियम पूरे देश में फैले हुए उन सब कारखानों और संस्थानों पर लागू होता है जिनमें लेखा–वर्ष की अवधि में किसी भी दिन 20 या उससे अधिक कर्मचारी काम करते है। अधिनियम, शिक्षार्थियों को छोड़कर काम पर लगे उन सभी कर्मचारियों पर लागू होता है जिनका मासिक वेतन या मजदूरी 1,600 रुपये तक है किन्तु 1985 में यह सीमा 1,600 रु0 से बढ़ाकर 2,500 रु0 प्रतिमाह कर दी गई थी। जिन संस्थानों तथा व्यक्तियों पर यह अधिनियम लागू नहीं होता, वे हैं भारतीय जीवन बीमा निगम, नाविक गोदी कर्मचारी, केन्द्र व राज्य सरकारों तथा स्थानीय प्राधिकरणों के औद्योगिक संस्थान, भारतीय रेड क्रास सोसाइटी, समाज कल्याण संस्थायें (यदि ये लाभ हेतु स्थापित किए गए हैं), विश्वविद्यालय, शिक्षा संस्थायें, अस्पताल, इमारती कार्यो में ठेके के श्रमिक, भारतीय रिजर्व बैंक, औद्योगिक वित्त निगम तथा अन्य वित्तीय संस्थायें, भारतीय यूनिट ट्रस्ट, अन्तर्देशीय जल यातायात संस्थान जो अन्य किसी देश से गुजरने वाले मार्गो पर कार्य करते हैं, सरकारी क्षेत्र के किसी भी संस्थान के कर्मचारी किन्तु सरकारी क्षेत्र के उन उद्यमों को छोड़कर जो विभाग द्वारा नहीं चलाये जाते तथा निजी क्षेत्र के संस्थानों से 20 प्रतिशत की सीमा तक स्पर्धा करते है। इसके अतिरिक्त, अधिनियम ऐसे कर्मचारियों पर भी लागू नहीं होगा जिन्होनें लाभ अथवा उत्पादन बोनस की अदायगी के लिए 29 मई 1965 से पूर्व अपने मालिकों से समझौता कर लिया है। अधिनियम में उल्लिखित बोनस सूत्र 1964 के उस विशेष दिन से लागू होगा जिस दिन से संस्था के हिसाब का वर्ष आरम्भ होता है।

अधिनियम की मुख्य धारायें जिन बातों से सम्बन्धित हैं, वे हैं – (1) बोनस के लिए पात्रता, (2) न्यूनतम तथा अधिकतम बोनस की अदायगी, (3) बोनस के भुगतान के लिए समय की सीमा, (4) बोनस से कटौती, (5) कुल लाभों की तथा बोनस के रूप में वितरण योग्य उपलब्ध देशी की गणना आदि।

जहाँ तक बोनस के लिये पात्रता का सम्बन्ध है, अधिनियम की परिधि में आने वाले किसी भी संस्थान का ऐसा कोई भी कर्मचारी, अधिनियम की धाराओं के अनुसार अपने मालिक से बोनस पाने का अधिकारी होता है जिसने किसी भी लेखा वर्ष में कम से कम 30 दिन काम किया हो। यदि किसी कर्मचारी को संस्थान में जालसाजों, हिंसक व्यवहार, चोरी, दुर्विनियोग या तोड़–फोड़ करने के कारण नौकरी से पृथक कर दिया गया हो तो उसे बोनस प्राप्ति के अयोग्य माना जायेगा। जबरी छुट्टी के दिनों, मजदूरी

सहित छुट्टियों, मातृत्व कालीन छुट्टियों अथवा स्थायी व्यावसायिक चोट के कारण अनुपस्थिति के दिनों को कर्मचारी के काम करने के दिनों के रूप में ही माना जायेगा। नये स्थापित संस्थानों के कर्मचारी भी उस लेखा–वर्ष से बोनस पाने के अधिकारी होंगे जिस वर्ष कि उन्हें लाभ हो अथवा छठे लेखा वर्ष से जबकि वे अपना उत्पादित सामान बेचना आरम्भ करें, इनमें से जो भी पहले हो।

जहाँ तक बोनस का न्यूनतम तथा अधिकतम मात्रा का सम्बन्ध है, अधिनियम में 1980 में संशोधन करके इस बात की व्यवस्था कर दी गई है कि प्रत्येक श्रमिक को स्थायी रूप से मजदूरी का 8.33 प्रतिशत या 100 रुपये (60 रु0 उन कर्मचारियों के लिये जिनकी आयु 15 वर्ष से कम है), जो भी अधिक हो न्यूनतम बोनस के रूप में मिलेगा। अधिकतम बोनस श्रमिक के वेतन या मजदूरी का 20 प्रतिशत होगा। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि प्रारम्भ में न्यूनतम बोनस वेतन या मजदूरी के 4 प्रतिशत की दर से देय था परन्तु अनेक संशोधित अधिनियमों के माध्यम से यह सीमा बढ़ाकर 8 1/3 प्रतिशत या 80 रु0, (बाद में ये 80 रु0 बढ़ाकर 100 रु0 किये गये), जो भी अधिक हो, कर दी गई। 8 1/3 प्रतिशत अब न्यूनतम बोनस का स्थायी प्रतिशत बन गया है।

अधिनियम के अनुसार बोनस पाने के अधिकारी वे कर्मचारी होते हैं जो 2,500 रु0 प्रतिमाह वेतन या मजदूरी प्राप्त करते हैं। किन्तु बोनस भुगतान की गणना उसी प्रकार की जायेगी जैसे उनका वेतन या मजदूरी 1,600 रु0 प्रतिमाह हो। इस उद्देश्य के लिये वेतन या मजदूरी से आशय महँगाई भत्ते सहित उस मूल मजदूरी से है जो कर्मचारियों को देय होती है परन्तु इसमें अन्य भत्ते तथा समयोपरि कार्य का भुगतान सम्मिलित नहीं होता।

बोनस के भुगतान की समय सीमा के सम्बन्ध में अधिनियम में कहा गया है कि कर्मचारी को बोनस के रूप में देय सभी धनराशियां सामान्यतः लेखा वर्ष की समाप्ति के आठ माह के अन्दर दे दी जायेगी। बोनस के सम्बन्ध में यदि विवाद हो तो बोनस का भुगतान विवाद के निपटारे या पंचाट की घोषणा की तिथि से एक माह के अन्दर कर दिया जायेगा। परन्तु सरकार उचित एवं वैध कारणों के आधार पर मालिक द्वारा बोनस के भुगतान की अवधि को दो वर्ष तक बढ़ा सकती है।

जहाँ तक बोनस से कटौतियां करने का सम्बन्ध है, मालिक को अधिकार है कि वह किसी कर्मचारी के गलत आचरण के कारण हुई वित्तीय हानि की धनराशि को उसी लेखा वर्ष में कर्मचारी के बोनस में से काट ले। अधिनियम मालिक को यह अनुमति भी प्रदान करता है कि वह पहले ही अदा कर दिये गये रिवाजी या अन्तरिम बोनस का समायोजन अधिनियम के अनुसार दिये जाने वाले बोनस में कर सके।

कुल लाभ की गणना तथा बोनस के रूप में देय उपलब्ध अधिभार के सम्बन्ध में अधिनियम की धाराओं में उस विधि का उल्लेख किया गया है जिसके अनुसार कुल लाभ की गणना, उपलब्ध अधिभार का निर्धारण तथा ऐसी अधिभार की शुद्ध गणना हेतु

पूर्व खर्चो का निर्धारण किया जायेगा। पूर्व खर्चो में मूल्य ह्रास, प्रत्यक्ष कर, विकास निधि, पूंजी पर प्रतिफल और कार्य करने वाले साझेदारों तथा प्रोप्राइटरों का पारिश्रमिक, सम्मिलित है। अधिनियम की इन धाराओं में समय–समय पर संशोधन किया जाता रहा है।

11.8 सार संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में मजदूरी से सम्बन्धित विभिन्न विधानों के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है। इसमें बताया गया है कि मजदूरी अधिनियम, 1936 कहां पर लागू होता है। तथा इसमें समाहित कौन–कौन सी परिभाषाएं महत्वपूर्ण है तथा मजदूरी भुगतान हेतु कौन–कौन सी शर्ते आवश्यक होती है। इसी इकाई में न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के बारे में विस्तृत प्रकाश डाला गया है जिसमें मजदूरी की दिशाओं, नियमन एवं मजदूरी निर्धारण की कौन–कौन से उपबन्ध महत्वपूर्ण है। इसी अध्याय में सामान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 के बारे में प्रकाश डाला गया है। जिसमें बताया गया है कि पुरूष और स्त्री कर्मकारों को समान पारिश्रमिक देने के सम्बन्ध में नियोजक का दायित्व क्या होता है ? तथा स्त्री और पुरूष कामगारों की भर्ती और नियोजन से सम्बन्धित शर्तो का उल्लेख किया गया है। ठेका श्रम विनियमन अधिनियम के बारे में भी विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है तथा इसमें बताया गया है कि ठेका श्रमिकों को कौन–कौन से अधिकार मिलने चाहिए। इसी इकाई में बताया गया है कि बोनस का भुगतान कैसे किया जाता है तथा इसकी संगणना कैसे होती है पर विस्तृत चर्चा प्रस्तुत किया गया है।

11.9 परिभाषिक शब्दावली

Minimum Wages	न्यूनतम मजदूरी	Wharf	घाट
Collective Bargaining	सामूहिक सौदेबाजी	Deduction	कटौती
Conciliation	सुलह	Suspension	निलम्बन
Adjudication	अधिनिर्णय	Timescale	समयमान
Capacity to pay	भुगतान क्षमता	Abstract	सार
Convention	अभिसमय	Public Servent	लोक सेवक
Investigation	जांच	Presiding Officer	पीठासीन अधिकारी
Stainding	अस्थाई श्रम समिति	Equal	सामान पारिश्रमिक

Labour Committee		Remunertion	
Gratuity	उपदान	Declaration	घोषणा
Aviation	विमानन	Complaints	शिकायतें
Dock	गोदी	Inspectors	निरीक्षक

अभ्यास प्रश्न – लघु, विस्तृत

1. मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936 के विस्तार व मजदूरी की परिभाषा दीजिए।
2. मजदूरी भुगतान का दायित्व, मजदूरी–कालावधि तथा मजदूरी–भुगतान के लिए समय पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।
3. न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 की परिभाषाएँ व विस्तार के बारे में एक नोट लिखिए।
4. मजदूरी की न्यूनतम दरों का नियतन और पुनरीक्षण कैसे किया जाता है।
5. सामान्य कार्य के घंटों आदि का नियतन कैसे होता है ब्यौरा प्रस्तुत कीजिए।
6. समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 के प्रमुख उपबन्धों के बारे में लिखिए।
7. ठेका श्रम विनियमन अधिनियम, 1970 पर एक निबन्ध लिखिए।
8. बोनस भुगतान अधिनियम, 1965 क्या है ? तथा बोनस की गणना कैसे की जाती है।

11.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, इन्द्रजीत, श्रमिक विधियां, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, वर्ष, 2008, पेज, 404–446.
2. सक्सैना, आर0सी0, श्रम समस्यायें एवं समाज कल्याण के0 नाथ एण्ड कम्पनी मेरठ, वर्ष, 1997, पेज, 462–463.
3. पेमेन्ट ऑफ बेजेज एक्ट कानून लॉ प्रकाशित, जोधपुर, वर्ष, 2002, पेज, 1–48.

इकाई–12

सामाजिक सुरक्षा से सम्बन्धित विधान
Legislation Pertaining to Social Security

इकाई की रूपरेखा

12.1 परिचय
12.2 उद्देश्य
12.3 कर्मचारी क्षतिपूर्ति अधिनियम 1923
12.4 कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948
12.5 कर्मचारी भविष्य–निधि एवं प्रकीर्ण प्रावधान अधिनियम, 1952
12.6 कर्मचारी पेन्शन योजना, 1995
12.7 सार संक्षेप
12.8 पारिभाषिक शब्दावली
12.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

12.1 परिचय

श्रम और सामाजिक विधान के माध्यम से आर्थिक विकास की गति तेज की जा सकती है। इससे साधनों के अनुचित बंटवारे में भी सहायता मिलती है। श्रम–विधानों द्वारा कार्य की भौतिक दशाओं में सुधार लाकर उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। इसी तरह समुचित कार्य के घंटे, कल्याणकारी सुविधाओं, स्वास्थ्यप्रद पर्यावरण एवं उचित मजदूरी की व्यवस्था से लोगों की कार्यक्षमता बढ़ाई जा सकती है और आर्थिक प्रगति की गति तेज की जा सकती है। सामाजिक शोषण की रोकथाम, समाज के दुर्बल समूहों की रक्षा, सामाजिक समानता की स्थापना, हड़ताल, तालाबंदी तथा अन्य प्रकार की औद्योगिक कार्रवाइयों पर रोक, सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था, श्रम–प्रबंध–सहयोग को प्रोत्साहन तथा औद्योगिक विवादों को सुलझाने के लिए संयंत्र की व्यवस्था का उत्पादन, उत्पादकता और आर्थिक विकास पर प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रभाव पड़ता है। विधान द्वारा मजदूरी की मात्रा, मजदूरी में अंतर, उत्पादन से जुड़ा बोनस, भविष्य–निधि, कल्याण–निधि, मजदूरी के भुगतान, महंगाई–भत्ते की मात्रा तथा अन्य भत्तों का नियमन

कर राष्ट्रीय आय के वितरण, उत्पादन तथा लोगों के जीवन सतर में सुधार लाया जा सकता है। श्रम विधानों के माध्यम से बचत और निवेश की भी प्रोत्साहित किया जा सकता है, जिससे बेरोजगारी की समस्या के समाधान में मदद मिलेगी। जनसंख्या के नियंत्रण–संबंधी सामाजिक विधान का आर्थिक विकास से गहरा संबंध होता है। भिक्षावृत्ति, विवाह, सामाजिक कुरीतियों, नशाबंदी, सामाजिक शोषण से संबद्ध सामाजिक विधानों का भी आर्थिक समृद्धि पर प्रभाव पड़ता रहता है।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

- **कर्मचारी क्षतिपूर्ति अधिनियम 1923 की अवधारणा,आवश्यकता एवं प्रावधानों को समझ सकेगें।**
- **कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 की अवधारणा,आवश्यकता एवं प्रावधानों को समझ सकेगें।**
- **कर्मचारी भविष्य–निधि एवं प्रकीर्ण प्रावधान अधिनियम, 1952 की अवधारणा,आवश्यकता एवं प्रावधानों को समझ सकेगें।**
- **कर्मचारी पेन्शन योजना, 1995 की अवधारणा,आवश्यकता एवं प्रावधानों को समझ सकेगें।**

12.3 कर्मचारी क्षतिपूर्ति अधिनियम 1923

कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएँ

1. **अस्थायी आंशिक अशवतता–** अस्थायी आंशिक अशक्तता वह अशक्कतता है, जिससे कर्मकार की उस नियोजन में उपार्जन क्षमता अस्थायी अवधि के लिए कम हो जाती है, जिसमें वह दुर्घटना के समय लगा हुआ था। [धारा 2(1) (g)]
2. **स्थायी आंशिक अशक्तता** – स्थायी आंशिक अशक्तता वह अशक्तता है, जिससे कर्मकार की हर ऐसे नियोजन में उपार्जन–क्षमता स्थायी रूप में कम हो जाती है, जिसे वह दुर्घटना के समय करने में समर्थ था। अधिनियम की अनुसूची 1 के भाग 2 में उन क्षतियों के इस भाग में विभिन्न प्रकार के विच्छेदन तथा अन्य क्षतियों से होने वाली उपार्जन–क्षमता की प्रतिशत हानि का भी उल्लेख किया गया है।

   [धारा 2(1) (g)]
3. **अस्थायी पूर्ण अशक्तता** – अस्थायी पूर्ण अशक्तता ऐसी अशक्तता है, जो कर्मार को ऐसे सभी कामों के लिए अस्थायी तौर पर असमर्थ कर देती है, जिसे वह दुर्घटना के समय करने में समर्थ था। [धारा 2(1) (1)]

4. **स्थायी पूर्ण अशक्तता** – स्थायी पूर्ण अशक्तता वह अशक्तता है, जो कर्मकार को ऐसे सभी कामों के लिए स्थायी रूप से असमर्थ कर देती है, जिसे वह दुर्घटना के समय करने में असमर्थ था। [धारा 2(1) (I)]

अधिनियम की अनुसूची 1 के भाग 1 में उल्लखित निम्नलिखित क्षतियों से उत्पन्न अशक्तता को स्थायी पूर्ण अशक्तता समझा जाता है –

1. दोनों हाथों की हानि या उच्चतर स्थानों पर विच्छेदन;
2. एक हाथ और एक पांव की हानि;
3. टाँग या जंघा से दोहरा विच्छेदन या एक टाँग या जघा से विच्छेदन और दूसरे पाँव की हानि;
4. आँखों की रोशनी की इस मात्रा तक हानि कि कर्मकार ऐसा कोई काम करने में असमर्थ हो जाता है जिसके लिए आँखों की रोशनी आवश्यक है;
5. चेहरे की बहुत गंभीर विद्रूपता; या
6. पूर्ण बधिरता।

अधिनियम की अनुसूची 1 के भाग 2 में उन क्षतियों का उल्लेख किया गया है, जिनके परिणामस्वरूप स्थायी आंशिक अशक्तता उत्पन्न समझी जाती है। अनुसूची के इस भाग में विभिन्न प्रकार के विच्छेदनों तथा अन्य क्षतियों से होने वाली उपार्जन–क्षमता की प्रतिशत हानि का भी उल्लेख किया गया है। अगर किसी दुर्घटना के कारण कई प्रकार की आंशिक अशकताएं एक साथ उत्पन्न होती है और उनके कारण उपार्जन–क्षमता की हानि 100 प्रतिशत या इससे अधिक होती है तो उसे भी स्थायी पूर्ण अशक्तता का मामला समझा जाता है।

5. **मजदूरी** – अधिनियम के प्रयोजन के लिए 'मजदूरी' से ऐसी सुविधा या लाभ का बोध होता है, जिसे धन के रूप में प्राक्कलित किया जा सकता है, लेकिन इसके अंतर्गत निम्नलिखित सम्मिलित नही होते –
    1. यात्रा–भत्ता;
    2. यात्रा–संबंधी रियायत का मूल्य;
    3. कर्मकार के लिए नियोजक द्वारा पेंशन या भविष्य–निधि में दिया गया अंशदान; या
    4. कर्मकार के नियोजन की प्रकृति के कारण उस पर हुए विशेष खर्च के लिए उसे दी गई राशि। [धारा 2(1) (m)]
6. **आश्रित** – आश्रित से मृत कर्मकार के निम्नलिखित नातेदारों में किसी का बोध होता है –
    1. विधवा, नाबालिग धर्मज पुत्र, अविवाहिता धर्मज पुत्री या विधवा माता;
    2. अठारह वर्ष से अधिक उम्र का विकलांग पुत्र या पुत्री अगर वह कर्मकार की मृत्यु के समय उसके उपार्जनों पर पूरी तरह आश्रित था या थी;

3. कर्मकार की मृत्यु के समय उसके उपार्जनों पर पूरी तरह या आंशिक रूप से यथानिर्दिष्ट आश्रित– 1. विधुर, 2. विधवा माता को छोड़कर माता–पिता, 3. नाबालिग अधर्मज पुत्र, अविवाहिता अधर्मज पुत्री, नाबालिग विवाहिता धर्मज या अधर्मज पुत्री, या नाबालिग विधवा पुत्री चाहे वह धर्मज हो या अधर्मज, 4. नाबालिग भाई या अविवाहिता बहन या नाबालिग विधवा बहन, 5. विधवा पुत्रवधू, 6. पूर्वमृत पुत्र की नाबालिग संतान, 7. पूर्वमृत पुत्री की नाबालिग संतान अगर उस संतान के माता–पिता में से कोई भी जीवित नही है, या 8. जहां कर्मकार के माता–पिता में से कोई भी जीवित नही है, वहाँ पितामह और पितामही।

4. क्षतिपूर्ति के लिए नियोजक का दायित्व

1. **दायित्व के लिए आवश्यक शर्ते** – अगर किसी कर्मकार की नियोजन के दौरान तथा नियोजन से उत्पन्न होनेवाली दुर्घटना से व्यक्तिगत क्षति होती हो, तो उसका नियोजक क्षतिपूर्ति के लिए दायी होता है। [धारा 3(I)] इस तरह, क्षतिपूर्ति के दायी होने के लिए निम्नलिखित दशाओं का होना आवश्यक है –
   - **a.** दुर्घटना का नियोजन के दौरान होना;
   - **b.** दुर्घटना का नियोजन के कारण या उससे उत्पन्न होना; तथा
   - **c.** दुर्घटना के फलस्वरूप कर्मकार का व्यक्तिगत रूप से क्षतिग्रस्त होना।

उपर्युक्त तीनों दशाओं के बारे में प्रायः विवाद उठ खड़े होते हैं। इस कारण इनकी व्याख्या आवश्यक है।

(i) **नियोजन के दौरान दुर्घटना का होना** – नियोजन के दौरान से दुर्घटना होने के समय का बोध होता है। नियोजक दुर्घटना के लिए तभी जिम्मेदार होता है, जब वह कार्यस्थल में समुचित समय और स्थान की सीमाओं में हुई हो। साधारणतः, जब दुर्घटना कर्मकार की निर्धारित कार्यविधियों के अंदर कार्यस्थल या नियोजक के परिसर में हुई हो, तो उसे नियोजन के दौरान समझा जाता है। लेकिन, कुछ स्थितियों में यह साबित करना कठिन होता है कि दुर्घटना नियोजन के दौरान हुई है। पहला, काम में अस्थायी व्यतिरेक की अवधियों को नियोजन के दौरान तभी सम्मिलित समझा जाता है, जब व्यतिरेक नियोजक के लिए समुचित रूप से आवश्यक या आनुवांगिक हो। अगर कर्मकार अपने व्यक्तिगत काम के लिए काम छोड़ता है, तो उसे नियोजन के दौरान नहीं समझा जाता। मान्यता प्राप्त अंतरालों, जैसे विश्राम–अंतराल को नियोजन के दौरान समझा जाता है।

उपर्युक्त सभी अवधियों में अगर कर्मकार नियोजक या उसके प्रतिनिधि के आदेशानुसार काम करता है, तो उसे नियोजन के दौरान समझा जाता है।

(ii) **दुर्घटना का नियोजन से उत्पन्न होना** – अगर कोई दुर्घटना नियोजन की प्रकृति, दशाओं, दायित्वों या घटनाओं में निहित किसी खतरे के कारण होती है,

तो उसे नियोजन से उत्पन्न समझा जाता है। साधारणतः, अगर यह साबित हो जाता है कि दुर्घटना नियोजन के दौरान उत्पन्न होता हुई है, तो उसे नियोजन से उत्पन्न भी समझा जाता है। निम्नलिखित स्थितियों में दुर्घटना नियोजन से उत्पन्न नही समझी जाती –

i) अगर कर्मकार उसे सुपुर्द किए हुए काम छोड़कर कोई दूसरा काम करता है, तो उसे नियोजन से उत्पन्न नही समझा जाता। लेकिन, अगर वह नियोजक के आदेश से दूसरे कामगार का काम करता है, तो उसे नियोजन से उत्पन्न समझा जाता है;

ii) अगर कर्मकार अपने नियोजन से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से संबद्ध कार्यो को छोड़कर अपना व्यक्तिगत काम करता हो;

iii) अगर कर्मकार अपना काम असावधानी से ही नही, बल्कि उतावलेपन से करता हो;

iv) अगर कर्मकार को अन्य कामगारों के साथ बाहरी खतरों का सामना करना पड़ा हो; जैसे – बिजली गिरना भूकंप आदि;

v) अगर कर्मकार को अपनी शारीरिक दशा, जैसे मिरगी के आक्रमण के कारण दुर्घटना का सामना करना पड़ा हो;

vi) घातक दुर्घटनाओं को छोड़कर अन्य दुर्घटनाओं की स्थिति में अगर कर्मकार को उसकी मतावस्था के कारण दुर्घटना का सामना करना पड़ा हो;

vii) अगर कर्मकार को ऐसी जगह दुर्घटना का सामना करना पड़ा हो, जहाँ उसकी उपस्थिति आवश्यक नही थी; या

viii) अगर काम पर लगा कर्मकार दूसरे के पहले से दुर्घटनाग्रस्त हो जाता हो।

iii) दुर्घटना से कर्मकार का व्यक्तिगत रूप से क्षतिगस्त होना – दुर्घटना के फलस्वरूप कर्मकार का व्यक्तिगत रूप से क्षतिग्रस्त होना आवश्यक है। अगर दुर्घटना से उसे किसी तरह की व्यक्तिगत क्षति नहीं पहुंचती हो तो वह क्षतिपूर्ति होना आवश्यक है। अगर दुर्घटना से उसे किसी तरह की व्यक्तिगत क्षति नहीं पहुंचती हो तो वह क्षतिपूर्ति के लिए दावेदार नही हो सकता। अधिनियम के अंतर्गत क्षतिपूर्ति कर्मकार की मृत्यु, उसकी अस्थायी आंशिक और पूर्ण अशक्तता तथा स्थायी आंशिक और पूर्ण अशक्तता की स्थितियों में ही देय होती है।

2. क्षतिपूर्ति के लिए नियोजक के दायी नहीं होने की दशाएं– नियोजक निम्नलिखित दशाओं में क्षतिपूर्ति के लिए दायी नही होता –

i) ऐसी क्षति की स्थिति में, जिसके परिणामस्वरूप कर्मकार की अशक्तता पूर्ण या आंशिक रूप से तीन दिनों से अधिक अवधि के लिए नही होती;

ii) कर्मकार की मृत्यु या उसकी स्थायी पूर्ण अशक्तता की स्थिति को छोड़कर दुर्घटना द्वारा ऐसी क्षति के लिए, जो कर्मकार पर मदिरा या औषधियों के असर के कारण हुई हो;

iii) कर्मकार की मृत्यु या उसकी स्थायी पूर्ण अशक्तता की स्थिति को छोड़कर दुर्घटना द्वारा ऐसी क्षति के लिए, जो कर्मकार पर मदिरा या औषधियों के असर के कारण हुई हो;

iv) कर्मकार की मृत्यु या उसकी स्थायी पूर्ण अशक्तता की स्थिति को छोड़कर दुर्घटना द्वारा ऐसी क्षति के लिए जो कर्मकार को सुरक्षा के लिए उपाय या युक्ति को उसके द्वारा जान–बूझकर हटाए जाने या उसकी अवहेलना के कारण हुई हो। [धारा 3(1)]

3. **व्यावसायिक रोगों के लिए क्षतिपूर्ति का दायित्व –** अधिनियम की अनुसूची III में कई ऐसे व्यावसायिक रोगों का उल्लेख किया गया है, जिन्हें नियोजन के दौरान और नियोजन से उत्पन्न दुर्घटना के फलस्वरूप हुई क्षति समझा जाता है और नियोजक के लिए इन रोगों के शिकार कर्मकारों को क्षतिपूर्ति देना आवश्यक है। अधिनियम में इन व्यावसायिक रोगों को अग्रलिखित तीन श्रेणियों में रखा गया है –

i) अनुसूची 'III' के भाग 'A' में कुछ विशेष प्रकार के नियोजनों में हो सकने वाले व्यावसायिक रोगों का उल्लेख किया गया है। अगर कोई कर्मकार ऐसे किसी नियोजन में काम करते रहने के फलस्वरूप उससे संबद्ध व्यावसायिक रोग से ग्रस्त हो जाता है, तो उसे नियोजन के दौरान और नियोजन से उत्पन्न दुर्घटना से होने वाली क्षति समझा जाता है, और नियोजक के लिए इन रोगों से ग्रस्त कर्मकारों को क्षतिपूर्ति देना आवश्यक है।

ii) अनुसूची 'III' के भाग 'B' में कुछ ऐसे व्यावसायिक रोगों का उल्लेख किया गया है, जो कुछ विशेष नियोजनों में कर्मकार के लगातार 6 महीने से अधिक अवधि तक काम करते रहने के कारण हो सकते है। अगर कर्मकार ऐसे किसी नियोजन में लगातार 6 महीने से अधिक अवधि तक काम करने के बाद उससे संबद्ध व्यावसायिक रोग से ग्रस्त हो जाता है, तो उसे भी नियोजन के दौरान और नियोजन से उत्पन्न दुर्घटना के फलस्वरूप होने वाली क्षति समझा जाता है और उसके लिए क्षतिपूर्ण देय होती है।

iii) अनुसूची 'III' के भाग 'C' में ऐसे व्यावसायिक रोगों का उल्लेख किया गया है, जिनसे कर्मकार एक या अधिक नियोजकों के यहां केन्द्र सरकार द्वारा विहित अवधि तक उल्लिखित नियोजनों में काम कर चुकने के बाद

ग्रस्त हो सकते हैं। केन्द्र सरकार द्वारा निर्धारित अवधि से कम अवधि तक काम करने पर भी कर्मकार क्षतिपूर्ति का दावेदार हो सकता है, यदि यह सिद्ध हो जाए कि रोग नियोजन के दौरान और नियोजन से उत्पन्न हुआ है।

केन्द्र एवं राज्य सरकारों को अनुसूची अनुसूची 'III' में अन्य व्यावसायिक रोगों को जोड़ने या शामिल करने की शक्ति प्राप्त है। [धारा 3(2, 2A, 3), अनुसूची III]

4. **वे स्थितियाँ जिनमें कर्मकार को दावे का अधिकार नही होता–** यदि कर्मकार ने नियोजक या किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध किसी सिविल न्यायालय में किसी क्षति के लिए नुकसानी का कोई वाद चला दिया है, तो उसे इस अधिनियम क अंतर्गत क्षतिपूर्ति पाने का अधिकार नहीं होता। इसी तरह, अगर किसी क्षति के बारे में क्षतिपूर्ति का कोई दावा कर्मकार क्षतिपूर्ति आयुक्त के समक्ष रखा गया हो या इस अधिनियम के अनुसार क्षतिपूर्ति के लिए कर्मकार और नियोजक के बीच कोई समझौता हो चुका हो, तो कर्मकार द्वारा नुकसानी के लिए किसी न्यायालय में वाद नही चलाया जा सकता। [धारा 3(5)]

5. क्षतिपूर्ति की रकम

अधिनियम में अलग–अलग प्रकार की क्षतियों के लिए क्षतिपूर्ति की अलग–अलग रकम और दरें निर्धारित की गई है। पहले, विभिन्न मजदूरी–श्रेणियों के लिए मृत्यु, स्थायी एवं अशक्तता तथा अस्थायी अशक्तता के लिए क्षतिपूर्ति की वास्तविक राशि अधिनियम में ही विहित कर दी गई थी। लेकिन 1984 के एक संशोधन के अनुसार क्षतिपूर्ति की गणना के तरीकों का नए ढंग से उल्लेख किया गया है। विभिन्न प्रकार की क्षतियों के लिए क्षतिपूर्ति की राशि और उसके निर्धारण के तरीके निम्नांकित प्रकार है –

1. **मृत्यु की स्थिति में क्षतिपूर्ति की रकम–** दुर्घटना के फलस्वरूप होने वाले मृत्यु की स्थिति में क्षतिपूर्ति की रकम मृत कर्मकार की मजदूरी के 50 प्रतिशत को तालिका 5 में दिए गए सुसंगत कारक से गुणा करने पर आने वाली राशि या 80000 रुपये, जो भी अधिक है, होती है, अगर किसी कर्मकार की मजदूरी 4000 रुपये प्रतिमाह से अधिक है, तो क्षतिपूर्ति की राशि की गणना 4000 रुपये की मजदूरी पर ही की जाएगी। [धारा 4 अनुसूची IV]
2. **स्थायी पूर्ण अशक्तता की स्थिति में क्षतिपूर्ति की रकम–** दुर्घटना के फलस्वरूप होने वाली स्थायी पूर्ण अशक्तता की स्थिति में क्षतिपूर्ति की रकम कर्मकार की मजदूरी के 60 प्रतिशत को तालिका 5 में दिए गए सुसंगत कारक से गुणा करने पर आने वाली राशि या 90000 रुपये, जो भी अधिक है, होती है। अगर किसी कर्मकार की मजदूरी 4000 रुपये प्रतिमाह से अधिक है तो क्षतिपूर्ति की गणना 4000 रुपये की मजदूरी पर ही की जाएगी। [धारा 4 अनुसूची IV]

3. **स्थायी पूर्ण अशक्तता की स्थिति में क्षतिपूर्ति की रकम** – स्थायी आंशिक अशक्तता की स्थिति में क्षतिपूर्ति की राशि स्थायी पूर्ण अशक्तता के लिए देय राशि का वह अनुपात होती है, जिस अनुपात में कर्मकार की उपार्जन क्षमता की हानि होती है। उदाहरणार्थ, अगर किसी कर्मकार को देय स्थायी पूर्ण अशक्तता के लिए क्षतिपूर्ति की राशि 30000 रुपये है और स्थायी आंशिक अशक्तता से उसकी उपार्जन–क्षमता में 50 प्रतिशत की हानि हुई है, तो स्थायी आंशिक अशक्तता के लिए क्षतिपूर्ति की राशि 15000 रुपये होगी।
4. **अस्थायी आंशिक या पूर्ण अशक्तता के लिए क्षतिपूर्ति की रकम** – अस्थायी आंशिक या पूर्ण अशक्तता के लिए क्षतिपूर्ति की अधिकतम राशि कर्मकार की मजदूरी का 25 प्रतिशत अर्द्धमासिक भुगतान के रूप में दी जाने वाली राशि होती है। जहाँ अशक्तता 28 दिनों से अधिक अवधि के लिए होती है, वहाँ अस्थायी अशक्तता के लिए अर्द्धमासिक भुगतान दुर्घटना के दिन के सोलहवें दिन प्रारंभ हो जाता है। जहां अशक्तता 28 दिनों से कम अवधि के लिए होती है, वहाँ अर्द्धमासिक भुगतान 3 दिनों की प्रतीक्षा–अवधि की समाप्ति के बाद सोलहवें दिन प्रारंभ होता है। अर्द्धमासिक भुगतान अशक्तता की अवधि तक या पाँच वर्षो के लिए, जो भी अधिक हो, किया जाता है।

अगर कोई दुर्घटनाग्रस्त कामगार अस्थायी अशक्तता की अवधि में कुछ अर्जित करता है, तो अर्द्धमासिक भुगतान की रकम उसके द्वारा दुर्घटना के पहले और बाद में उस अवधि के लिए अर्जित मजदूरी के अंतर से अधिक नहीं हो सकती। उदाहरणार्थ, अगर कामगार के अर्द्धमासिक भुगतान की रकम 1000 रुपये है और वह दुर्घटना के बाद 400 रुपये अर्द्धमासिक मजदूरी अर्जित कर लेता है, तो उसे क्षतिपूर्ति के रूप में 60 रू0 अर्द्धमासिक से अधिक का भुगतान नहीं किया जाएगा। अगर कामगार नियोजक से क्षतिपूर्ति के रूप में कोई भुगतान या भत्ता प्राप्त करता है, तो उस राशि को अधिनियम के अंतर्गत देय क्षतिपूर्ति की रकम से काट लिया जाएगा। अगर अर्द्धमासिक भुगतान की किसी अवधि के पूरा होने के पहले ही दुर्घटनाग्रस्त कामगार की अशक्तता समाप्त हो जाती है, तो क्षतिपूर्ति की राशि उसी अनुपात में कम कर दी जाएगी।

[धारा 4]

जब किसी कर्मकार की दुर्घटना भारत के बाहर हुई हो, तो कर्मकार क्षतिपूर्ति आयुक्त क्षतिपूर्ति की राशि निर्धारित करते समय उस देश के कानून के अंतर्गत उसे मिली हुई क्षतिपूर्ति की राशि को ध्यान में रखेगा और इस अधिनियम के अधीन उसे मिलने वाली राशि में विदेश में मिली राशि को घटा देगा। [धारा 4 (IA)]

6. क्षतिपूर्ति का भुगतान और वितरण

1. क्षतिपूर्ति के भुगतान का समय – नियोजक के लिए क्षतिपूर्ति का भुगतान उस समय करना आवश्यक है, जिस समय वह देय हो जाती है। अगर नियोजक क्षतिपूर्ति

की पूरी राशि का दायित्व स्वीकार नही करता, तो वह कामगार को उस रकम का भुगतान कर देगा, जिसका दायित्व वह स्वीकार करता है। इस रकम को कामगार को दे दिया जा सकता है या उसे कर्मकार क्षतिपूर्ति आयुक्त के पास जमा किया जा सकता है। अगर नियोजक क्षतिपूर्ति की राशि का भुगतान उसके बकाए होने के एक महीने के अन्दर नहीं करता, तो आयुक्त बकाए की राशि को 12 प्रतिशत के साधारण ब्याज के साथ देने का आदेश दे सकता है। अगर आयुक्त नियोजक द्वारा क्षतिपूर्ति की राशि देने में देरी को अनुचित समझता है, तो वह उस राशि का 50 प्रतिशत जुर्माने के रूप में जमा करने का आदेश दे सकता है। ब्याज या जुर्माने की राशि कर्मकार या उसके आश्रित को देय होती है। [धारा 4A)]

2. अर्द्धमासिक भुगतान का पुनर्विलोकन और रूपान्तरण– अधिनियम के अंतर्गत किसी भी अर्द्धमासिक भुगतान को, चाहे वह किसी समझौते के अनुसार हो या आयुक्त के निदेशानुसार, नियोजक या कर्मकार के आवेदन पत्र आयुक्त द्वारा पुनर्विलोकित किया जा सकता है। पुनर्विलोकन के बाद अर्द्धमासिक भुगतान को चालू रखा जा सकता है या उसे बढ़ाया, घटाया या समाप्त किया जा सकता है। अगर कर्मकार की अस्थायी अशक्तता स्थायी अशक्तता में बदल गई हो, तो अर्द्धमासिक भुगतान को एकमुश्त राशि से बदल दिया जा सकता है, लेकिन इस एकमुश्त राशि से अर्द्धमासिक भुगतान के रूप में दी गई राशि को काट लिया जाएगा।

अर्द्धमासिक भुगतान की राशि को पक्षकारों के बीच समझौते या आयुक्त के आदेश से एकमुश्त राशि में बदला जा सकता है। अर्द्धमासिक भुगतान को एकमुश्त राशि में तभी बदला जा सकता है, जब उसका भुगतान कम–से–कम 6 महीने तक हो चुका हो। इस रूपान्तरण के लिए दोनों पक्षकारों में किसी एक द्वारा आवेदन देना आवश्यक है। [धारा 4, 7]

3. क्षतिपूर्ति का वितरण– दुर्घटना के फलस्वरूप कर्मकार की मृत्यु की स्थिति में तथा किसी स्त्री या विधिक निर्योग्यता वाले व्यक्ति को देय एकमुश्त राशि को कर्मकार क्षतिपूर्ति आयुक्त के पास जमा करना आवश्यक है। इन स्थितियों में नियोजक द्वारा सीधे भुगतान की जाने वाली राशि को क्षतिपूर्ति नही समझा जाएगा। केवल कर्मकार की मृत्यु की स्थिति में नियोजक उसके किसी आश्रित को अधिकतम तीन महीने की मजदूरी (देय क्षतिपूर्ति की राशि से अधिक नही) अग्रिम दे सकता है, लेकिन अंतिम भुगतान करते समय इस राशि को आयुक्त के आदेश पर काट दिया जाएगा। अगर भुगतान पाने वाला व्यक्ति क्षतिपूर्ति का अधिकारी नही है, तो उसे अग्रिम की राशि लौटानी पड़ेगी।

अगर मृत कामगार का कोई आश्रित नही है, तो आयुक्त के आदेश से क्षतिपूर्ति के रूप में जमा की गई राशि नियोजक को लौटा दी जाएगी। अन्य स्थितियों में आयुक्त क्षतिपूर्ति की राशि को आश्रितों के बीच या केवल एक ही आश्रित को अपने विवके से वितरित कर सकता है। [धारा 8]

इस अधिनियम के अधीन देय किसी एकमुश्त राशि या अर्द्धमासिक भुगतान को कर्मकार को छोड़कर अन्य व्यक्ति को सौंपा या हस्तांतरित नही किया जा सकता और न ही उसकी कुर्की की जा सकती है। [धारा 9]

7. कर्मकार क्षतिपूर्ति आयुक्त

राज्य सरकार कर्मकार क्षतिपूर्ति आयुक्तों को नियुक्ति कर सकती है। जहां एक से अधिक आयुक्तों की नियुक्ति की गई है, वहां उनके कार्यो का वितरण करना आवश्यक है।

आयुक्त भारतीय दंडसंहिता के अर्थ में लोकसेवक होता है। उसे सिविल प्रक्रिया–संहिता के अंतर्गत गवाही लेने, गवाहों को हाजिर करने, दस्तावेजों और वस्तुओं को पेश करने के लिए विवश करने के संबंध में सिविल न्यायालय की शक्ति प्राप्त रहती है। उसे दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत सिविल न्यायालय की शक्तियां भी प्राप्त है। आयुक्त क्षतिपूर्ति से संबद्ध किसी कानून के प्रश्न को विनिश्चित करने के लिए उच्च न्यायालय में भेज सकता है।

अगर आयुक्त के निर्णय के विरुद्ध कोई अपील उच्च न्यायालय में की गई हो, तो वह अपने पास जमा की गई राशि को उच्च न्यायालय के निर्णय होने तक रोक रख सकता है। आयुक्त अधिनियम या उसके अधीन किए गए किसी समझौते के अनुसार देय क्षतिपूर्ति की राशि को भू–राजस्व के बकाए के रूप से वसूल कर सकता है।

[धारा 19–27, 30A, 31]

8. संविदाएं और समझौते

1. संविदा करना– अगर कोई दुर्घटनाग्रस्त कामगार क्षतिपूर्ति के लिए विधिक रूप से दायी व्यक्ति की जगह किसी अन्य व्यक्ति से क्षतिपूर्ति प्राप्त करता है, तो क्षतिपूर्ति देने वाले व्यक्ति को उसके विधिक रूप से दायी व्यक्ति से क्षतिपूर्ति की राशि वसूल करने का अधिकार होता है। [धारा 12–13]

2. संविदा द्वारा त्याग – इस अधिनियम के प्रारंभ होने के पहले या बाद में किया गया कोई भी करार या समझौता, जिसके अनुसार दुर्घटना के फलस्वरूप होने वाली व्यक्तिगत क्षति के लिए नियोजक से मिलने वाली क्षतिपूर्ति का अधिकार त्याग देता है या जिससे अधिनियम के अधीन क्षतिपूर्ति का दायित्व हटाया जाता है या कम किया जाता है, तो वह वालित या शून्य या प्रभावहीन होता है। [धारा 17]

3. समझौतों का पंजीकरण – अगर क्षतिपूर्ति के रूप में देय किसी एकमुश्त रकम या अर्द्धमासिक भुगतान के बारे में कोई समझौता हुआ हो, तो नियोजक उसके ज्ञापन को आयुक्त के पास पंजीकरण के लिए भेजेगा। अगर आयुक्त इस बात से संतुष्ठ है कि समझौता असली है, तो वह उसे विहित तरीके से पंजीकृत कर देगा। जहाँ आयुक्त समझता है कि किसी स्त्री या विधिक निर्योग्यता के अधीन किसी व्यक्ति को देय रकम अपर्याप्त है या समझौता कपट, दबाव या अन्य अनुचित तरीके से कराया गया है, तो

वह उसे पंजीकृत करने से इन्कार कर देगा। पंजीकृत समझौता अधिनियम के अंतर्गत कानूनी रूप से मान्य समझा जाता है।

जहाँ नियोजक किसी समझौते के ज्ञापन को आयुक्त के पास नही भेजता है, वहाँ नियोजक अधिनियम के अधीन निर्धारित क्षतिपूर्ति की पूरी रकम के भुगतान का दायी होता है। [धारा 28–29]

12.4 कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948

कुछ महत्त्वपूर्ण परिभाषाएँ

1. समुचित सरकार– केन्द्रीय सरकार या रेलवे–प्रशासन के नियंत्रण में प्रतिष्ठानों, महापत्तनों, खानों या तेलक्षेत्रों के संबंध में समुचित सरकार केन्द्रीय सरकार तथा सभी प्रतिष्ठानों के संबंध में समुचित सरकार राज्य सरकार है। [धारा 2 (1)]

2. कर्मचारी– 'कर्मचारी' का अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है, जो अधिनियम के अधीन आने वाले किसी कारखाना या स्थापन में या उससे संबंद्ध कार्य के लिए मजदूरी पर नियोजित है। 'कर्मचारी' की परिभाषा में ऐसे व्यक्ति सम्मिलित होते हैं –

1. जो कारखाने या प्रतिष्ठान के किसी काम पर या उससे आनुषंगिक, प्रारंभिक या संबद्ध किसी काम पर प्रधान नियोजक द्वारा प्रत्यक्ष रूप से नियोजित है, चाहे वह काम कारखाने या स्थापन में या अत्यन्त किया जाता हो, या
2. जो किसी असन्न नियोजक के द्वारा या उसके माध्यम से किसी कारखाने या स्थापन में प्रधान नियोजक या उसके अभिकर्ता के पर्यवेक्षण में ऐसे काम पर नियोजित है, जो सामान्यतः उस कारखाने या स्थापन का एक भाग है या उसमें चलाए जाने वाले काम के लिए प्रारंभिक या आनुषंगिक है, या
3. जिनकी सेवाएं प्रधान नियोजक को संविदा करने वाले किसी अन्य नियोजक द्वारा भाड़े पर या अन्य प्रकार से दी गई।

'कर्मचारी' की परिभाषा में ऐसे व्यक्ति भी शामिल है, जो कारखाने या स्थापन या उसके किसी भाग, विभाग या शाखा के प्रशासन, कच्चे माल के क्रय, उत्पादित वस्तुओं के वितरण या विकास से संबद्ध किसी कार्य पर मजदूरी के लिए नियोजित हो या जो शिक्षु अधिनियम, 1961 या स्थापन के स्थायी आदेशों के अधीन रखे गए शिक्षु को छोड़कर अन्य प्रकार से शिक्षु के रूप में रखे गए हो।

'कर्मचारी' की परिभाषा के अंतर्गत निम्नलिखित शामिल नहीं होते –

1. भारतीय जलसेना, स्थलसेना या वायुसेना के सदस्य;
2. इस तरह नियोजित कोई भी व्यक्ति जिसकी मासिक मजदूरी (अतिकाल के लिए मजदूरी को छोड़कर) केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित मजदूरी से अधिक हो। पहले यह विहित मजदूरी 1600 रुपये और बाद में 3000 रुपये प्रतिमाह थी, लेकिन जनवरी, 1997 में इसे बढ़ाकर 6500 रुपये प्रतिमाह कर दिया गया। 6500 रु0 की मासिक मजदूरी सीमा आज भी लागू है। लेकिन, अगर कर्मचारी की मासिक

मजदूरी केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित मजदूरी से किसी अंशदान–अवधि के प्रारंभ होने के बाद किसी भी समय बढ़ जाती हो, तो वह उस अवधि की समाप्ति तक अधिनियम के अधीन कर्मचारी समझा जाएगा; [धारा 2 (9)]

3. ऐसे नियोजित व्यक्ति, जिनकी कुल मजदूरी (अतिकाल के लिए पारिश्रमिक को छोड़कर) केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्धारित मजदूरी से अधिक हो। [धारा 2 (9)]

3. मजदूरी – 'मजदूरी' का अभिप्राय ऐसे पारिश्रमिक से है, जो नियोजन की सेवा की अभिव्यक्त या विवक्षित शर्तो को पूरा किए जाने पर कर्मचारी को नकद दिया गया हो, या देय हो। मजदूरी के अंतर्गत अधिकृत छुट्टी की अवधि, तालाबंदी, वैध हड़ताल या कामबंदी या जबरी छुट्टी से संबंद्ध कर्मचारी को ऐसा संदाय या अन्य अतिरिक्त पारिश्रमिक जिसका भुगतान अधिकतम दो महीनों के अंतरालों पर किया जाता है, सम्मिलित होता है, लेकिन निम्नलिखित शामिल नही होते –

1. इस अधिनियम के अंतर्गत नियोजक द्वारा किसी पेंशन–निधि या भविष्य–निधि में दिया गया अंशदान;
2. यात्रा–भत्ता या यात्रा–रियायत का मूल्य;
3. नियोजित व्यक्ति को उसके नियोजन की प्रकृति के कारण उसपर पड़े विशेष व्यय को चुकाने के लिए दी गई धनराशि; या
4. सेवोन्मुक्ति पर देय उपादान।

4. कारखाना – कारखाना अपनी प्रसीमाओं सहित ऐसा परिसर है, जिसमें (1) दस या अधिक व्यक्ति काम कर रहे है या पिछले बारह महीने के किसी दिन काम कर रहे थे और जिसके किसी भी भाग में विनिर्माण प्रक्रिया शक्ति की सहायता से चलाई जा रही हो या आम तौर पर चलाई जाती हो या (2) जिसमें बीस या अधिक व्यक्ति काम कर रहे है या पिछले बारह महीने के किसी दिन काम कर रहे थे, और जिसके किसी भाग में विनिर्माण–प्रक्रिया शक्ति की सहायता के बिना चलाई जा रही हो या आम तौर से ऐसे चलाई जाती हो, लेकिन इसके अंतर्गत खान अधिनियम, 1952 के दायरे में आने वाले खान या रेलवे रनिंग शेड सम्मिलित नहीं होता। [धारा 2 (12)]

5. आसन्न या निकटतम नियोजक – आसन्न या निकटतम नियोजक का अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है, जिसने अधिनियम के दायरे में आने वाले किसी कारखाने या स्थापन के परिसर पर या प्रधान नियोजक या उसके अभिकर्ता के पर्यवेक्षण में किसी ऐसे कार्य को पूर्णतः या अंशतः करने का दायित्व अपने ऊपर ले लिया हो जो प्रधान नियोजक के कारखाने या स्थापन का सामान्यतः एक भाग है या जो उस कारखाने या स्थापन में किए जाने वाले कार्य के प्रयोजन के लिए प्रारंभिक या आनुषंगिक है। आसन्न नियोजक के अंतर्गत ऐसा व्यक्ति भी शामिल है जिसने अपने द्वारा नियुक्त व्यक्ति की सेवाओं को संविदा के अधीन अस्थायी रूप से प्रधान नियोजक को उधार या भाड़े पर दे दिया हो। [धारा 2 (13)]

6. प्रधान नियोजक– प्रधान नियोजक का अभिप्राय है –

1. किसी कारखाने के संबंध में कारखाने का स्वामी या अधिष्ठाता, तथा इसमें ऐसे स्वामी या अधिष्ठाता का प्रबंध अभिकर्ता, मृत स्वामी या अधिष्ठाता का विधिक प्रतिनिधि तथा कारखाना अधिनियम, 1948 के अंतर्गत नामित प्रबंधक भी शामिल है;
2. भारत सरकार के किसी विभाग के नियंत्रण के अधीन किसी स्थापन के संबंध में, वह प्राधिकारी जिसे ऐसी सरकार ने नियुक्त किया है, तथा जहाँ इस तरह का प्राधिकारी नियुक्त नहीं है, वहाँ विभागाध्यक्ष, तथा
3. किसी अन्य स्थापन के संबंध में स्थापन के पर्यवेक्षण और नियंत्रण के लिए दायी व्यक्ति। [धारा 2 (17)]

7. अन्य परिभाषाएं– अधिनियम के अधीन 'आश्रित', 'आंशिक अशक्तता' तथा 'पूर्ण अशक्तता' की परिभाषाएँ उसी तरह है, जिस तरह कर्मकार क्षतिपूर्ति अधिनियम के अधीन दी गई है।

अंशदान

1. सभी कर्मचारियों का बीमित होना– अधिनियम के उपबंधों के दायरे में आने वाले कारखानों या स्थापनों के सभी कर्मचारियों के लिए विहित ढंग से बीमित होना आवश्यक है। [धारा 38]

2. अंशदान की दरें उनका भुगतान– बीमाकृत कर्मचारियों के संबंध में बीमाकृत कर्मचारियों तथा उनके नियोजक दोनों को कर्मचारी राज्य बीमा निगम को अंशदान देना आवश्यक है। कर्मचारियों के अंशदान के भुगतान के लिए भी नियोजक दायी होता है। 1989 के पहले, कर्मचारी तथा उसके नियोजक द्वारा दिए जाने वाले अंशदान की दरें अधिनियम में ही निर्दिष्ट की गई थीं। लेकिन, 1989 में किए गए संशोधन के अनुसार अंशदान केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित दरों से देय होगा। केन्द्रीय सरकार ने समय–समय इन दरों को नियत किया। जनवरी, 1997 में नियोजकों के अंशदान की दर कर्मचारियों को प्रत्येक मजदूरी–अवधि में देय मजदूरी का 4.75 प्रतिशत तथा कर्मचारियों के लिए प्रत्येक मजदूरी–अवधि में मजदूरी का 1.75 प्रतिशत नियत की गई, जो आज भी लागू है। 50 रुपये या इससे कम दैनिक मजदूरी प्राप्त करने वाले कर्मचारियों को कोई अंशदान नही देना पड़ता। दिसम्बर 2006 में निगम द्वारा इस सीमा को बढ़ाकर 70 रू0 दैनिक करने का निर्णय किया गया है।

अधिनियम के अंतर्गत सभी अंशदानों के लिए संबंधित कर्मचारी की मजदूरी–अवधि को इकाई माना जाएगा। सामान्यतः प्रत्येक मजदूरी–अवधि के संबंध में दिए जाने वाले अंशदान उस मजदूरी अवधि के अंतिम दिन देय होगें। अगर कोई कर्मचारी, किसी मजदूरी–अवधि के एक भाग के लिए ही नियोजित है या जो एक ही मजदूरी–अवधि में दो या अधिक नियोजकों के अधीन नियोजित रहा है, तो उसके

अंशदान विनियम में निर्दिष्ट दिनों के लिए देय होंगे। जब प्रधान नियोजक अधिनियम के अंतर्गत कोई भी अंशदान उस दिन नही देता जिस दिन वह देय होता है, तो उसे वास्तविक भुगतान की तिथि तक के लिए 12 प्रतिशत या विनिमय द्वारा निर्दिष्ट उच्चतर दर से साधारण ब्याज देना होगा, लेकिन यह उच्चतर दर अनुसूचित बैंकों की उधार की ब्याज–दर से अधिक नही होगी। इस ब्याज को भू–राजस्व के रूप में वसूल किया जा सकता है। [धारा 39]

3. प्रथमतः अंशदान का प्रधान नियोजक द्वारा दिया जाना – प्रधान नियोजक के लिए प्रत्येक कर्मचारी के संबंध में, चाहे वह उसके द्वारा प्रत्यक्ष रूप से या आसन्न नियोजक द्वारा नियोजित हो, नियोजक तथा कर्मचारी दोनों के अंशदानों का देना जरूरी है। वह अपने द्वारा प्रत्यक्ष रूप से नियोजित कर्मचारी के अंशदान को केवल उसकी मजदूरी से काटकर वसूल कर सकता है। कर्मचारी राज्य बीमा निगम को अंशदान भेजने का खर्च प्रधान नियोजक ही वहन करेगा। [धारा 40]

4. आसन्न नियोजक से अंशदान की वसूली – प्रधान नियोजक को आसन्न नियोजक से नियोजक तथा कर्मचारी दोनों के अंशदान को वसूल करने का अधिकार है। यह वसूली आसन्न नियोजक द्वारा किसी संविदा के अधीन देय किसी राशि से काटकर या उसके लिए देय ऋण के रूप में वसूल किया जा सकता है। आसन्न नियोजक के लिए अपने सभी कर्मचारियों का रजिस्टर रखना तथा लेखा के निपटारे के पहले प्रधान नियोजक को भेजना आवश्यक है। आसन्न नियोजक अपने कर्मचारियों के अंशदान को उनकी मजदूरी से काटकर वसूल कर सकता है। [धारा 41]

5. अंशदान के भुगतान से संबद्ध सामान्य उपबंध – ऐसे कर्मचारी द्वारा अंशदान देय नही होता है, जिसकी किसी मजदूरी–अवधि में औसत दैनिक मजदूरी केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित मजदूरी से कम है। प्रधान नियोजक, नियोजक तथा कर्मचारी के अंशदान का भुगतान प्रत्येक मजदूरी–अवधि के लिए करेगा जिसके संबंध में कर्मचारी को पूर्ण या आंशिक रूप से मजदूरी देय होती है। [धारा 42]

6. अंशदान के भुगतान का तरीका– अंशदानों के भुगतान के तरीके तथा उनके संग्रहण से संबंधित या आनुषंगिक विषयों के संबंध में विनियम बनाने की शक्ति कर्मचारी राज्य बीमा निगम को प्राप्त है। [धारा 43]

7. नियोजकों द्वारा विवरणी का भेजा जाना तथा रजिस्टर का रखा जाना– प्रत्येक प्रधान तथा आसन्न नियोजक के लिए निगम या उसके द्वारा निदेशित अधिकारी के पास विहित रूप में विवरणी भेजना आवश्यक है, जिसमें संबंधित कारखाने या स्थापन में नियोजित व्यक्तियों के बारे में विनियम द्वारा निर्दिष्ट ब्योरे होंगे। साथ ही, प्रत्येक प्रधान और आसन्न नियोजक के लिए अपने कारखाने या स्थापन के संबंध में विहित रजिस्टर या रिकॉर्ड रखना भी आवश्यक है। [धारा 44]

कर्मचारी राज्य बीमा निगम द्वारा निरीक्षकों और निगम द्वारा अधिकृत अन्य अधिकारियों को नियोजक द्वारा भेजी गई विवरणी या रजिस्टर या रिकॉर्ड में सम्मिलित ब्योरे की तथ्यता की जाँच करने से संबद्ध महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ दी गई है। [धारा 45]

8. कुछ मामलों में अंशदान का निर्धारण– अगर किसी कारखाने या स्थापन के संबंध में कोई प्रणाली विवरणी, विशिष्टियाँ, रजिस्टर या रिकॉर्ड प्रस्तुत नहीं किए गए हों या अगर निरीक्षक या अन्य अधिकृत अधिकारी को प्रधान या आसन्न नियोजक या अन्य प्रभारी व्यक्ति द्वारा अपने कर्तव्यों के पालन के सिलसिलें में किसी भी तरह रोका गया हो, तो निगम आदेश द्वारा उस कारखाने या स्थापन के कर्मचारियों के संबंध में देय अंशदान की राशि निर्धारित कर सकता है। लेकिन, ऐसा आदेश निर्गत करने के पहले निगम कारखाने या स्थापन के प्रधान या आसन्न नियोजक या अन्य प्रभारी व्यक्ति को सुनवाई के लिए युक्तियुक्त अवसर देगा। [धारा 45 A]

9. अंशदानों की वसूली– अधिनियम के अंतर्गत देय किसी भी अंशदान को भू–राजस्व के बकाए की तरह वसूल किया जा सकता है। [धारा 45 B]

10. अन्य उपबंध– अधिनियम में अंशदानों की वसूली, रिकॉवरी अधिकारी के पास प्रमाणपत्र के निर्गत किए जाने, प्रमाणपत्र की वैधता, कार्यवाही के संशोधन या उसकी वापसी, वसूली के अन्य तरीकों आदि से संबद्ध उपबंध विस्तार से दिए गए है। [धारा 45 C-45]

11. अंशदान–अवधि तथा हितलाभ अवधि– अप्रैल से 30 सितंबर की 'अंशदान–अवधि' के लिए संगत 'हितलाभ–अवधि' अगले वर्ष 1 जनवरी से 30 जून, तथा 1 अक्टूबर से अगले वर्ष 31 मार्च की 'अंशदान–अवधि' के लिए संगत 'हितलाभ–अवधि' 1 जुलाई से 31 दिसम्बर होगी।

4. हितलाभ

अधिनियम के अंतर्गत निम्नलिखित हितलाभ उपलब्ध हैं –

1. बीमारी–हितलाभ
2. प्रसूति–हितलाभ
3. अंशक्तता–हितलाभ
4. आश्रित–हितलाभ
5. चिकित्सा–हितलाभ
6. अंत्येष्टि व्यय
7. बेरोजगारी भत्ता

उपर्युक्त हितलाभों में चिकित्सा–हितलाभ को छोड़कर अन्य सभी हितलाभ नकद दिए जाते हैं। बीमारी–हितलाभ, प्रसूति–हितलाभ और चिकित्सा–हितलाभ के लिए निर्धारित अवधि तक अंशदान दे चुकने की शर्त पूरी करना आवश्यक है, लेकिन

अंशक्तता–हितलाभ, आश्रित–हितलाभ तथा अंत्येष्टि खर्च के लिए अंशदान दे चुकना जरूरी नहीं है।

तालिका

कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 के अधीन विभिन्न मजदूरी–समूहों के लिए दैनिक मानक हितलाभ–दर

क्र.संख्या	औसत दैनिक मजदूरी	तत्संबंधी दैनिक हितलाभ दर
1	28 रु0 से कम	14 रु0
2	28 रु0 एवं अधिक परन्तु 32 रु0 से कम	16 रु0
3	32 रु0 एवं अधिक परन्तु 36 रु0 से कम	18 रु0
4	36 रु0 एवं अधिक परन्तु 40 रु0 से कम	20 रु0
5	40 रु0 एवं अधिक परन्तु 48 रु0 से कम	24 रु0
6	48 रु0 एवं अधिक परन्तु 56 रु0 से कम	28 रु0
7	56 रु0 एवं अधिक परन्तु 60 रु0 से कम	30 रु0
8	60 रु0 एवं अधिक परन्तु 64 रु0 से कम	32 रु0
9	64 रु0 एवं अधिक परन्तु 72 रु0 से कम	36 रु0
10	72 रु0 एवं अधिक परन्तु 76 रु0 से कम	38 रु0
11	76 रु0 एवं अधिक परन्तु 80 रु0 से कम	40 रु0
12	80 रु0 एवं अधिक परन्तु 88 रु0 से कम	44 रु0
13	88 रु0 एवं अधिक परन्तु 96 रु0 से कम	48 रु0
14	96 रु0 एवं अधिक परन्तु 106 रु0 से कम	53 रु0
15	106 रु0 एवं अधिक परन्तु 116 रु0 से कम	58 रु0
16	116 रु0 एवं अधिक परन्तु 126 रु0 से कम	63 रु0
17	126 रु0 एवं अधिक परन्तु 136 रु0 से कम	68 रु0
18	136 रु0 एवं अधिक परन्तु 146 रु0 से कम	73 रु0
19	146 रु0 एवं अधिक परन्तु 156 रु0 से कम	78 रु0
20	156 रु0 एवं अधिक परन्तु 166 रु0 से कम	83 रु0
21	166 रु0 एवं अधिक परन्तु 176 रु0 से कम	88 रु0
22	176 रु0 एवं अधिक परन्तु 186 रु0 से कम	93 रु0
23	186 रु0 एवं अधिक परन्तु 196 रु0 से कम	98 रु0
24	196 रु0 एवं अधिक परन्तु 206 रु0 से कम	103 रु0
25	206 रु0 एवं अधिक परन्तु 216 रु0 से कम	108 रु0
26	216 रु0 एवं अधिक परन्तु 226 रु0 से कम	113 रु0

27	226 रु0 एवं अधिक परन्तु 236 रु0 से कम	118 रु0
28	236 रु0 एवं अधिक परन्तु 250 रु0 से कम	125 रु0
29	250 रु0 एवं अधिक परन्तु 260 रु0 से कम	130 रु0
30	260 रु0 एवं अधिक परन्तु 270 रु0 से कम	135 रु0
31	270 रु0 एवं अधिक परन्तु 280 रु0 से कम	140 रु0
32	280 रु0 एवं अधिक परन्तु 290 रु0 से कम	145 रु0
33	290 रु0 एवं अधिक परन्तु 300 रु0 से कम	150 रु0
34	300 रु0 एवं अधिक परन्तु 310 रु0 से कम	155 रु0
35	310 रु0 एवं अधिक परन्तु 320 रु0 से कम	160 रु0
36	320 रु0 एवं अधिक परन्तु 330 रु0 से कम	165 रु0
37	330 रु0 एवं अधिक परन्तु 340 रु0 से कम	170 रु0
38	340 रु0 एवं अधिक परन्तु 350 रु0 से कम	175 रु0
39	350 रु0 एवं अधिक परन्तु 360 रु0 से कम	180 रु0
40	360 रु0 एवं अधिक परन्तु 370 रु0 से कम	185 रु0
41	370 रु0 एवं अधिक परन्तु 380 रु0 से कम	190 रु0
42	380 रु0 एवं अधिक	195 रु0

*अथवा पूर्ण औसत मजदूरी, जो भी कम हो।

1989 के पहले विभिन्न हितलाभों के लिए योग्यता की शर्ते, उनकी दरें, उनकी उपलभ्यता की अवधि आदि अधिनियम में ही निर्धारित थीं, लेकिन 1989 के संशोधन के अनुसार इन सभी के निर्धारण की शक्ति केन्द्रीय सरकार को दी गई। केन्द्रीय सरकार द्वारा नियत की गई विभिन्न मजदूरी–श्रेणियों के लिए वर्तमान दैनिक मानक हितलाभ–दरें तालिका में उल्लिखित है।

अधिनियम के अंतर्गत उपलब्ध विभिन्न हितलाभों की प्रकृति, हितलाभ की दरों और अवधियों तथा उनके लिए योग्यता की शर्तो की विवेचना निम्नलिखित है।

1. बीमारी–हितलाभ – बीमारी हितलाभ बीमाकृत कर्मचारी को बीमारी की अवस्था में आवधिक नकद भुगतान के रूप में सम्यक् रूप से नियुक्त या कर्मचारी राज्य बीमा निगम द्वारा निर्दिष्ट योग्यता और अनुभव वाले व्यक्ति द्वारा प्रमाणित किए जाने पर दिया जाता है। बीमारी हितलाभ के लिए पात्रता की शर्ते, उसकी दर तथा अवधि केन्द्रीय नियमों में निर्दिष्ट की गई है।

1. **अंशदायनी शर्ते–** किसी हितलाभ–अवधि में बीमारी हितलाभ की पात्रता के लिए बीमाकृत कर्मचारी द्वारा तदनुरूपी अंशदान अवधि में न्यूनतम 78 दिनों के लिए अंशदान दे चुकना आवश्यक है। नए नियुक्त कर्मचारी के लिए, जिसकी अंशदान अवधि 156 दिनों में कम है, बीमारी–हितलाभ की पात्रता के लिए ऐसी

अंशदान–अवधि में न्यूनतम उपलब्ध काम के दिनों के आधे के लिए अंशदान दे चुकना जरूरी है।

2. **बीमारी–हितलाभ की दर–** बीमारी हितलाभ बीमाकृत कर्मचारी की मजदूरी से सुसंगत दैनिक मानक हितलाभ दर से दिया जाता है। दिसम्बर 2006 में निगम द्वारा इसे बढ़ाकर मानक हितलाभ दर से 20 प्रतिशत अधिक करने का निर्णय किया गया है।
3. **बीमारी–हितलाभ की अवधि–** बीमारी हितलाभ किन्हीं दो लगातार हितलाभ–अवधियों, अर्थात एक वर्ष में अधिकतम 91 दिनों के लिए देय होता है।
4. **बीमारी–हितलाभ प्राप्त करने वालों के लिए शर्तो का पालन–** बीमारी–हितलाभ पाने वालों के लिए निम्नलिखित शर्तो का पालन करना आवश्यक है –
    1. अधिनियम के अधीन स्थापित अस्पताल, औषधालय, क्लिनिक या अन्य संस्था या चिकित्सकीय उपचार के लिए रहना तथा चिकित्सा–अधिकारी या चिकित्सा–परिचारक द्वारा दिए गए निर्देशों का पालन करना;
    2. उपचार की अवधि में ऐसा कोई काम नहीं करना, जिससे स्वास्थ्य–लाभ में बाधा पहुंचे;
    3. चिकित्सा–अधिकारी, चिकित्सा–परिचारक या अन्य अधिकृत प्राधिकारी की अनुमति के बिना उस क्षेत्र को नहीं छोड़ना, जहाँ उपचार चल रहा हो; तथा
    4. कर्मचारी राज्य बीमा निगम द्वारा नियुक्त चिकित्सा–अधिकारी या अन्य अधिकृत व्यक्ति द्वारा परीक्षा के लिए तैयार रहना।
5. **बीमारी–हितलाभ देय नहीं होने की दशाएं–** निम्नलिखित दशाओं में बीमारी–हितलाभ देय नही होता –
    1. बीमारी–हितलाभ ऐसे दिन के लिए देय नहीं होता जिस दिन कर्मचारी काम पर लगा हो, या छुट्टी या हड़ताल पर हो, जिसके लिए उसे मजदूरी मिलती है। धारा 63, लेकिन, हड़ताल के दिनों के लिए उसे बीमारी–हितलाभ मिल सकता है अगर 1. वह निगम के अस्पताल या अन्य मान्यता प्राप्त किसी अस्पताल मं उपचार के लिए भरती हो या अंतरंग रोगी के रूप में उपस्थित रहा हो, या 2. वह किसी निर्दिष्ट बीमारी के लिए विस्तारित बीमारी हितलाभ प्राप्त करने का अधिकारी हो, या 3. हड़ताल आरंभ होने के शीघ्र पहले बीमारी–हितलाभ प्राप्त कर रहा हो।
    2. बीमारी–हितलाभ आरंभिक 2 दिनों की प्रतीक्षा अवधि के लिए भी सामान्यतः नहीं दिया जाता। लेकिन, अगर बीमाकृत कर्मचारी को पिछले बीमारी दौर से 15 दिनों के अंदर पुनः बीमार प्रमाणित किया जाता है

जिसके लिए बीमारी–हितलाभ का भुगतान किया गया था, तो वह 2 दिनों की प्रतीक्षा अवधि के लिए भी भुगतान का अधिकारी हो जाता है।

वर्धित बीमारी–हितलाभ– वर्धित बीमारी–हितलाभ परिवार कल्याण के लिए नसबंदी या नलबंदी ऑपरेशन कराने के लिए दिया जाता है। इस हितलाभ के लिए भी अंशदायनी शर्ते वे ही है जो बीमारी हितलाभ के लिए है। वर्धित बीमारी–हितलाभ की दैनिक दर मानक हितलाभ दर की दुगुनी है। नसबंदी के लिए वर्धित हितलाभ 7 दिनों के लिए तथा नलबंदी के लिए 14 दिनों के लिए देय होता है। ऑपरेशन के बाद जटिलताएं होने या बीमार पड़ जाने की स्थिति में उपर्युक्त अवधियाँ बढ़ाई जा सकती है। वर्धित बीमारी–हितलाभ अनुज्ञेय बीमारी–हितलाभ अर्थात 91 दिनों के अतिरिक्त होता है।

विस्तारित बीमारी–हितलाभ– विस्तारित बीमारी–हितलाभ कुछ निर्दिष्ट बीमारियों से पीड़ित बीमाकृत कर्मचारियों को देय होता है। इस हितलाभ के हकदार होने के लिए बीमाकृत व्यक्ति का 2 वर्षो तक लगातार बीमायोग्य रोजगार में रह चुकना तथा उसके द्वारा पिछले 4 अंशदान–अवधियों में कम–से–कम 156 दिनों के लिए अंशदान का भुगतान कर चुकना आवश्यक है।

विस्तारित बीमारी–हितलाभ पहले चरण में सामान्य बीमारी–हितलाभ की 91 दिनों की समाप्ति के बाद 124 के 309 दिनों के लिए देय होता है, लेकिन दीर्घकालिक मामलों में सक्षम प्राधिकारी की सिफारिश पर इसे 2 वर्षो तक बढ़ाया जा सकता है।

2. प्रसूति–हितलाभ– प्रसूति–हितलाभ बीमाकृत स्त्री–श्रमिक को प्रसवावस्था, गर्भपात तथा गर्भावस्था या प्रसवावस्था, बच्चे के अकाल–जन्म, या गर्भपात के कारण होने वाली बीमारी के लिए विहित प्राधिकारों के प्रमाणन पर आवधिक भुगतान के रूप में दिया जाता है। [धारा 46 1(b)]

किसी हितलाभ–अवधि में कोई बीमाकृत स्त्री–श्रमिक प्रसूति–हितलाभ की अधिकारिणी तभी होती है, जब उसने पूर्ववर्ती दो अंशदान–अवधियों में कम–से–कम 70 दिनों के लिए अंशदान दे दिया हो।

3. अशक्तता–हितलाभ– अशक्तता–हितलाभ बीमाकृत कर्मचारी को नियोजन के दौरान तथा नियोजन से उत्पन्न दुर्घटना से होने वाली अशक्तता के लिए आवधिक भुगतान के रूप में दिया जाता है। अशक्तता–हितलाभ के दावेदार को विनियमों के अधीन निर्दिष्ट प्राधिकारी द्वारा दिया गया अशक्तता का प्रमाण प्रस्तुत करना आवश्यक है। [धारा 46 (IC)]

विभिन्न प्रकार की अशक्तताओं के लिए अशक्तता–हितलाभ निम्नांकित प्रकार से दिया जाता है–

1. अस्थायी अशक्तता के लिए हितलाभ पूर्ण दर से 3 दिनां के प्रतीक्षा काल के बाद अशक्तता की अवधि तक दिया जाता है।

2. स्थायी आंशिक अशक्तता के लिए हितलाभ पूर्ण दर कावह प्रतिशत होता है, जिस प्रतिशत से दुर्घटना के फलस्वरूप कर्मचारी की अर्जन–शक्ति की हानि हुई हो। विभिन्न प्रकार की स्थायी आंशिक अशक्तताओं की सूची अधिनियम की दूसरी अनुसूची में दी गई है। जहाँ एक ही दुर्घटना के कारण कई प्रकार की स्थायी आंशिक अशक्तताएं एक साथ होती है, तो उन्हें जोड़ दिया जाता है, लेकिन किसी भी स्थिति में स्थायी आंशिक अशक्तता के लिए हितलाभ पूर्ण दर से अधिक नहीं हो सकता। स्थायी आंशिक अशक्तता के लिए हितलाभ जीवन भर मिलता है।
3. स्थायी पूर्ण अशक्तता के लिए हितलाभ पूर्ण दर से जीवन पर्वत मिलता है।

विभिन्न प्रकार की अस्थायी तथा स्थायी अशक्तताओं के लिए हितलाभों की दरें, उनकी अवधि तथा उनको देने के लिए शर्ते निर्धारित करने की शक्ति केन्द्र सरकार को प्राप्त है। (धारा 51)

अशक्तता हितलाभ पाने वालों के लिए भी उन्हीं शर्तो का पालन करना आवश्यक है, जो बीमारी–हितलाभ पाने वालों के साथ लागू है। (धारा 62)

2. अशक्तता–हितलाभ के संबद्ध कुछ अन्य उपबंध

1. इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए नियोजन के दौरान होने वाली दुर्घटना को साधारणतः नियोजन से उत्पन्न भी समझा जाता है। (धारा 51 A)
2. अगर कोई दुर्घटना किसी कानून के उपबंधों या नियोजक द्वारा दिए गए निर्देशों के उल्लंघन या उसके अपने मन से काम करने के कारण हुई हो, तो उसे भी नियोजन के दौरान और नियोजन से उत्पन्न समझा जाएगा, बशर्ते कि वह दुर्घटना अन्यथा नियोजन के दौरान और उससे उत्पन्न हो तथा कर्मकार नियोजक के व्यापार या व्यवसाय के लिए काम कर रहा हो। (धारा 51 B)
3. अगर बीमाकृत कर्मकार नियोजक के अभिव्यक्त या विवक्षित आदेश के अनुसार अपने काम पर आने तथा वहां से जाने के लिए किसी वाहन के प्रयोग करते समय दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है, तो उसे भी नियोजन के दौरान और नियोजन से उत्पन्न समझा जाएगा, यदि (क) दुर्घटना अन्यथा नियोजन के दौरान और उससे उत्पन्न हो तथा (ख) दुर्घटना के समय वाहन नियोजक या उसके द्वारा अधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा या उसके बदले में चलाया जा रहा हो और (ग) वह सामान्य सार्वजनिक यातायात के रूप में नहीं चलाया जा रहा हो। (धारा 51 C)
4. अगर दुर्घटना नियोजक के परिसर में या उसके समीप आपातकालीन स्थिति में किसी व्यक्ति या संपत्ति की रक्षा करने के सिलसिले में होती है, तो उसे भी नियोजन के दौरान और नियोजन से उत्पन्न समझा जाएगा। (धारा 51 D)

3. अशक्तता से संबद्ध प्रश्नों का निर्धारण– किसी दुर्घटना के फलस्वरूप स्थायी अशक्तता के होने या नहीं होने, अर्जन–क्षमता की क्षति की मात्रा आदि का निर्धारण

विनियमों के अधीन नियुक्त चिकित्सा–बोर्ड द्वारा किया जाएगा। अगर कोई बीमाकृत व्यक्ति चिकित्सा–बोर्ड के निर्णय से संतुष्ठ नहीं है, तो वह चिकित्सा–अपील–अधिकरण या सीधे कर्मचारी, बीमा न्यायालय के पास अपील कर सकता है, लेकिन अगर बीमाकृत व्यक्ति ने चिकित्सा बोर्ड के निर्णय के आधार पर अशक्तता हितलाभ के रूपान्तरण के लिए आवेदन दिया हो तथा ऐसे हितलाभ का रूपान्तरित मूल्य प्राप्त कर लिया हो, तो चिकित्सा अपील अधिकरण या कर्मचारी–बीमा–न्यायालय के पास अपील नहीं की जा सकती। अशक्तता–हितलाभ से संबद्ध निर्णयों को समय–समय पुनर्विलोकित किया जा सकता है। (धारा 54, 54A, 55)

4. आश्रित–हितलाभ– आश्रित–हितलाभ नियोजन के दौरान और उससे उत्पन्न दुर्घटना के फलस्वरूप बीमाकृत कर्मचारी की मृत्यु की स्थिति में उसके आश्रितों को दिया जाता है। आश्रित–हितलाभ भी आवधिक भुगतान के रूप में दिया जाता है। [धारा 46I(d)]

आश्रित–हितलाभ की पूर्ण दर तालिका में उल्लिखित मानक हितलाभ दर से 40 प्रतिशत अधिक होती है। आश्रित–हितलाभ मृत कर्मकार के आश्रितों को निम्नांकित प्रकार से दिया जाता है –

1. मृत कर्मकार की विधवा को आश्रित–हितलाभ जीवनभर या उसके फिर से विवाहित होने तक पूर्ण दर के 3/5 भाग की दर से दिया जाता है। मृत कर्मकार की दो या अधिक विधवाएं होने पर हितलाभ उनके बीच बराबर–बराबर बांट दिया जाएगा।
2. मृत कर्मकार के प्रत्येक धर्मज या दत्तक पुत्र को आश्रित–हितलाभ उसके 18 वर्ष के होने तक पूर्ण दर के 2/3 भाग की दर से दिया जाता है। धर्मज पुत्र के अपंग होने की स्थिति में आश्रित–हितलाभ उसकी अपंगता तक देय होता है।
3. मृत कर्मकार की धर्मजा या दत्तक पुत्री को आश्रित–हितलाभ उसके 18 वर्ष के होने या विवाह होने तक, जो भी पहले हो, पूर्ण दर के 2/5 भाग की दर से दिया जाता है। अपंग पुत्री को आश्रित–हितलाभ उसकी अपंगता की अवधि तक देय होता है।

अगर विभिन्न आश्रितों को देय आश्रित–हितलाभ पूर्ण दर से अधिक हो जाता है, तो उन्हें देय हितलाभ को इस तरह बांट दिया जाएगा कि आश्रित हितलाभ कुल मिलाकर पूर्ण दर से अधिक नही हो।

अगर मृत कर्मकार को कोई विधवा पत्नी या धर्मज या दत्तक संतान नही है, तो आश्रित–हितलाभ को निम्नलिखित आश्रितों के बीच बांट दिया जाएगा –

1. माता–पिता या पितामह–पितामही को आश्रित–हितलाभ पूर्ण दर के 3/10 भाग की दर से उसके जीवन भर दिया जाएगा। उनकी संख्या एक से अधिक होने पर हितलाभ को उनके बीच बराबर–बराबर बांट दिया जाएगा।

2. अन्य पुरुष आश्रित को आश्रित–हितलाभ पूर्ण दर 2/10 भाग की दर से उसके 18 वर्ष होने तक दिया जाएगा।
3. अन्य स्त्री आश्रिता को आश्रित–हितलाभ पूर्ण दर क 2/10 भाग की दर से उसके 18 वर्ष के होने या उसके विवाहित हो जाने तक, जो भी पहले ही दिया जाएगा। (धारा 52)

5. चिकित्सा–हितलाभ की प्रकृति– चिकित्सा–हितलाभ बीमित कर्मचारी या उसके परिवार के सदस्य को (अब इसे उसके परिवार को भी उपलब्ध कराया गया है) उस दशा में देय होता है जब उसे चिकित्सकीय उपचार तथा परिचर्या की आवश्यकता हो। चिकित्सा–हितलाभ किसी अस्पताल, औषधालय, क्लिनिक या अन्य संस्था में बाह्य रोगी उपचार या बीमाकृत कर्मचारी के घर जाकर देखने या किसी अस्पताल या अन्य संस्था में अंतःरोगी उपचार के रूप में दिया जा सकता है।

अगर कोई कर्मचारी स्थायी अशक्तता के फलस्वरूप बीमा–योग्य नहीं रह गया हो, तो भी उसे अंशदान के भुगतान तथा केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित अन्य शर्तो को पूरी करने पर चिकित्सा–हितलाभ उस समय तक दिया जा सकता है, जब तक वह अशक्तता के नहीं रहने पर सेवानिवृति की आयु प्राप्त नहीं कर लेता। सेवानिवृति की आयु प्राप्त कर लेने पर भी बीमाकृत कर्मचारी तथा पति–पत्नी को अंशदान के भुगतान और केंद्रीय सरकार द्वारा विहित शर्ते पूरी करने पर चिकित्सा–हितलाभ उपलब्ध हो सकता है। (धारा 46, 56)

2. चिकित्सा–हितलाभ का पैमाना– बीमाकृत कर्मचारियों तथा उनके परिवार के सदस्यों को चिकित्सा–हितलाभ राज्य सरकार या कर्मचारी राज्य बीमा निगम द्वारा निर्धारित प्रकार या पैमाने के अनुसार उपलब्ध होगा। बीमाकृत कर्मचारी या उनके परिवार के सदस्य विनियमों के अधीन व्यवस्थित अस्पतालों, औषधालयों, क्लिनिकों या अन्य संस्थाओं में उपलब्ध चिकित्सकीय उपचार को छोड़कर अन्य प्रकार की सुविधा के हकदार नहीं होते। विनियमों के प्रावधानों को छोड़कर अन्य प्रकार से कर्मचारी राज्य बीमा निगम के पास चिकित्सा पर होने वाले खर्च की प्रतिपूर्ति का दावा नहीं किया जा सकता। (धारा 57)

3. राज्य सरकार द्वारा चिकित्सकीय उपचार की व्यवस्था– अधिनियम के अंतर्गत चिकित्सकीय सेवाओं की व्यवस्था करना राज्य सरकार का दायित्व है। राज्य सरकार निगम की स्वीकृति से निजी चिकित्सकीय व्यवसायियों के क्लिनिक में भी कर्मचारियों के चिकित्सकीय उपचार की व्यवस्था कर सकती है।

ज्हाँ चिकित्सा–हितलाभ पर होने वाला व्यय अखिल भारतीय औसत से अधिक है, तो व्यय की अतिरिक्त राशि का भार निगम तथा राज्य सरकार के बीच समझौते द्वारा नियत किए गए अनुपात में राज्य सरकार को वहन करना पड़ता है। निगम राज्य सरकार पर पड़े भार को छोड़ भी सकता है।

कर्मचारी राज्य बीमा निगम राज्य सरकार के साथ चिकित्सकीय उपचार की प्रकृति और मात्रा के बारे में भी समझौता कर सकता है। अगर इस संबंध में दोनों के बीच कोई समझौता नहीं हुआ हो, तो उसके दायित्वों का निर्धारण विवाचक द्वारा होगा। विवाचक के लिए उच्च न्यायालय के न्यायाधीश रह चुकने या रहने की योग्यता रखना आवश्यक है। विवाचक की नियुक्ति उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश द्वारा होती है। (धारा 58)

4. कर्मचारी राज्य बीमा निगम द्वारा अस्पताल आदि की स्थापना– निगम स्वयं भी चिकित्सकीय हितलाभ का दायित्व ले सकता है और व्यय के भार को वहन करने के संबंध में राज्य सरकार से समझौता कर सकता है। (धारा 59, 59A)

6. अंत्येष्टि खर्च – अंत्येष्टि खर्च बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु की स्थिति में उसके दाह–संस्कार के लिए दी जाती है। अंत्येष्टि खर्च मृत कर्मचारी के परिवार के सबसे बड़े जीवित सदस्य या वास्तव में दाह–संस्कार करने वाले व्यक्ति को दिया जाता है। अगर मृत कर्मचारी का कोई परिवार नही है या अगर वह अपने परिवार के साथ नहीं रहता था, तो वह उस व्यक्ति को देय होता है, जिसने उसके दाह–संस्कार पर वास्तव में खर्च किया हे। अंत्येष्टि खर्च की अधिकतम राशि केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित राशि होती है। वर्तमान समय में यह 2500 रुपये है। दिसम्बर 2006 में निगम द्वारा इसे बढ़ाकर 3000 रु0 करने का निर्णय किया गया है। अंत्येष्टि खर्च के लिए दावा साधारणतः कर्मचारी की मृत्यु के तीन महीने के अंदर करना आवश्यक है, लेकिन इस अवधि को निगम या उसके द्वारा अधिकृत प्राधिकारी बढ़ा सकता है। [धारा 46(1, f)]

7. बेरोजगारी भत्ता– अधिनियम के अधीन विहित स्थितियों में बेरोजगारी भत्ता देने की योजना राजीव गाँधी श्रमिक कल्याण योजना के नाम से 1 अप्रैल, 2005 को शुरू की गई। योजना के अधीन अधिनियम के दायरे में आने वाले कारखानों या स्थापनों की बंदी, कर्मचारी की छंटनी या गैर–रोजगार चोट से उत्पन्न स्थायी अशक्तता के कारण बीमित कर्मचारी के अनैच्छिक रूप से बीमा–योग्य नियोजन से बाहर हो जाने पर, उसे निर्धारित अवधि के लिए बेरोजगारी–भत्ता देने की अवस्था है। योजना की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित है –

(क) पात्रता की शर्ते– 'राजीव गाँधी श्रमिक कल्याण योजना' के अंतर्गत बेरोजगारी–भत्ता के लिए पात्रता की शर्ते निम्नलिखित है–

1. कारखाना/स्थापन की बंदी, छँटनी या गैर–रोजगार चोट से उत्पन्न अशक्तता की तिथि को कर्मचारी का अधिनियम के अधीन बीमाकृत रह चुकना आवश्यक है।
2. रोजगार की हानि के पूर्ववर्ती 5 वर्षो की अवधि के लिए उसके द्वारा अधिनियम के अधीन अंशदान दे चुका गया हो।

3. बीमाकृत व्यक्ति बेरोजगारी की तिथि से शीघ्र पहले की चार अंशदान–अवधियों की तदनुरूपी हितलाभ–अवधियों में बीमारी–हितलाभ का हकदार रह चुका हो।
4. बेरोजगारी भत्ता उस दिन देय नहीं होगा जिस दिन उसे अन्यत्र रोजगार मिल जाता है।
5. 1 अप्रैल, 2005 को अथवा उसके बाद बेरोजगार बीमाकृत व्यक्ति ही बेरोजगारी भत्ता का हकदार हो सकता है।

(ख) बेरोजगारी–भत्ता की दर, अवधि और भुगतान– 1. बेरोजगारी भत्ता की दैनिक दर बेरोजगारी की तिथि से पूर्ववर्ती पिछली चार अंशदान–अवधियों के दौरान बीमाकृत व्यक्ति की औसत दैनिक मजदूरी के तदनुरूपी 'मानक हितलाभ दर' है। 2. बेरोजगारी–भत्ता कर्मचारी के संपूर्ण बीमा–योग्य नियोजन के दौरान अधिकतम 6 महीने के लिए देय होता है। 3. बेरोजगारी–भत्ता का भुगतान एक दौर से या विभिन्न दौरों में किया जा सकता है, बशर्ते की ऐसा प्रत्येक दौर एक महीने से कम नही हो। 4. बेरोजगारी–भत्ते को उसी अवधि के लिए बीमारी–हितलाभ, प्रसूति–हितलाभ या अस्थायी अशक्तता के लिए अशक्तता–हितलाभ के साथ सम्मुचय नहीं किया जा सकता। लेकिन, अगर बीमाकृत व्यक्ति उसी अवधि के दौरान इनमें से कोई हितलाभ प्राप्त कर रहा हो, तो वह अपनी इच्छानुसार उस हितलाभ को चुनने के लिए स्वतंत्र होगा जिसे वह प्राप्त करना चाहता है।

(ग) चिकित्सकीय देखरेख– बेरोजगारी भत्ता का हकदार व्यक्ति कर्मचारी राज्य बीमा अस्पताल, औषधालय या क्लीनिक में चिकित्सकीय देखरेख का भी हकदार होता है।

हितलाभों से संबद्ध सामान्य उपबंध

1. हितलाभों का सम्मुचय नहीं किया जाना– कोई भी बीमाकृत व्यक्ति एक ही अवधि में निम्नलिखित हितलाभ साथ–साथ नहीं प्राप्त कर सकता–

1. बीमारी–हितलाभ और प्रसूति–हितलाभ, या
2. बीमारी–हितलाभ और अस्थायी अशक्तता के लिए अशक्तता–हितलाभ, या
3. प्रसूति–हितलाभ और अस्थायी अशक्तता के लिए अशक्तता–हितलाभ।

अगर कोई व्यक्ति उपर्युक्त हितलाभों में एक से अधिक हितलाभों का अधिकारी है, तो वह उनमें से केवल एक ही हितलाभ चुन सकता है। (धारा 65)

2. हितलाभों का समानुदेशन तथा कुर्की से मुक्त होना– अधिनियम के अधीन उपलब्ध होने वाले किसी भी भुगतान के अधिकार को हस्तांतरित या समानुदेशित नहीं किया जा सकता। अधिनियम के अंतर्गत देय किसी भी नकद हितलाभ की किसी भी न्यायालय की डिक्री या आदेश के निष्पादन में कुर्की या बिक्री नहीं की जा सकती। (धारा 60)

3. अन्य अधिनियमों के अधीन हितलाभ प्राप्त करने का वर्जन– अगर कोई व्यक्ति इस अधिनियम के अधीन उपलब्ध हितलाभों का अधिकारी है, तो वह अन्य अधिनियमों के अंतर्गत उन प्रकार के हितलाभों का अधिकारी नहीं हो सकता। (धारा 61)

4. अशक्तता–हितलाभ का रूपान्तरण नहीं होना– किसी भी व्यक्ति को विनियमों के अंतर्गत निर्दिष्ट तरीकों को छोड़कर अन्य प्रकार से अशक्तता–हितलाभ को एकमुश्त राशि में रूपांतरित करने का अधिकार प्राप्त नही है। (धारा 62)

5. कुछ मामलों में व्यक्तियों का हितलाभ पाने का अधिकार नहीं होना – विनियमों के प्रावधानों में निर्दिष्ट तरीकों को छोड़कर कोई भी व्यक्ति अन्य प्रकार से बीमारी–हितलाभ या अशक्तता–हितलाभ उस दिन प्राप्त करने का अधिकारी नहीं होता जिस दिन उसने मजदूरी पर काम किया हो या छुट्टी या अवकाश पर रहने पर भी उसे मजदूरी मिली हो या वह उस दिन हड़ताल पर हो। (धारा 63)

6. अनुचित रूप से प्राप्त हितलाभ का प्रतिसंदाव– अगर किसी व्यक्ति ने इस अधिनियम के अंतर्गत कोई भी हितलाभ या भुगतान प्राप्त कर लिया हो जिसका वह विधिक रूप से अधिकारी नहीं है, तो उसे निगम को हितलाभ के मूल्य या उसकी राशि का प्रतिसंदाय करना आवश्यक है। मृत्यु की स्थिति में इसे मृत व्यक्ति की आस्तियों से उसके प्रतिनिधि से वसूल किया जा सकता है। नकद भुगतानों को छोड़कर अन्य हितलाभों के मूल्य का निर्धारण विनियमों द्वारा निर्दिष्ट प्राधिकारी करेगा। हितलाभ के प्रतिसंदाय की राशि को भू–राजस्व के बकाए की तरह वसूल किया जा सकता है। (धारा 70)

7. हितलाभ मृत्यु के दिन तक देय – अगर किसी व्यक्ति की मृत्यु किसी ऐसी अवधि में हो जाती है जिसके लिए अधिनियम के अंतर्गत कोई नकद हितलाभ देय है, तो उस हितलाभ की राशि को (जो मृत्यु के दिन तक देय होती है) मृत व्यक्ति द्वारा लिखित रूप से नाम–निर्देशित व्यक्ति को दिया जाएगा। जहाँ हितलाभ का भुगतान मृत व्यक्ति के वारिस या विधिक प्रतिनिधि को किया जाएगा। (धारा 71)

8. नियोजक द्वारा मजदूरी आदि का क्रम नहीं किया जाना– इस अधिनियम के अंतर्गत अंशदान देने के दायित्व ही के कारण कोई भी नियोजक प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसी भी कर्मचारी की मजदूरी कम नहीं कर सकता। वह विनियमों द्वारा निर्दिष्ट तरीके को छोड़कर अन्य प्रकार से किसी कर्मचारी की सेवा की शर्तो के अंतर्गत उपलब्ध ऐसे हितलाभों के भुगतान को न तो बंद और न ही कम कर सकता है, जो इस अधिनियम के अधीन उपलब्ध हितलाभों के समान हो। (धारा 72)

9. नियोजक द्वारा बीमारी आदि की अवधि में कर्मचारी को पदच्युल या दंडित नहीं किया जाना – कोई भी नियोजक उस अवधि में किसी कर्मचारी को पदच्युत, सेवोन्मुक्त या अन्य प्रकार से दंडित नहीं कर सकता, जिस अवधि में उसे बीमारी–हितलाभ या प्रसूति–हितलाभ प्राप्त हो रहा हो। इसी तरह, कोई भी नियोजक, विनियमों द्वारा निर्दिष्ट तरीकों को छोड़कर अन्य किसी प्रकार, किसी कर्मचारी को उस अवधि में पदच्युत, सेवोन्मुक्त, अवनत या अन्य प्रकार से दंडित नहीं कर सकता, जिस अवधि में उसे अस्थायी अशक्तता के लिए अशक्तता–हितलाभ मिल रहा हो या जिसमें वह चिकित्सकीय उपचार में हो या जिस अवधि में वह गर्भावस्था या प्रसवावस्था के चलते

होने वाली बीमारी के कारण कार्य से अनुपस्थित हो। इस तरह की पदच्युति, सेवोन्मुक्ति या अवनति से संबद्ध कर्मचारी को दी जाने वाली कोई भी नोटिस अवैध और प्रभावहीन होगी। (धारा 73)

कर्मचारी राज्य बीमा निधि

अधिनियम के अंतर्गत भुगतान किए गए सभी अंशदानों तथा निगम द्वारा प्राप्त की जाने वाली सभी राशियों को कर्मचारी राज्य बीमा निधि में जमा करना आवश्यक है। निधि का प्रशासन कर्मचारी राज्य बीमा निगम द्वारा होता है। निगम को केन्द्र एवं राज्य सरकारों, स्थानीय प्राधिकारों, व्यक्तियों तथा अन्य निकायों से अनुदान तथा दान लेने का अधिकार है। निधि के लेखा का संचालन निगम की स्वीकृति से स्थायी समिति द्वारा अधिकृत अधिकारियों द्वारा होता है। निधि से व्यय की जाने वाली मदों में निम्नलिखित सम्मिलित है–

1. हितलाभों का भुगतान तथा बीमाकृत व्यक्तियों के लिए चिकित्सकीय उपचार तथा देखभाल की व्यवस्था;
2. निगम, स्थायी समिति, चिकित्सा–हितलाभ परिसद, क्षेत्रीय बोर्डो, स्थानीय समितियों तथा क्षेत्रीय एवं स्थानीय चिकित्सा–हितलाभ परिषदों के सदस्यों को फीस और भत्तों का भुगतान;
3. निगम के अधिकारियों तथा कार्मिकों को वेतन, छुट्टी और कार्यग्रहण के लिए भत्तों, यात्रा–भत्तों, उपादानों, पेंशन, भविष्य–निधि तथा अन्य हितलाभ–निधियों के लिए अंशदानों आदि का भुगतान;
4. अस्पतालों, दवाखानों तथा अन्य संस्थाओं की स्थापना तथा चिकित्सकीय एवं अन्य सहायक सेवाओं की व्यवस्था;
5. बीमाकृत कर्मचारियों और उनके परिवार के सदस्यों को उपलब्ध कराए गए चिकित्सकीय उपचार तथा देखभाल पर किए गए खर्च के लिए राज्य सरकारी, स्थानीय प्राधिकारियों, निजी निकायों या व्यक्तियों को भुगतान;
6. निगम के लेखा की जांच तथा उनकी आस्तियों एवं दायित्वों के मूल्यांकन पर होने वाले खर्च का भुगतान;
7. कर्मचारी राज्य बीमा न्यायालयों पर होने वाले व्यय का वहन;
8. नियम के विरूद्ध न्यायालय या अधिकरण द्वारा किए गए आदेश या अधिनियम के अधीन रकमों का भुगतान;
9. अधिनियम के अधीन दीवानों या फौजदारी कार्यवाहियों पर होने वाले व्यय का वहन;
10. बीमाकृत व्यक्तियों के स्वास्थ्य एवं कल्याण, अशक्त एवं दुर्घटनाग्रस्त कर्मचारियों के पुनर्वासन तथा पुनर्नियोजन पर होने वाले व्यय का वहन; तथा

11. केन्द्रीय सरकार की पूर्वस्वीकृति से निगम द्वारा अधिकृत अन्य प्रयोजन। (धारा 26–28)

12.5 कर्मचारी भविष्य–निधि एवं प्रकीर्ण प्रावधान अधिनियम, 1952

अधिनियम का नाम, विस्तार, उद्देश्य तथा लागू होना

औद्योगिक विकास के साथ ही कुछ नियोजकों ने अपने कर्मकारों के कल्याण के लिए भविष्य निधि स्कीम लागू किये। लेकिन ऐसी योजनाएं शुद्ध रूप से प्राइवेट और ऐच्छिक थीं। छोटे उद्योगों में कार्यरत मजदूर इस लाभ से वंचित थे। इससे असन्तोष और ईर्ष्या होना स्वाभाविक था। ऐसी योजना के सम्पादन की खोजबीन करने के लिए ''लेबर इन्वेस्टीगेशन कमिटी'' गठित की गई। 11 फरवरी, 1948 में एक प्राइवेट बिल संविधान सभा में पेश की गई ताकि नियोजक प्रतिष्ठानों के कुछ वर्गो को नियोजक भविष्य निधि प्रदान करें। केन्द्रीय श्रम मंत्री के आश्वासन पर कि सरकार महसूस करती है कि ऐसा विधेयक लाया जाए जिससे औद्योगिक प्रतिष्ठानों समेत वाणिज्यिक अन्डरटेकिंग के कर्मकार ऐसी योजना का लाभ पा सके। इसके लिए व्यापक विधेयक लाया जाएगा। इस पर प्राइवेट विधेयक वापस ले लिया गया। 5 नवम्बर, 1951 को भारत सरकार ने 'इम्प्लाइज प्राविडेन्ट फन्ड्स आर्डीनेन्स' जारी किया जिस पर स्टैन्डिग लेवर कमिटी ने विचार–विमर्श कर लिया था। इसका स्थान लोक सभा में पेश बिल ने लिया। संसद के दोनों सदनों से पारित होने के बाद 4 मार्च, 1952 को राष्ट्रपति की मन्जूरी मिलने पर इसने अधिनियम का रूप ग्रहण कर लिया।

परिभाषाएँ

समुचित सरकार – 'समुचित सरकार' से अभिप्राय है (1) केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण में या उससे सम्पृक्त प्रतिष्ठान या महापतन खान या तेल क्षेत्र या नियन्त्रित उद्योग (या एक से अधिक राज्यों में विभाग या शाखायें रखने वाले उद्योग) या संस्थान के निमित केन्द्रीय सरकार, और (2) दूसरे स्थापनों के निमित राज्य सरकार ही समुचित सरकार मानी जाएगी।

प्राधिकृत अधिकारी – से तात्पर्य केन्द्रीय भविष्य निधि आयुक्त, अतिरिक्त केन्द्रीय भविष्य निधि आयुक्त, उपभविष्य निधि आयुक्त, क्षेत्रीय आयुक्त अथवा केन्द्रीय सरकार द्वारा शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा अधिकृत किए जाने वाले अधिकारी से है।

मूल मजदूरी – ये अभिप्राय सभी उपलब्धियां से है, जिसे कि कर्मकार ने अवकाश या कार्यवाही में नियोजन के अनुबन्ध की सभी शर्तो के अनुसार अर्जित किया है। मेसर्स ब्रिज एण्ड रूपस क0 बनाम ऑफ इण्डिया के मामले में निर्धारित किया गया कि इसमें प्रोडक्शन बोनस सम्मिलित करने का केन्द्रीय सरकार का निर्णय सही नहीं था। पक्षकारों के बीच हुए करार के फलस्वरूप देय विशेष भत्ता मजदूरी नहीं ह। स्पेशल एलाउन्स मूल मजदूरी का भाग है।

लेकिन इसमें निम्नलिखित सम्मिलित नही हैं –

1. किसी खाद्यान्न रियायत का उचित मूल्य
2. नियोजक द्वारा की गई भेंटे या उपहार
3. कोई मंहगाई भत्ता (अर्थात् ऐसे समस्त भुगतान चाहे उनको कोई भी नाम दिया जाय, जो किसी कर्मकार को निर्वाह व्यय में वृद्धि के कारण देय हो) मकान–भाड़ा भत्ता, अधिक समय भत्ता, अधिक समय भत्ता, बोनस कमीशन या ऐसा ही कोई अन्य भत्ता जो कर्मचारी को उसके नियोजक की बावत देय हो, या ऐसे नियोजन में किए गए काम के सम्बन्ध में देय हो।

अंशदान से अभिप्राय ऐसे अंशदान से है जो किसी परियोजना के अन्तर्गत किसी सदस्य की बावत देय है या किसी ऐसे कर्मचारी के बारे में देय है जिस पर जीवन बीमा योजना लागू होती है।

नियन्त्रित उद्योग से मतलब उस उद्योग से है जिसका संघ सरकार द्वारा नियन्त्रण केन्द्रीय अधिनियम द्वारा लोक हित में अभीष्ट होना घोषित किया जा चुका है।

नियोजक से तात्पर्य –

1. किसी प्रतिष्ठान के निमित जो एक कारखाना है, इसका स्वामी या अधिभोगी (दखलकार) से है और इसमें ऐसे स्वामी या दखलकार का अभिकर्ता मृत स्वामी या मृत अधिभोगी का विधिक प्रतिनिधि भी शामिल है और जहाँ कोई व्यक्ति कारखाना अधिनियम, 1948 की उपधारा (7) (1) क्रिया–कलाप के अधीन कारखाने के प्रबन्धक के रूप में नामित किया गया है वहां ऐसा नामित व्यक्ति आता है, तथा
2. किसी अन्य स्थापन के सम्बन्ध में वह व्यक्ति या वह प्राधिकारी जिसका स्थापन के क्रिया–कलाप पर अन्तिम नियन्त्रण है और जहां कथित क्रिया–कलाप किसी प्रबन्धक, प्रबन्ध निदेशक या प्रबन्ध–अभिकर्ता को सौपे गये है; वहां ऐसा प्रबन्धक, प्रबन्ध–संचालक या प्रबन्ध अभिकर्ता/सिविल प्रोसीजर कोड के आर्डर 40 के प्रावधानों के अन्तर्गत किसी आस्थान के लिए नियुक्त रिसीवर नियोजक माना जायेगा, यदि उसका प्रतिष्ठान तथा उसके विद्यमान कर्मचारी–वृन्द पर नियन्त्रण रहता है क्योंकि उसकी चल और अचल सम्पत्ति पर उसका कब्जा होता है। पी0एफ0 के अंशदान की मांग उससे की जा सकती है।

कर्मकार – कर्मकार से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है, जो शारीरिक या अन्य काम करने के लिये किसी भी स्थापन में मजदूरी पर नियोजित है और जो प्रत्यक्षतः या परोक्ष रूप से नियोजक से अपनी मजदूरी पाता है और इसमें वह व्यक्ति भी शामिल समझा जायेगा; जो उस स्थापन के काम में या काम के सम्बन्ध में किसी ठेकेदार द्वारा या उसके माध्यम से नियोजित हो।

छूट प्राप्त कर्मचारी से ऐसा कर्मचारी अभिप्रेत है जिस पर कोई योजना या बीमा योजना लागू होती है, यदि धारा 11 के अन्तर्गत प्राप्त छूट न मिली होती।

छूट प्राप्त अधिष्ठान से तात्पर्य है कोई अभिष्ठान जिसके निमित धारा 17 के अन्तर्गत किसी परियोजना के समस्त या किन्हीं उपबन्धों के लागू होने से छूट प्रदान की गई है, चाहे ऐसी छूट स्थापन को या उसमें कार्यरत व्यक्तियों के वर्ग को दी गई है।

कारखाना से अभिप्राय अपनी परिसीमाओं सहित किसी ऐसे परिसर से है, किसी भी उद्योगालय से हे, जिसमें उसके निकटतम भाग की सम्मिलित है जिसके किसी भाग में चाहे विद्युत–शक्ति की सहायता से या बिना उसके अभिनिर्माण प्रक्रिया की जा रही है या सामान्यतया इस तरह की जाती है। कारखाने में यहाँ बीड़ी बनाने वालों का निवास स्थान भी सम्मिलित समझा जायेगा, क्योंकि उनका बीड़ी बनाने का काम फैक्टरी में इसी प्रकार काम किए जाने का एक अभिन्न अंग है और वे बनी बीड़ियां बीड़ी निर्माता फैक्टरी में लाते है, जहाँ उन्हें दिये जाने वाले कच्चे माल का रजिस्टर होता है, प्रबन्धकीय प्रशासनिक स्टाफ रहता है। उनमें भी 'मास्टर और सर्वेन्ट' का सम्बन्ध होता है।

निधि फण्ड – निधि से अभिप्राय किसी योजना के अन्तर्गत स्थापित निधि से है। सन् 1976 Deposit Linked Insurance Fund में इसमें जोड़ दिया गया।

परिवार पेंशन योजना – से तात्पर्य धारा 6क के अधीन इम्प्लाइज फैमिली पेंशन स्कीम से है।

परिवार पेंशन निधि – परिवार पेंशन योजना के अन्तर्गत स्थापित परिवार पेंशन फण्ड से है।

बीमा विधि – से अभिप्राय डिपाजिट लिंक्ड इन्श्योरेन्स फण्ड से है जिसकी स्थापना धारा 6 (ग) की उपधारा (2) में की गई है।

बीमा योजना – ये तात्पर्य धारा 6 (ग) की उपधारा (1) के अन्तर्गत निर्मित इम्प्लाइज डिपोजिट लिंक्ड इन्श्योरेंस स्कीम से है।

उद्योग – उद्योग से अभिप्राय प्रथम अधिसूची में निदिष्ट किसी उद्योग से है और उसमें धारा 4 के अधीन अधिसूचना द्वारा अनुसूची में जोड़ा गया संलग्न काई अन्य उद्योग भी सम्मिलित है।

अभिनिर्माण या अभिनिर्माण प्रक्रम से तात्पर्य किसी वस्तु या पदार्थ का प्रयोग, बिक्री, परिदान या व्ययन की दृष्टि से उसका निर्माण, परिवर्तन, अलंकरण, निहन, धुलाई, उन्मूलन, विघटन या अन्यथा अभिक्रियान्वयन या अनुकूलन करने के लिए किसी प्रक्रिया से है। मरम्मत करने, आभूषित करने, फिनिशिंग, फैकिंग, आइलिंग, धोने, सफाई करने, तोड़ने, विनष्ट करने आदि में बरतने के लिये कोई प्रक्रम।

सदस्य – सदस्य से अभिप्राय फण्ड के सदस्य से है।

कारखाने के अधिभोगी (कब्जेदार) से तात्पर्य उस व्यक्ति से है जिसका कारखाने पर अन्तिम नियन्त्रण होता है और जहां कथित मामले किसी प्रबन्ध–अभिकर्ता को सौंप दिये गए हैं, वहां ऐसा प्रबन्ध–अभिकर्ता उस कारखाने का अधिभोगी समझा जायेगा।

प्रतिष्ठान – जहां किसी प्रतिष्ठान के विभिन्न विचार है या उसकी शाखाएं हैं, चाहे उसी स्थान पर स्थित है या भिन्न–भिन्न स्थान पर ऐसी सभी शाखाएं या विभाग उसी प्रतिष्ठान के अंग माने जाएंगें।

नियोजक का दायित्व, शास्तियाँ एवं प्रक्रिया

ऐसे व्यापक एवं प्रभावशाली प्रावधान बनाये गए हैं, जिनसे नियोजक नियमोल्लंघन या अधिनियम के सिद्धान्त के विपरीत कोई अपराध करके शास्त्रियों से मुक्त न रह सके। निम्न ढंग से नियोजक दायित्वाधीन होगा –

1. जब वह समयानुसार भविष्य अंशनिधि को विहित ढंग से जमा नहीं करता है तो इसके लिए 1 वर्ष तक का कारावास तााि 10000 रुपये से कम का जुर्माना नहीं होगा।
2. जब नियोजक चालू महीने बीतने के बाद फण्ड जमा करने में जान–बूझकर अधिक विलम्ब करता है। फण्ड की रकम नकद, चेक या ड्राफ्ट में भी जमा की जा सकती है। यदि उद्योग किये जाने वाले स्थान पर रिजर्व बैंक या स्टेट बैंक या उनकी शाखा नहीं, तो अन्य बैंक में फण्ड सम्बन्धी राशि नहीं जमा होगी। उसे उक्त बैंक में से किसी एक में ही किया जाना अनिवार्य होगा। बैंकों के राष्ट्रीयकरण के प्रकाश में क्या अब उक्त बैंक में से किसी एक में ही किया जाना अनिवार्य होगा। बैंकों के राष्ट्रीयकरण के प्रकाश में क्या अब अन्य बैंकों में भी यह राशि जमा की जा सकेगी, इसके विषय में अभी कोई स्पष्टीकरण नहीं प्राप्त हुआ है।
3. जब नियोजक किसी रकम को अदत्त रखता है, जो विधिक रूप में देय हो या की गई हो। शोध्य राशि का निर्णय सेन्ट्रल प्राविडेन्ट फण्ड कमिश्नर या डिप्टी कमिश्नर फण्ड या कोई रीजनल प्राविडेन्ट फण्ड कमिश्नर करने की क्षमता रखता है। नियोजक से शोध्य रकम सरकार द्वारा वैसे ही वसूल की जायेगी, जैसे भू–राजस्व। देय राशि को अदत्त रखने पर नियोजक जिम्मेदार होगा।
4. नियोजक के धारा 11 के उपबन्धों के प्रतिकूल कार्य करने पर उसे दण्ड का भागी बनाया जायेगा। सभी ऋणों के भुगतान का प्रश्न उठने पर फण्ड के लिए योगदान को प्राथमिकता दी जायेगी। यदि नियोजक कर्मकारी के और अपने योगदान को जमा न करके अन्य ऋणों का भुगतान करता है, तो क्या उसे दण्ड का भागी बनाया जाना न्यायोचित न होगा ?
5. कोई भी नियोजक, जब फण्ड के लिए योगदान की राशि को कर्मकारों की मजदूरी से कटौती करेगा, वह उत्तरदायी होगा। प्रत्यक्ष रूप से किसी भी प्रकार नियोजक अपने आर्थिक भार को नियोजिती वर्ग पर नहीं लाद सकता, उसे अपने कर्त्तव्य का निर्वाह तो करना ही पड़ेगा। अपने हिस्से के किये जाने वाले योगदान

को वह कर्मचारियों को मजदूरी से नहीं काट सकता। कटौती करने पर उसे दोषसिद्ध किया जायेगा। (धारा 12)

6. निरीक्षकों के आदेश का पालन न करने पर नियोजक दण्डित किया जायगा। जब उससे रजिस्टर, अभिलेख–रिकार्ड या अन्य आवश्यक कागजात निरीक्षण के लिए मांगे जाते हैं, जब उससे आदेशानुसार कार्य करने की अपेक्षा की जाती है। चूंकि, निरीक्षक लोकसेवक माने जाते हैं, इसलिये उनकी अवमानना या अवैधानिक ढंग से उनके कार्य में व्यवधान डालना दण्डनीय होगा।
7. जब नियोजक अपने यहां नियोजित कर्मकार के स्थापन में काम छोड़कर अन्यत्र चले जाने पर उसके फण्ड को हस्तान्तरित नहीं करता। जैसा कि नियमतः उसे धारा 17 (अ) अनुसार कर देना चाहिये।

भविष्य निधि पर ब्याज भी देय होता है – समय–समय पर ब्याज की दरों में परिवर्तन होता रहता है। पहले यह दर 12½% थी लेकिन कोई नतीजा न निकल सका। वाम दल भी 10 प्रतिशत से कम पर राजी नहीं रहे। अन्ततोगत्वा सरकार ने कर्मचारी भविष्य निधि के केन्द्रीय बोर्ड की सिफारिश पर 4 करोड़ से अधिक ग्राहकों को 2006–07 के दौरान उनकी जमाराशि पर 8.5 प्रतिशत ब्याज देने की अधिसूचना 20 अक्टूबर, 2007 को केन्द्र सरकार ने जारी कर दी। सभी क्षेत्रीय निधि आयुक्तों को इस फैसले पर अमल सुनिश्चित और सम्बन्धित वर्ष का वार्षिक लेखा बयान भी तैयार करने और बताने का निर्देश दे दिया गया है।

अंश जमा न करना आर्थिक अपराध और गैर जमानती अपराध होगा

शास्तियों और प्रक्रियाओं का उल्लेख धारा 14 (अ), 14 (ब) तथा धारा 8 में किया गया है। उनके उपबन्धों के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि दण्ड विधान –

1. नियोजकों के लिए तथा
2. निगमित निकायों या विधिक व्यक्तियों जैसे कम्पनी, मिल्स और कारखाने के लिए लागू होगा।

धारा 14 में उपबन्धित है कि समुचित रूप से कर्त्तव्यों के निर्वाह न करने पर किस प्रकार से शास्ति का प्रयोग किया जायेगा। उसके अनुसार जो कोई भी अपने द्वारा अदायगी किये जाने की बात को टालने के प्रयोजन से या इस अधिनियम या स्कीम के अधीन किसी अन्य व्यक्ति को भुगतान न करने के योग्य बनाता है, या जान बूझकर कोई मिथ्या–विवरण या अभ्यावेदन प्रस्तुत करता है, या ऐसा कराने का या किये जाने का कारण बनता है, तो उसे एक वर्ष तक का कारावास या 5000 रुपये तक का जुर्माना या दोनों प्रकार का दण्ड दिया जा सकता है।

धारा 14 क ख स्पष्ट करती है कि क्रिमिनल प्रोसीजर कोड, 1973, में अन्तर्निहित किसी बात के होते हुए भी नियोजक द्वारा अंशदान की भुगतान में त्रुटि से सम्बन्धित अपराध, जो इस अधिनियम के अधीन दण्डनीय है, संज्ञेय होगा।

कम्पनियों द्वारा अपराध

नियोजकों को दण्डित करने के विधान के साथ ही कम्पनी–जैसे निगमित निकायों को भी दोषभागी बनाने तथा दण्ड देने की व्यवस्था धारा 14 (क) में की गई है। यदि इस अधिनियम या स्कीम या बीमा स्कीम के अधीन अपराध करने वाला व्यक्ति कम्पनी हो तो प्रत्येक जो उस उल्लंघन के समय उस कम्पनी के कारबार के संचालन के लिए उस कम्पनी का भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी था और साथ ही वह कम्पनी भी ऐसे अपराध के दोषी समझे जाएंगे तथा तदनुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दण्डित होने के भागी होंगे।

अधिनियम के अन्तर्गत प्राधिकारीगण

अधिनियम के अन्तर्गत मुख्य रूप से सेन्ट्रल बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज, स्टेट बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज, कमिश्नर्स और निरीक्षक–जैसे प्राधिकारियों का उल्लेख तथा निरीक्षकों के सम्बन्ध में अध्याय 7 में विस्तार में उनकी नियुक्ति, अधिकार एवं कर्त्तव्य पर विचार किया गया है। सबसे उच्च अधिकार वाला सेन्ट्रल बोर्ड ही होता है। स्टेट बोर्ड का नम्बर दूसरा है।

सेन्ट्रल बोर्ड की स्थापना, सदस्य–संख्या और कार्य [धारा 5(क)] इसमें निम्नलिखित व्यक्ति सदस्य होंगे –

अ) केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त एक अध्यक्ष एवं एक उपाध्यक्ष। अध्यक्ष बोर्ड का सर्वोच्च अधिकारी होगा और उसकी अध्यक्षता और सर्वेक्षण में सारे कार्य–कलाप सम्पन्न होंगे। उसकी संख्या सदैव एक रहेगी। वह पूर्ण रूप से स्वतन्त्र व्यक्ति होगा।

ब) पांच से अनधिक ऐसे व्यक्ति होंगे जो केन्द्रीय सरकार द्वारा अपने अधिकारियों में से नियुक्त किए जाएंगे।

स) केन्द्रीय भविष्य निधि आयुक्त पदेन।

द) 15 से अनधिक ऐसे व्यक्ति, जिनकी नियुक्ति केन्द्रीय सरकार द्वारा की जायेगी और वे ऐसे राज्यों का प्रतिनिधित्व करेंगे जैसा कि सरकार विनिर्दिष्ट करें।

ध) ऐसे स्थापनों के नियोजकों के प्रतिनिधित्व करने वाले दस व्यक्ति, जहां कि यह परियोजना लागू है, जिनकी नियुक्ति केन्द्रीय सरकार नियोजकों के ऐसे संगठनों के परामर्श से करेगी जैसा केन्द्रीय सरकार इस प्रयोजन से मान्यता प्रदान करे।

केन्द्रीय बोर्ड को निर्देश देने की शक्ति – धारा 20 के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार समय–समय पर केन्द्रीय बोर्ड को ऐसा निर्देश दे सकती है जो वह इस अधिनियम के उचित प्रबन्ध के लिए आवश्यक समझे। ऐसे निर्देश दिये जाने पर केन्द्रीय बोर्ड ऐसे निर्देशों के अनुसार कार्य करेगा। केन्द्रीय बोर्ड अपने आय और व्यय के हिसाब को उचित एवं निर्धारित तरीके एवं प्रयोग में रखेगा जो भारत के नियन्त्रक एवं महालेखापरीक्षक द्वारा अंकेक्षित किये जाएंगे। वे आय–व्यय सम्बन्धी पुस्तकें, विलों,

दस्तावेजों, कागजातों को मांगने एवं प्रस्तुत करवाने और केन्द्रीय बोर्ड के कार्यालय का निरीक्षण भी कर सकेंगे। केन्द्रीय बोर्ड का कर्त्तव्य होगा कि वह अपने कार्य–कलापों की वार्षिक रिपोर्ट, प्रतिवेदन केन्द्रीय सरकार को प्रस्तुत करे और सरकार उसकी एक प्रति अंकेक्षित खाते, और उसके साथ ही महालेखा परीक्षक एवं नियन्त्रक की रिपोर्ट केन्द्रीय बोर्ड की टिप्पणी के साथ संसद के प्रत्येक सदन में प्रस्तुत करेगी।

स्टेट बोर्ड

1. केन्द्रीय परिषद के समान ही केन्द्रीय सरकार को सदस्यों की नियुक्ति एवं स्टेट बोर्ड का गठन निर्दिष्ट करने की शक्ति प्रदान की गई है। धारा 5 (ख) के अनुसार केन्द्रीय सरकार किसी भी राज–सरकार से परामर्श लेने के पश्चात् शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा उस राज्य के लिए स्टेट बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज का गठन ऐसे ढंग से कर सकती है जैसा कि स्कीम में उपबन्धन किया जाये।
2. कोई भी स्टेट–बोर्ड ऐसे अधिकारों का प्रयोग करेगा और ऐसे कर्त्तव्यों की अनुपालना करेगा जो समय–समय पर केन्द्रीय सरकार उसे सुपुर्द करे।
3. वे शर्ते और दशाएं जिनके अधीन स्टेट–बोर्ड के सदस्यों की नियुक्ति होगी और उसकी मीटिंग का स्थान, समय और प्रक्रिया वह होगी जो योजना में उपबन्धित की जाये। अन्य बात के विषय में भी स्कीम में प्रावधान बनाया जा सकता है।

न्यासी बोर्ड का निगमित निकाय होना – धारा 5(ग) में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि धारा 5(क) और 5(ख) के अन्तर्गत गठित बोर्ड, इसे गठित करने वाली अधिसूचना में निर्दिष्ट नाम से एक निगमित निकास होगा, जिसका शाश्वत उत्तराधिकार और एक कामन सील होगी। उक्त नाम से वह वाद प्रस्तुत कर सकेगा और उसके विरुद्ध वाद संस्थित किया जा सकेगा।

सेन्ट्रल बोर्ड तथा स्टेट–बोर्ड की देख–रेख में निधि का प्रशासन होगा। उसमें सहायता प्रदान करने के प्रयोजन से भिन्न–भिन्न अधिकारियों की नियुक्ति की जायेगी, जिसका उल्लेख यहां पर कर देना समीचीन होगा।

कार्यकारिणी समिति – धारा 5(क) क के अन्तर्गत कार्यकारिणी समिति के गठन सम्बन्धी उपबन्ध प्रस्तुत किए गए है : जो निम्न प्रकार से है –

केन्द्रीय सरकार शासकीय राजपत्र में अधिसूचना जारी कर कार्यकारी समिति के गठन व उसके कार्य प्रारम्भ करने की तिथि का प्रकाशन करेगी। इसका गठन निम्न प्रकार से होगा –

1. एक अध्यक्ष जो केन्द्रीय सरकार द्वारा केन्द्रीय बोर्ड के सदस्यों में से नियुक्त किया जाएगा,
2. दो व्यक्ति जो केन्द्रीय सरकार द्वारा धारा 5(1) के अधीन नियुक्त किये जाएंगे,
3. नियोजकों का प्रतिनिधित्व करने वाले तीन व्यक्ति,

4. कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व करने वाले तीन व्यक्ति,
5. भविष्य निधि आयुक्त पदेन।

अधिकारियों की नियुक्ति – (1) अधिनियम की धारा 5 (ख) में केन्द्रीय सरकार को कतिपय अधिकारियों की नियुक्ति सम्बन्धी शक्तियां प्रदान की गई है जो निम्नवत हैं– केन्द्रीय सरकार धारा 5 (द) के अनुसार एक सेन्ट्रल–प्राविडेन्ट फण्ड कमिश्नर की नियुक्ति करेगी, जो केन्द्रीय बोर्ड का मुख्य कार्यकारी अधिकारी होगा। लेकिन आयुक्त उस बोर्ड के सामान्य नियन्त्रण और अधीक्षण के अधीन ही अपना कार्य करेगा। स्मरणीय है कि बोर्ड का सर्वोच्च प्रशासकीय–अधिकारी उसका अध्यक्ष होगा और अध्यक्ष तथा आयुक्त दोनों एक–दूसरे से भिन्न होते हैं। पहले का मुख्य कार्य कार्यपालिकीय होता है, जब कि दूसरे का प्रशासनिक।

1. केन्द्रीय सरकार भविष्य निधि आयुक्त को उसके कर्त्तव्यों के निर्वहन में सहायता देने के लिए एक वित्तीय सलाहकार एवं मुख्य लेखाधिकारी नियुक्त कर सकेगी।
2. केन्द्रीय सरकार उतने अतिरिक्त, आयुक्त, उपायुक्त, निदेशक, रीजनल प्राविडेन्ट फण्ड कमिश्नर्स और ऐसे अन्य अधिकारियों जिन्हें वह योजना में निर्दिष्ट किए अनुसार कुछ परिवार पेंशन योजना और बीमा योजना के कुशल प्रशासन के लिए आवश्यक समझे, नियुक्त कर सकेगा।
3. कार्य का आबंटन कार्य–पद्धति को सरल बना देता है और कार्य आसानी से सम्पन्न किया जा सकता है। इसी बात को ध्यान में रखकर सेन्ट्रल प्राविडेण्ट फण्ड कमिश्नर के सहायतार्थ अन्य सहायक अधिकारियों की नियुक्ति केन्द्रीय सरकार द्वारा की जाती है जो सेन्ट्रल प्राविडेन्ट फण्ड कमिश्नर के अधीन और अधीक्षण में कार्य करेंगे।
4. केन्द्रीय सरकार उक्त अधिकारियों की नियुक्ति करते समय केन्द्रीय लोक सेवा आयोग से परामर्श लेकर ही कोई घोषणा करेगी। परन्तु निम्न नियुक्तियों के लिए ऐसा परामर्श लेना आवश्यक नहीं होगा –
   (अ) एक वर्ष से अनधिक कार्यवाही के लिए, या
   (ब) यदि नियुक्ति किये जाने के समय वह व्यक्ति –
      1. इण्डियन ऐडमिनिस्ट्रेटिव सर्विस का सदस्य है; या
      2. केन्द्रीय सरकार की सेवा में है, या राज्य–सरकार के अधीन सेवारत है या सेन्ट्रल बोर्ड प्रथम या द्वितीय वर्ग का है।
5. सम्बन्धित राज्य सरकार का अनुमोदन लेकर स्टेट–बोर्ड ऐसे स्टाफ की नियुक्ति कर सकता है, जिन्हें वह आवश्यक समझे।
6. सेन्ट्रल प्राविडेन्ट फण्ड कमिश्नर, अतिरिक्त डिप्टी फण्ड कमिश्नर और रीजनल प्राविडेन्ट फण्ड कमिश्नर की नियुक्ति करने का ढंग, वेतन एवं भत्ते, अनुशासन

तथा अन्य सेवा की शर्ते ऐसी होंगी, जैसाकि केन्द्रीय सरकार विनिर्दिष्ट करे और इस प्रकार का वेतन भत्ता फण्ड से प्रदेय होगा।

7. केन्द्रीय बोर्ड के अन्य प्राधिकारियों एवं कर्मचारियों की नियुक्ति की पद्धति, वेतन तथा भत्ते, अनुशासन तथा सेवा की अन्य शर्ते वैसी ही होगी, जैसा कि सेन्ट्रल बोर्ड केन्द्रीय सरकार के अनुमोदन से निर्दिष्ट करें।
8. अतिरिक्त केन्द्रीय भविष्य निधि आयुक्त, उपायुक्त, प्रादेशिक सहायक आयुक्त केन्द्रीय बोर्ड के अन्य अधिकारियों एवं कर्मचारियों की भर्ती की पद्धति, उनके वेतन और भत्ते, अनुशासन तथा सेवा की अन्य शर्ते वे होगी जो केन्द्रीय बोर्ड द्वारा उन नियमों और आदेशों को ध्यान में रखते हुए जो केन्द्रीय सरकार के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के आधारित वेतनमान के लिए उपयोग में लिए जाते रहे हों।
9. राज्य बोर्ड के अधिकारियों एवं कर्मचारियों की भर्ती की पद्धति, वेतन और भत्ते अनुशासन और सेवा की अन्य शर्ते वे होंगी जो सम्बद्ध राज्य सरकार के अनुमोदन में वह बोर्ड निर्दिष्ट करे।

केन्द्रीय बोर्ड या उसकी कार्यकारिणी समिति राज्य बोर्ड की कार्यवाही कुछ आधारों पर अवैध नहीं मानी जाएगी – केन्द्रीय बोर्ड या कार्यकारिणी समिति या राज्य बोर्ड द्वारा की गई या किया गया कोई कार्य या कार्यवाही रिक्तता की स्थिति के आधार पर एकमात्र आधार प्रश्नगत होता है या केन्द्रीय बोर्ड या कार्यकारिणी समिति या राज्य बोर्ड के गठन में किसी त्रुटि के आधार पर प्रश्नास्पद नहीं बनाया जा सकता। (धारा 5 डी0 डी0)

प्रत्यायोजन – धारा 5(ड.) में सेन्ट्रल बोर्ड, केन्द्रीय सरकार तथा स्टेट बोर्ड सम्बन्धित राज्य सरकार से पूर्वानुमोदन लेकर अपने अध्यक्ष को या किसी भी अधिकारी की ऐसी शर्तो और परिसीमाओं के अधीन, यदि कोई हो, जैसा कि वह यह निर्दिष्ट करे, अपने ऐसे अधिकारों या कर्त्तव्यों का प्रत्यायोजन कर सकेगा, जैसा कि वह योजना के कुशल प्रशासन के लिए आवश्यक समझे।

कर्मचारी भविष्य निधि अपीलीय अधिकरण – ऐसे ट्रिब्यूनल की अधिकारिता कार्य आदि के लिए जोड़ी गई नई धाराएं 7 डी0 से 7 क्यू0 तक में प्रावधान किया गया है।

1. केन्द्रीय सरकार आफीशियल गजट में विज्ञप्ति द्वारा ऐसे एक या अनेक अधिकरण का गठन कर सकेगी जो इस अधिनियम द्वारा अधिकरण को प्रदत्त अधिकारों का प्रयोग करेंगे तथा कर्त्तव्यों का निर्वहन करेंगे। ऐसे अधिकरण की अधिकारिता क्षेत्र, तथा उसमें आने वाले प्रतिष्ठानों का उल्लेख नोटीफिकेशन में किया जाएगा।
2. अधिकरण में केन्द्र सरकार द्वारा केवल एक व्यक्ति ही नियुक्त किया जायगा।
3. कोई भी व्यक्ति अधिकरण के पीठासीन अधिकारी पद के लिए अर्ह नहीं होगा।

अ) जब तक वह हाईकोर्ट का जज नहीं रह चुका है, या है या नियुक्ति के लिए अर्ह है।

ब) या डिस्ट्रिक्ट जज नहीं रहा है, या है या नियुक्ति के लिए अर्ह है।

कार्यकाल – पद धारण की तिथि से 5 वर्ष या 62 वर्ष आयु जो भी पहले हो।

पद–त्याग (7एफ0) – अधिकरण का पीठासीन अधिकारी लिखित हस्ताक्षरित नोटिस केन्द्र सरकार को सम्बोधित करके पद–त्याग कर सकता है। केन्द्र सरकार द्वारा मुक्त न होने तक वह काम करता रहेगा, कम से कम नोटिस प्राप्ति के तीन महीने तक या जब तक सम्यक रूप से नियुक्त उसका उत्तराधिकारी नहीं आ जाता या उसका कार्यकाल समाप्त नहीं हो जाता जो भी पहले हो।

अधिकांश का स्टाफ (7H) – केन्द्र सरकार अधिकरण को उसके काम में सहायता के लिए इतनी संख्या में अधिकारी और कर्मचारी नियुक्त करेगी जैसा वह उचित समझे। जो पीठासीन अधिकारी के सामान्य अधीक्षण में अपना कार्य सम्पन्न करेगें। उनकी सेवा शर्ते, वेतन, भत्ते आदि वही होंगे जो निर्धारित हों।

ट्रिव्यूनल में अपील (71) कोई भी उपस्थित व्यक्ति निम्न आदेश या नोटीफिकेशन के विरुद्ध अपील कर सकता है –

1. किसी प्रतिष्ठान में अधिनियम लागू करने की राजपत्र में जारी अधिसूचना,
2. प्रथम अनुसूची में समाविष्ट करने वाले मदों की अधिसूचना,
3. नियोजक से शोध्य राशि के निर्धारण का आदेश,
4. रिब्यू के लिए आदेश, इस्केप्ड एमाउन्ट या निर्धारण सम्बन्धी आदेश, नियोजक से क्षतिपूर्ति वसूलने सम्बन्धित आदेश –

अपील विहित शुल्क प्रारूप और समय के अनुरूप की जाएगी।

अधिकरण की प्रक्रिया– अपने बैठने के स्थान, अपनी शक्तियों के प्रयोग और कर्त्तव्यों के निर्वाह से उद्भूत सभी मामलों को विनियमित करने का उसे अधिक होगा।

विधि व्यवसायी की सहायता – अपीलकर्ता अधिकरण के समक्ष स्वतः या अपने अधिवक्ता के माध्यम से उपसंजात हो सकता है, जो उसके च्वायस का होगा। केन्द्र या राज्य सरकार अधिकरण के समक्ष सरकार की ओर से पैरवी करने के लिए अधिवक्ता नियुक्त कर सकेगी।

अधिकरण का आदेश – पक्षकारों को सुनवाई का अवसर प्रदान करने के बाद अधिकरण ऐसा आदेश पारित कर सकेगा जैसा वह उचित समझे। वह उस आदेश को जिसके विरुद्ध अपील की गई है, अनुमोदित, संशोधित या निरस्त कर सकता है या उचित निर्देश देकर पुनः विचारण के लिए वापस भेज सकता है और नये साक्ष्य लेने को कह सकता है। अपने द्वारा पारित आदेश को अधिकरण पांच वर्ष के भीतर रिकार्ड पर दृश्य गलती को सुधार या अपील के पक्षकार द्वारा ध्यान आकृष्ट किये जाने पर संशोधन

कर सकता है। यदि संशोधन नियोजक के दायित्व को या शोध्य राशि को बढ़ाने वाला है तो नियोजक को सुनवाई का अवसर अवश्य दिया जाएगा।

अधिकरण अपने आदेश की सत्य प्रतिलिपि अपील के पक्षकारों को भेजेगा। अधिकरण द्वारा अन्तिम रूप से निस्तारित आदेश को किसी न्यायालय में प्रश्नास्पद नहीं बनाया जा सकेगा।

रिक्त स्थानों की पूर्ति– यदि किसी कारण से पीठासीन अधिकारी का स्थान रिक्त होता है तो उसे भरने के लिए सरकार अधिनियम के प्रावधान के अनुसार नियुक्ति करेगी और प्रक्रिया वहां से प्रारम्भ होगी जब स्थान भरा गया।

आदेश की अन्तिमता– पीठासीन अधिकारी की नियुक्ति तथा अधिकरण का कोई कार्य या प्रक्रिया को उसके गठन में किसी दोष के आधार पर प्रश्नास्पद नही किया जा सकेगा।

अपील करने पर शोध राशि का जमा करना– अधिकरण अपील तभी ग्रहण करेगा जब धारा 7 क में निर्धारित शोध्य राशि का 75 प्रतिशत जमा कर दिया गया है। कारण बताते हुए अभिकरण जमा की जाने वाली को कम या मुक्त कर सकता है।

कुछ आवेदनों का अधिकरण को सौंपा जाना– धारा 19 क में केन्द्र सरकार के समक्ष लम्बित आवेदन अधिकरण के पास अन्तरित कर दिए जाएगें मानो वे अपीलें हों।

नियोजक द्वारा देय ब्याज – नियोजक धनराशि के शोध्य हो जाने तथा वास्तविक भुगतान के बीच की अवधि के लिए 12 प्रतिशत या अधिक ब्याज देगा।

अधिनियम के अन्तर्गत सरकार के अधिकार

धारा 21 केन्द्रीय सरकार को नियम बनाने की शक्ति प्रदान करती है।

1. सरकार का प्रथम अधिकार किसी भी स्थापन में अधिनियम को लागू करने की राजपत्र में अधिसूचना जारी करके घोषित करना है। लेकिन उससे प्रभावित होने वाले नियोजकों या प्रतिष्ठानों को कम से कम दो मास पूर्व–सूचना देना आवश्यक है।
2. सरकार अधिनियम को वहाँ भी लागू करने का अधिकार रखती है जहाँ नियोजक और उसके अधीन बहुसंख्यक कर्मकार एक समझौता करके इसके लागू करने के लिए सरकार के पास आवेदन प्रस्तुत करते है, चाहे भले भी वहाँ काम करने वालों की संख्या 20 से कम ही हो।
3. सरकार को सामान्य प्राविडेण्ट फण्ड रखने वाले प्रतिष्ठानों में यह अधिनियम लागू करने का अधिकार है, जिसका प्रयोग वह शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा कर सकता है, जैसा कि धारा 3 में उपबन्धित है।
4. उपर्युक्त रीति से केन्द्रीय सरकार प्रथम अनुसूची में अन्य मामलों को समाविष्ट करने का निर्देश दे सकती है, जिसकी बावत प्राविडेण्ट फण्ड स्कीम लागू की जा

सकेगी। अनुसूची में अन्य उद्योगों को इस अधिनियम की परिधि में लाने का एकमात्र अधिकार केन्द्रीय सरकार को ही प्राप्त है।

5. धारा 5 के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार को कर्मकार भविष्य–अंशनिधि योजना विनिर्मित करने का अधिकार है। योजना की योजना उसी के आदेश और निर्देश के अनुसार ही कार्यान्वित की जायेगी।

6. सेन्ट्रल बोर्ड एवं स्टेट बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज के गठन का अधिकार भी केन्द्रीय सरकार को प्राप्त है। इतना ही नहीं, जितने भी आवश्यक संख्या में सदस्य होगें, उन सभी की नियुक्ति केन्द्रीय सरकार ही करेगी। उसके उच्च कार्यपालकीय अधिकारियें की नियुक्ति केन्द्रीय लोक सेवा आयोग के परामर्श से की जायेगी। राज्य सरकार से मन्त्रणा लेकर केन्द्रीय सरकार उस राज्य के लिए स्टेट ऑफ ट्रस्टीज की स्थापना कर सकती है।

7. फण्ड के कार्य सफल संचालन के उद्देश्य से केन्द्रीय सरकार सेन्ट्रल फण्ड कमिश्नर, डिप्टी प्राविडेण्ट फण्ड कमिश्नर तथा रीजनल प्राविडेण्ट फण्ड कमिश्नर की नियुक्ति तथा उनके वेतन, मंहगाई–भत्ते, सेवा–दशाओं के सम्बन्ध में नियम बना सकती है।

8. केन्द्रीय सरकार कर्मकारों द्वारा फण्ड में योगदान की दर में वृद्धि करने का अधिकार रखती है।

9. शासकीय पर अधिसूचना द्वारा केन्द्रीय सरकार योजना को रूपभेदित करने के अधिकार का प्रयोग कर सकती है। (धारा 7)

10. नियोजक से शोध्य रकम को सरकार (केन्द्र या राज्य) भू–राजस्व की भांति वसूल कर सकती है।

11. निरीक्षकों की नियुक्ति करने का अधिकार समुचित सरकार को प्राप्त है। धारा 13 में यह बात स्पष्ट है कि समुचित सरकार ऐसी संख्या में निरीक्षकों की नियुक्ति कर सकती है, जैसा कि वह उचित और आवश्यक समझे।

12. धारा 14 (ब) में समुचित सरकार को जिससे दोनों, केन्द्रीय तथा राज्य सरकारें अभित्रेत है, नियोजक से क्षतिपूर्ति वसूल करने का अधिकार प्राप्त है। यह क्षतिपूर्ति बकाया रकम की 25 प्रतिशत के बराबर हो सकती है।

13. अधिनियम के सभी या कुछ प्रावधानों से किसी उद्योग या प्रतिष्ठान वर्ग को धारा 16(2) के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार ही छूट दे सकती है।

14. **शक्ति के प्रत्यायोजन का अधिकार–** समुचित सरकार यह निर्देश दे सकती है कि अधिनियम या अन्य किसी स्कीम के अन्तर्गत जिस क्षेत्राधिकार या शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है वह ऐसे मामलों के विषय में और ऐसी दशाओं के अधीन, यदि कोई हो जैसा कि निर्देश में निर्दिष्ट किया जाय, अन्य प्राधिकारियों

द्वारा भी प्रयुक्त की जा सकती है। लेकिन इस विषय में दोनों सरकारों के प्रत्यायोजन की शक्ति अपने–अपने क्षेत्राधिकार तक ही सीमित है, अर्थात् –

यदि समुचित सरकार केन्द्रीय सरकार है, तो उस शक्ति के प्रयोग का अधिकार ऐसे अधिकारी या ऑफीसर को प्रदान किया जायेगा, जो उसके अधीन हो। राज्य–सरकारें भी अपने अधीन प्राधिकारियों को शक्ति का प्रत्यायोजन करने में सर्वथा सक्षम है।

15. **कठिनाइयाँ दूर करने की शक्ति (धारा 22)–** यदि इस अधिनियम के उपबन्धों के समुचित ढंग से संचालन करने में कोई कठिनाई विशेष रूप से जब कोई शंका निम्नलिखित के बारे में उत्पन्न होती है कि–
    1. क्या कोई प्रतिष्ठान, जो कारखाना है, प्रथम अनुसूची में निर्दिष्ट उद्योग में कार्यरत है, या
    2. क्या कोई प्रतिष्ठान–विशेष ऐसे प्रतिष्ठान–वर्ग के अन्तर्गत आता है, जहाँ कि अधिनियम की धारा 1 की उपधारा (3) के खण्ड (ब) के अनुसार अधिसूचना लागू होती है; या
    3. किसी प्रतिष्ठान में नियोजित व्यक्ति की संख्या; या
    4. किसी प्रतिष्ठान के स्थापित होने पर कितने साल व्यतीत हो गये हैं; या
    5. क्या नियोजक द्वारा प्राप्त लाभ की कुछ मात्रा कम कर दी गई है, जिस पाने का अधिकार था।
16. **भविष्य–निधि एकाउण्ट मेन्टेन करने के लिए कुछ नियोजकों को अधिकृत करना (धारा 19)–** नई धारा 16 (भविष्य–निधि एकाउन्ट मेन्टेन करने के लिए कुछ नियोजकों को अधिकृत करना) सरकार को अधिकार प्रदान करती है कि यदि ऐसे प्रतिष्ठान के जिसमें एक सौ या अधिक कर्मकार नियोजित है नियोजक और बहुसंख्यक कर्मकार आवेदनपत्र देते हैं तो सरकार लिखित आदेश द्वारा प्रतिष्ठान से सम्बन्धित भविष्य निधि एकाउन्ट मेन्टेन करने के लिए अधिकृत कर सकती है। उन शर्तो तथा निबन्धनों के अधीन जो स्कीम में स्पेसीफाइड हो।
17. **भविष्य निधि के अधिक लाभ अर्जित करने का सरकार का अधिकार है –** कोष में से कुछ राशि को अन्य क्षेत्रों में लगाकर कोष की वृद्धि करना सरकार के अधीन है। वर्तमान कोष की 80 हजार करोड़ रुपये के 15 प्रतिशत राशि को शेयर बाजार और म्युचुअल फंडों में निवेश की अनुमति सरकार ने दे दी है। लेकिन इ0 पी0 एफ0 ट्रस्टी बोर्ड के सदस्य इस पर एकमत नहीं है।

अधिनियम के अन्तर्गत कर्मकारों को प्राप्त अधिकार एवं लाभ

प्राविडेन्ट फण्ड ऐक्ट जो प्रारम्भ में केवल छः उद्योगों सीमेन्ट, सिगरेट, विद्युत यान्त्रिक, सामान्य इन्जीनियरिंग के उत्पाद, लोहे–इस्पात, कागज तथा वस्त्र उद्योग में लागू होने का उद्देश्य ही कर्मकारों को निधि–सम्बन्धी लाभ पहुंचाना है। अब इसका

व्यापक विस्तार हो गया है। इसके अतिरिक्त उसमें उल्लिखित अन्य लाभों का भी उपभोग नियोजित कर सकता है –

1. **प्राविडेन्ट फन्ड से दोहरा लाभ** – कर्मकार अपने अंशदान की जितनी राशि कटवाता है, उतनी ही राशि उसके नाम वाले फण्ड के खाते में नियोजक भी जमा करेगा। अतः उसका ठीक दोगुना उसे भविष्य में प्राप्त होगा। इस प्रकार अधिनियम के अन्तर्गत कर्मकार को दोहरा लाभ प्राप्त है।
2. **फण्ड सदैव सभी प्रकार की विधिक कार्यवाहियों से अग्रप्रभावित रहेगा**– धारा 10 में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि न्यायालय के आदेश के तहत कोई धनराशि निम्न भांति कुर्क नहीं की जा सकती है– किसी सदस्य के नाम भविष्य निधि में या किसी छूट–प्राप्त कर्मकार के नाम भविष्य निधि में वह राशि जो जमा है किसी प्रकार से समनुदिष्ट की जमा रकम किसी प्रकार अन्तरित या भारित किये जाने के योग्य न होगी और उस सदस्य या छूट–प्राप्त कर्मकार द्वारा उपगत ऋण या दायित्व के सम्बन्ध में किसी न्यायालय की डिग्री या आदेश के अधीन कुर्की के लिए बाध्य नहीं की जा सकेगी।
3. **अंशदान के भुगतान को अन्य ऋणों पर प्राथमिकता**– धारा 11 अंशदान के भुगतान को प्राथमिकता प्रदान करती है। उसके अनुसार जहाँ कोई नियोजक दिवालिया हो गया है या यदि कम्पनी है और उसके समापन का आदेश दिया जा चुका है, तो देय रकम जो –
    1. किसी स्थापन के सम्बन्ध में, जिसमें योजना लागू होती है, किसी योगदान की बाबत जो कि निधि में देय है, हर्जाने के निमित जिसका धारा 15 (2) के अन्तर्गत जमा राशि का हस्तान्तरण अपेक्षित है या ऐसे आभारों के सम्बन्ध में जो इस अधिनियम के किसी दूसरे उपबन्ध के अधीन उस नियोजक के द्वारा देय है, नियोजक से प्राप्त है, या
    2. छूट प्राप्त प्रतिष्ठान की बाबत किसी भविष्य अंश–निधि के योगदान के निमित नियोजक के प्राविडेन्ट फण्ड के नियमों के अधीन धारा 14 (ब) के अन्तर्गत निर्दिष्ट किसी शर्त के अधीन समुचित सरकार को प्रभार के रूप में नियोजक द्वारा देय हो; ऐसी रकमें अन्य ऋणों की अपेक्षा भुगतान में प्राथमिकता रखेंगी, जहाँ तक दिवालिया के सामानों के वितरण या कम्पनी के समापन के समय उसकी आस्तियाँ, जैसा भी हो, के वितरण का सम्बन्ध होता है।
4. **नियोजक द्वारा वेतन की कटौती न किये जाने का लाभ** – धारा 12 के अनुसार किसी भी स्थापन या उद्योग का कोई भी नियोजक, जहाँ कि योजना लागू होती है, केवल फण्ड में अंशदान देने या इस अधिनियम या स्कीम के अन्तर्गत किसी

प्रभार संदाय करने के अपने दायित्व के कारण ही योजना में अपने हिस्से के दिये जाने वाले अंशदान की राशि प्रत्यक्षतः या परोक्षतः नही काटेगा।

5. **नियोजक द्वारा की गई त्रुटियों के विरुद्ध लाभ** – नियोजक की त्रुटियों और अपराधों की ओर कर्मकार सम्बन्धित निरीक्षक का ध्यान आकृष्ट कर सकते हैं और तब वह उचित कार्यवाही करेगा।
6. **अपने एकाउन्ट के हस्तान्तरण का भी कर्मकारों को लाभ** – धारा 17 (अ) के अनुसार नियोजक का यह परम कर्तव्य होता है कि वह उस कर्मकार के अर्जित फण्ड की राशि को वहां हस्तान्तरित कर दें, जहाँ वह पूर्व नियोजक को छोड़कर दूसरे स्थान पर नियोजन पा गया है। कर्मकार इस अधिनियम के लाभ से केवल स्थान या उद्योग या स्थापन–परिवर्तन के आधार पर वंचित नहीं किया जा सकता। फण्ड का ट्रान्सफर केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्दिष्ट अवधि में ही कर दिया जायेगा। निम्न शर्तो का होना आवश्यक है कि –
    1. कर्मकार एक नियोजन का परित्याग करता है।
    2. एक नियोजन को छोड़कर दूसरे स्थान पर काम पा गया है।
    3. परिव्यक्त नियोजन और पुनर्प्राप्त नियोजन दोनों स्थानों पर फण्ड–स्कीम लागू है।
    4. कर्मकार का संचित दण्ड पूर्व नियोजक के पास रह गया है और भुगतान नहीं हुआ है।
    5. कर्मकार अपने फण्ड के अन्तरण की इच्छा प्रकट करता है।
    6. दूसरे नियोजन का भविष्य अंश निधि सम्बन्धी नियम ट्रान्सफर की अनुज्ञा देते हों।
    7. दूसरे नये नियोजक के स्थान पर भी उनके नाम में फण्ड का खाता है।
    8. ट्रान्सफर केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्दिष्ट समय में ही किया जाता है।
7. **फेमिली–पेन्शन स्कीम का लाभ** – इसके अतिरिक्त सन् 1971 से फेमिली के पेन्शन फण्ड का लाभ भी प्रत्येक कर्मकार को देने की योजना बनायी गयी है, जो 1 मार्च, 1971 से लागू हुई।
8. **डिपाजिट लिंक्ड इन्शोरेन्स स्कीम का लाभ**– 1 अगस्त, 1976 से लागू इस योजना का, जिसमें कुल 22 पैरा हैं, भी कर्मकार लाभ उठा सकते हैं, जिसे बनाने का अधिकार केन्द्रीय सरकार को लेवर प्राविडेन्ट फण्ड लाज (अमेण्डमेन्ट) ऐक्ट, 1976 के तहत प्राप्त हुआ। इसी का लाभ उठाकर सरकार ने इस योजना को धारा 6 (ग) जोड़कर क्रियान्वित किया और यह योजना वहाँ लागू की गई, जिन प्रतिष्ठानों में मुख्य अधिनियम लागू होता है। इसके लिए एक डिपाजिट लिंक्ड इन्श्योरेन्स फण्ड की स्थापना की गई। उसमें नियोजिती की ओर से

नियोजक को अंशदान करना होगा और सरकार नियोजक द्वारा देय अंशदान की राशि स्वयं जमा करेगी।

9. भविष्य अंश–निधि से कर्मकार ऋण ले सकता है और आसान किस्तों में उसको भुगतान करता रहेगा। इस निधि के खाते से धन निकालने की प्रणाली के उदारीकरण का प्रस्ताव विचाराधीन है।
10. **भविष्य निधि को आयकर के प्रयोजन हेतु मान्यता** – अधिनियम की धारा 9 के अनुसार भारतीय आयकर अधिनियम, 1922 के प्रयोजनों के लिए यह समझा जायेगा कि निधि उस अधिनियम के अध्याय 9–क के प्रयोजन हेतु मान्यता प्राप्त भविष्य निधि है किन्तु उक्त अध्याय की कोई भी बात इस प्रकार प्रभावशील नहीं होगी कि वह उस योजना के जिसके अधीन विधि स्थापित की गई है किसी ऐसे उपबन्ध को जो इस अध्याय के या उसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबन्धों में से किसी के विरुद्ध हो, प्रभावहीन बना दे।

स्थापन के अन्तरण की स्थिति में दायित्व – जहाँ स्थापन के सम्बन्ध में कोई नियोजक विक्रय, दान या अनुज्ञापन द्वारा या किसी भी अन्य रीति से उस स्थापन का पूर्णतः या अंशतः अन्तरण कर देता है, वहाँ नियोजक और वह व्यक्ति, जिसे इस प्रकार स्थापन अन्तरित किया गया है, ऐसे अन्तरण की तिथि तक नियोजक द्वारा इस अधिनियम योजना, या परिवार पेंशन या बीमा योजना के किसी उपबन्ध के अधीन देय अंशदान और अन्य राशियों का भुगतान करने के लिए सम्मिलित रूप से और पृथकतः उत्तरदायी होंगे परन्तु अन्तरिती का दायित्व उसके द्वारा ऐसे अन्तरण से अभिप्राप्त प्राप्तियों के मूल्य तक ही सीमित होगी।

निरीक्षक

निरीक्षकों की नियुक्ति – समुचित सरकार द्वारा निरीक्षकों की नियुक्ति की घोषणा शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा की जाएगी। उनकी संख्या कितनी होगी, यह संरकार के विवेकाधीन है। ऐसे व्यक्तियों को जिन्हें वह उचित समझती है, इस अधिनियम, योजना परिवार पेंशन या बीमा योजना के प्रयोजन के लिए निरीक्षक नियुक्त कर सकेगी और उनकी अधिकारिता सुनिश्चित कर सकेगी। कार्य की अधिकता को देखते हुए सरकार आवश्यकतानुसार यथेष्ट संख्या में निरीक्षकों की नियुक्ति और उसके साथ ही उनके क्षेत्राधिकार को भी विनिर्दिष्ट करेगी, जिससे कि तद्विषयक कोई पारस्परिक मतभेद न उत्पन्न हो और निरीक्षक अपने–अपने क्षेत्राधिकार से भली–भांति परिचित रहें और अपना कार्य संभाल लें।

संहिता द्वारा विहित विधि के अनुसार कुछ औपचारिकताओं को निरीक्षक पूरा करेगा जैसे –

1. परिसर में जाने के पहले अधिकारियों तथा तलाशी के साक्षियों की तलाशी। यह एक परम्परा है ताकि यह सन्देह न रहे कि तलाशी लेने वाला दल ऐसी कोई

चीज साल ले जाकर चुपके से निकाल कर दिखा सके कि यह चीज परिसर में प्राप्त हुई है।

2. तलाशी किये जाने वाले परिसर में स्थानीय न्यूनतम दो संप्रान्त व्यक्तियों को बुलाना और उन्हें तलाशी का साथी बनाना।
3. तैयार की जाने वाली सूची पर उनका हस्ताक्षर करना।
4. तलाशी लिए जाने वाले स्थान के स्वामी या उसके द्वारा अधिकृत व्यक्ति को तलाशी के समय साथ में रहने देना।
5. तैयार की गई सूची की हस्ताक्षरित प्रतिलिपि परिसर–स्वामी को देना। यदि तलाशी ली जाने वाली महिला है, तो उसकी तलाशी दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 12 के अनुसार की जानी चाहिये।

यदि कोई व्यक्ति इस अधिनियम योजना के अधीन नियुक्त किए गए किसी निरीक्षक को, उसके कर्त्तव्यों के निर्वहन में बाधा पहुंचाता है, या निरीक्षक द्वारा निरीक्षण के लिए कोई अभिलेख प्रस्तुत करने में असफल रहता है तो उसे 6 मास तक का कारावास या 1000 रुपये तक का जुर्माना या दोनों से दण्डित किया जा सकेगा।

निरीक्षक : लोक–सेवक – धारा 13 (3) से यह स्पष्ट है कि प्रत्येक निरीक्षक भारतीय दण्ड संहिता की धारा 21 के अर्थ में लोक–सेवक समझा जायगा। अनावश्यक ढंग से उसकी कार्यवाही में व्यवधान डालने वाला व्यक्ति दण्ड का भागी होगा।

इसके अतिरिक्त धारा 18 में उन्हें कुछ अन्य प्रकार का भी विशेषाधिकार प्राप्त है। उससे अधिनियम या परियोजना के अन्तर्गत निरीक्षक या अन्य व्यक्ति द्वारा सद्भाव में किये गये किसी भी कार्य के लिए कोई कार्यवाही नही की जायेगी। अपनी पदीय प्रास्थिति में किये गये कार्यो के लिए निरीक्षक दायित्वाधीन नहीं होगा।

ठेका श्रम विनियमन अधिनियम 1970

ठेकाश्रम के विनियमन हेतु ठेकाश्रम विनियमन और उत्सादन अधिनियम, 1970 में पारित किया गया जो 10 फरवरी, 1970 से प्रभावी हुआ। इसका उद्देश्य ठेके पर काम करने वाले श्रमिकों को शोषण से बचाना है। श्रमिकों के स्वास्थ्य और कल्याण हेतु समुचित व्यवस्था सुनिश्चित कराना अधिनियम का उद्देश्य है। बीस या बीस से अधिक कर्मकार जिस प्रतिष्ठान में कार्यरत हैं या थे उन पर यह अधिनियम लागू होगा। लेकिन समुचित सरकार चाहे तो इसे कम कार्यरत कर्मकारों वाले प्रतिष्ठान में भी शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा लागू कर सकती है। आन्तरायिक या आकस्मिक प्रकृति के स्थापनों पर यह लागू नहीं होगा। इस सम्बन्ध में सरकार का निश्चय अन्तिम होगा। यह अधिनियम सार्वजनिक निजी नियोजकों तथा सरकार पर लागू होता है। इसे असंवैधानिक नहीं माना गया यद्यपि कि यह ठेकेदारों पर कतिपय निर्बन्धन और दायित्व अधिरोपित करता है। स्थापन में कार्य/परिणाम सम्पन्न कराने के लिए श्रमिकों को उपलब्ध कराने वाला ठेकेदार (उपठेकेदार समेत) तथा उनके माध्यम से काम करने के

लिए उपलब्ध व्यक्ति ठेका श्रमिक कहलाता है उसे भाड़े पर रखा जाता है। स्थापन का यहाँ व्यापक अर्थ है जहाँ अभिनिर्माण प्रक्रिया सम्पन्न की जाती है। प्रधान नियोजक धारा 1 उपधारा (छ) में परिभाषित है, नाम निर्दिष्ट इससे अभिप्रेत है। केन्द्रीय सरकार केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड (ठेकाश्रम) गठित करती है। इसमें एक अध्यक्ष, मुख्य श्रम आयुक्त, केन्द्रीय सरकार, रेल खान आदि के कम से कम 11 या अधिकतम 17 प्रतिनिधि होंगे। कर्मकारों के हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्यों की संख्या प्रधान नियोजकों के प्रतिनिधियों से कम नहीं होगी। इसकी सलाह मानने के लिए सरकार बाध्य नहीं होगी।

ओंकार प्रसाद वर्मा बनाम मध्य प्रदेश राज्य के निर्णय मं उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि इस प्रश्न पर विचार करने का कि संविदा श्रम उत्सादित कर दिया अथवा नहीं एकान्तिक अधिकार समुचित राज्य सरकार के क्षेत्र में आता है, वह धारा 10 में उल्लिखित प्रक्रिया इसके लिए अपना सकेगी। ऐसे प्रश्न का निर्धारण न तो श्रम न्यायालय, न ही रिट कोर्ट ही कर सकेगी। लेकिन जहाँ यह बात उठाई गई है कि ठेकेदार और प्रबन्ध के द्वारा (बीच) की गई संविदा दिखावटी है तो स्टील एथारिटी ऑफ इण्डिया लि0, के आलोके में औद्योगिक एडजुडीकेटर कथित विवाद को निर्धारित करने का हकदार होगा। ठेकाश्रम समाप्त करने का सरकार का प्रशासनिक अधिकार है। लेकिन उत्सादन हेतु खूब सोच–समझकर नोटीफिकेशन जारी करना चाहिए। उल्लेखनीय है कि इस अधिनियम से सम्बन्धित किसी मामले पर एकान्तिक क्षमाधिकारिता समुचित सरकार की होती है। न तो श्रम न्यायालय ने ही रिट कोर्ट कथित उत्सादन के प्रश्न को निर्धारित/निर्णीत कर सकती है।

राज्य सरकार राज्य स्तर पर सलाह देने के लिए राज्य सलाहकार (ठेकाश्रम) बोर्ड गठित करेगी इन दोनों के सदस्यों की पदावधि, सेवा की अन्य शर्ते, अपनाई जाने वाली प्रक्रिया तथा रिक्त स्थानों के भरने की रीति ऐसी होगी जो निर्धारित की जाये। वे बोर्ड समितियां गठित करने की शक्ति रखते हैं। धारा 6 के अनुसार सरकार अपने राजपत्रित अधिकारों को ठेकाश्रम पर नियोजित करने वाले स्थापनों के पूंजीकरण करने के लिए नियुक्त करेगी और उनके क्षेत्राधिकार की सीमा भी निश्चित कर देगी। निर्धारित अवधि में आवेदन देने पर तथा सारी शर्तो के पूरा रहने पर पंजीकरणकर्ता पंजीकरण करके प्रमाणपत्र जारी करेगा जो लाइसेन्सिंग का काम करेगा। पर्याप्त कारणों से सन्तुष्ट होने पर विलम्ब से प्रस्तुत किये गये आवेदन पर अधिकारी विचार कर सकेगा। अनुचित ढंग से प्राप्त किये गये पंजीकरण का प्रधान नियोजक सुनवाई का अवसर प्रदान करके तथा सरकार के पूर्व अनुमोदन से प्रतिसंहरण भी किया जा सकेगा। धारा 9 के अनुसार पंजीकरण रह होने पर ठेका श्रमिकों को नियोजित नहीं किया जायेगा। धारा 10 के अन्तर्गत समुचित सरकार ठेका श्रमिकों के नियोजन पर प्रतिषेध लगा सकेगी।

समुचित सरकार धारा 11 के अन्तर्गत अनुज्ञापन अधिकारियों की यथेष्ठ संख्या में उनकी सीमाओं को निर्धारित करते हुए नियुक्ति करेगी। बिना लाइसेन्स लिए ठेकाश्रम

के माध्यम से कार्य नहीं कराया जायेगा। सेवा शर्तो जेसे काम के घण्टों आदि, तथा निर्धारित सिक्योरिटी राशि जमा करने के बारे में सरकार नियम बनायेगी। उसका प्रधान नियोजक को अनुपालन करना होगा। अनुज्ञापन अधिकारी समय पर अनुज्ञापन की धारा 13 के अधीन निर्धारित फीस देने पर नवीनीकरण कर सकेगा। अनुज्ञप्ति के दुर्व्यपदेशन, महत्वपूर्ण तथ्यों के गोपन, नियमोल्लंघन से प्राप्त किये जाने की दशा में उसका प्रतिसंहरण, निलम्बन तथा संशोधन भी किया जा सकेगा। धारा 15 के अधीन किसी आदेश से व्यथित हुआ व्यक्ति 30 दिन के भीतर सरकार द्वारा नाम निर्देशित व्यक्ति अपील अधिकारी के यहां अपील कर सकेगा।

धारा 16 में सरकार ठेका श्रमिकों के कल्याण तथा स्वास्थ्य के लिए जलपान गृहों की व्याख्या के लिए नियोजकों को आदेश देगी। खाद्य पदार्थो का विवरण तथा मूल्य आदि के बारे में दिशा निर्देश देगी। धारा 18 के अन्तर्गत विश्राम कक्षों तथा रात में रुकने के लिए स्वच्छ आरामदेह प्रकाशयुक्त आनुकल्पिक आवासों की व्यवस्था करने का नियोजक का दायित्व होगा। इसके अलावा स्वास्थ्यप्रद पेय जल की आपूर्ति, पर्याप्त संख्या में शौचालय, मूत्रालय, धुलाई की सुविधाएं उपलब्ध कराना होगा। इसके अलावा स्वास्थ्यप्रद पेय जल की आपूर्ति, पर्याप्त संख्या में शौचालय, मूत्रालय, धुलाई की सुविधाएं उपलब्ध कराना होगा। धारा 20 के अनुसार फर्स्ट एड फैसिलिटीज की व्यवस्था होगी। इन सुविधाओं के लिए प्रधान नियोजक उपगत व्ययों का प्रधान नियोजक ठेकेदार से वसूल कर सकता है। धारा 21 के अनुसार मजदूरी का भुगतान ठेकेदारों पर होता। इसमें ओवर टाइम वेज भी सम्मिलित होगी। कम भुगतान करने पर प्रधान नियोजक शेष राशि का भुगतान करके ठेकेदार से वसूल करने का हकदार होगा। इण्डियन एयर लाइन्स बनाम केन्द्रीय सरकार श्रम न्यायालय, के निर्णयानुसार ठेका श्रमिक मजदूरी न पाने की दशा में मुख्य नियोजक से मजदूरी मांग सकते हैं।

धारा 22 में दण्ड की व्यवस्था की गई है। जो कोई निरीक्षक के कार्य में बाधा पहुंचायेगा या निरीक्षण हेतु रजिस्टर देने से इन्कार करेगा वह तीन माह के कारावास या पांच सौ रुपये जुर्माना या दोनों से दण्डित किया जा सकेगा। निर्बन्धनों, अनुज्ञप्ति की शर्तो का उल्लंघन करने वाला नियोजक तीन माह के कारावास तथा एक हजार रुपये जुर्माना या दोनों से दण्डित होगा। प्रथम उल्लंघन के दोषसिद्ध होने पर उसके जारी रहने पर एक सौ रुपये प्रतिदिन के लिए धारा 23 के अन्तर्गत दण्ड दिया जा सकेगा। उल्लंघन सिद्ध करने का भार शिकायतकर्ता पर होगा। कम्पनी के मामले में धारा 25 के अन्तर्गत कम्पनी का भारसाधक तथा उसके प्रति उत्तरदायी व्यक्ति दण्डित किया जा सकेगा। इसमें निदेशक, प्रबन्धक, प्रबन्ध अभिकर्ता, आदि आते हैं। प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेट या फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट से अवर कोई भी न्यायालय दण्डनीय अपराधों का संज्ञान या विचारण नहीं करेगा। अपराध किये जाने की तिथि से निरीक्षक द्वारा या उसकी लिखित पूर्व स्वीकृति प्राप्त करने वाले व्यक्ति द्वारा परिवाद 90 दिन के भीतर दाखिल किये जाने

पर विचारण किया जायेगा अन्यथा नहीं। निरीक्षकों की जांच आदि करने, लोक अधिकारी की सहायता लेने, किसी व्यक्ति से परीक्षा करने, कार्य बांटने वाले का नाम, पता जानने रजिस्टर आदि को जब्त करने या उनकी प्रतिलिपियां लेने का अधिकार होगा।

रजिस्टरों या अन्य अभिलेखों को बनाये रखने का दायित्व धारा 29 के अन्तर्गत प्रधान नियोजक का होगा जिनमें मजदूरी भुगतान आदि की प्रविष्टियां और अन्य वांछित जानकारियां आदि दी गई होती है। धारा 30 अधिनियम से असंगत विधियों और करारों के प्रभाव पर प्रकाश डालती है। अन्य विधियों में प्रदान की गई सुविधाओं से इस अधिनियम के अन्तर्गत दी जाने वाली सुविधाएं किसी भी दशा में कम नहीं होंगी। धारा 31 समुचित सरकार को अधिनियम के कुछ निर्बन्धनों से कुछ समय किसी स्थापनों या ठेकेदारों को छूट देने की शक्ति प्रदान करती है। धारा 32 पंजीकरणकर्ता अधिकारी, अनुज्ञापन अधिकारी या केन्द्रीय या राज्य बोर्ड के सदस्य या सेवक द्वारा अधिनियम के नियम के अनुसरण में सद्भावपूर्वक किये गये कार्य के लिए अभियोजन या विधिक कार्यवाही नहीं हो जायेगी। यह धारा उन्हें संरक्षण प्रदान करती है। धारा 33 केन्द्र सरकार को राज्य सरकार को निर्देश देने की तथा धारा 34 अधिनियम के उपबन्धों को प्रभावी बनाने में आने वाली कठिनाईयों को दूर करने की तथा धारा 34 नियम बनाने की शक्ति प्रदान करती है।

दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले– 'समान कार्य के लिए समान वेतन का सिद्धान्त' दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले श्रमिकों पर भी लागू होता है चाहे उनकी नियुक्ति स्थायी स्कीम में हो या अस्थायी स्कीम में, मजदूरी भुगतान में अन्तर अनुच्छेद 14 के अन्तर्गत विभेदकारी माना जायेगा। एक लम्बी अवधि के बाद ऐसे श्रमिकों को स्थायी माना जाना चाहिए।

12.6 कर्मचारी पेन्शन योजना, 1995

यह योजना 16 नवम्बर, 1995 से औद्योगिक कर्मचारियों के लिए शुरू की गई। योजना के तहत कर्मचारियों को सेवानिवृति अथवा 33 वर्ष की सेवा पूरी होने पर वेतन का 50 प्रतिशत पेंशन के रूप में देने का प्रावधान है। पेंशन के लिए कम–से–कम 10 वर्ष की सेवा जरूरी है। निधन के समय कर्मचारी के वेतन और सेवा की अवधि को ध्यान में रखते हुए इस योजना के तहत 450 रुपये प्रतिमाह से 2500 रुपये प्रतिमहा तक पारिवारिक पेंशन देने की भी व्यवस्था है। इसके अलावा दो बच्चों के लिए विधवा पेंशन की 25 प्रतिशत राशि प्रत्येक बच्चे को देने का भी प्रावधान है, लेकिन यह राशि 150 रुपये प्रत्येक बालक से कम नहीं होनी चाहिए। इस योजना के लिए धन की व्यवस्था के लिए भविष्य निधि में नियोक्ता की ओर से दी जाने वाली मासिक वेतन की 8.33 प्रतिशत राशि को पेंशन फण्ड में जमा करा दिया जाता है। इसके अलावा केन्द्र सरकार

वेतन के 1.16 प्रतिशत के बराबर योगदान करती है। 1 जून, 2001 से अधिकतम राशि 5000 रुपये से बढ़ाकर 6500 रुपये कर दी गई हैं।

12.7 सार संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में कर्मचारी क्षतिपूर्ति अधिनियम 1923 की अवधारणा,आवश्यकता एवं प्रावधानों को बताया गया है। कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 की अवधारणा,आवश्यकता एवं प्रावधानों,कर्मचारी भविष्य–निधि एवं प्रकीर्ण प्रावधान अधिनियम, 1952 की अवधारणा,आवश्यकता एवं प्रावधानों ,कर्मचारी पेन्शन योजना, 1995 की अवधारणा,आवश्यकता एवं प्रावधानों को श्रम कल्याण एवं व्यावस्थापन हेतु प्रावधान आवश्यक है।

12.8 अभ्यास प्रश्न

1.कर्मचारी क्षतिपूर्ति अधिनियम 1923 की अवधारण एवं प्रावधानों को समझाइये ?
2.कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 की आवश्यकता का वर्णन कीजिये।
3.कर्मचारी भविष्य–निधि एवं प्रकीर्ण प्रावधान अधिनियम, 1952 के प्रावधानों को समझाइये।

4. कर्मचारी पेन्शन योजना, 1995 की आवश्यकता की व्याख्या कीजिये।

12.9 पारिभाषिक शब्दावली

Legislation	विधान	Protection	संरक्षा
Authority	प्राधिकार	Criticism	आलोचना
Rules of Law	विधि के नियम	Social Justice	सामाजिक न्याय
Ordinance	अध्यादेश	Declaration	घोषणा
Instruments	लिखत	Remuneration	पारिश्रमिक
Directives	निदेशों	Welfare	कल्याण

12.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, इन्द्रजीत, श्रमिक विधियां, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, वर्ष, 2008, पेज, 404–446.
2. सक्सैना, आर0सी0, श्रम समस्यायें एवं समाज कल्याण के0 नाथ एण्ड कम्पनी मेरठ, वर्ष, 1997, पेज, 462–463.
3. पेमेन्ट ऑफ बेजेज एक्ट कानून लॉ प्रकाशित, जोधपुर, वर्ष, 2002, पेज, 1–48.